तार का पता—"सम्मेलन" प्रयाग

रजि० नं० ए० ६२८

भाग १२ अङ्क १; भाद्रपद १९८१

57
24

संपादक

**वियोगी हरि**

प्रकाशक

**हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग**

वार्षिक मूल्य ३)

प्रत्यंक ≈)

# विषय-सूची



---

# सम्मेलन-पत्रिका के नियम

१—'पत्रिका' प्रत्येक मास की पूर्णिमा को प्रकाशित हो जाती है। यदि किसी मास की कृष्णा १० तक उस मास की पत्रिका न मिले, तो पत्र द्वारा सूचना देनी चाहिए।

२—'पत्रिका' का वर्ष भाद्रपद से प्रारम्भ होता है। जो लोग भाद्रपद से लेकर फाल्गुन तक किसी मास में ग्राहक होते हैं, उन्हें भाद्रपद से, और जो चैत्र से भाद्रपद तक किसी मास में ग्राहक होते हैं, उन्हें चैत्र से 'पत्रिका' के अंक भेजे जाते हैं। डाकव्यय सहित पत्रिका का वार्षिक मूल्य २=) है। २) मनीआर्डर द्वारा भेजने से अधिक सुभीता होता है।

३—यदि दो एक मास के लिए पता बदलवाना हो तो डाकखाने से प्रबन्ध कर लेना चाहिए और यदि बहुत दिनों के लिए बदलवाना हो, तो हमें उसकी सूचना देनी चाहिए, अन्यथा 'पत्रिका' न मिलने के लिए हम उत्तरदायी न होंगे।

४—लेख, कविता, समालोचना के लिए पुस्तकें-"सम्पादक सम्मेलन पत्रिका पोस्ट बाक्स नं० ११ प्रयाग" के पते से व प्रबन्ध सम्बन्धी पत्र—"प्रचार मन्त्री हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, पोस्ट बाक्स नं० ११ प्रयाग" के पते से और पत्रिका का मूल्य विज्ञापन की छपाई आदि का द्रव्य "अर्थमंत्री, हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन पोस्ट बाक्स नं० ११ प्रयाग" के पते से आना चाहिए।

५—प्राप्त कविता और लेखों के घटाने, बढ़ाने एवं प्रकाश करने वा न करने का पूर्ण अधिकार सम्पादक को है।

## आवश्यक सूचना

६—आज से सम्मेलन द्वारा प्रकाशित पुस्तकों की बिक्री पर कमीशन की दर निम्नलिखित अनुसार होगी।

(क) १०) से नीचे की पुस्तकों पर कुछ भी कमीशन न दिया जायगा।

(ख) १०) से २५) तक की पुस्तकों पर, दो आना कमीशन दिया जायगा।

(ग) २५) से ऊपर १००) तक २०) रुपया सैकड़ा

(घ) १००) से ऊपर, २५) सैकड़ा।

(ङ) ५००) या अधिक की पुस्तकें लेने पर तृतीयांश कमीशन अर्थात् ३:।-)४ दिया जायगा।

(नोट) सम्मेलन से सिर्फ़ सम्मेलन द्वारा प्रकाशित पुस्तकें बेची जाती हैं। अतः सर्वसाधारण को चाहिए कि वे सम्मेलन से केवल सम्मेलन द्वारा प्रकाशित ही पुस्तकें मगावें। अन्य प्रकाशकों की पुस्तकें हमारे यहाँ नहीं मिलतीं।

संयोजक,

मिती चैत्र कृष्ण १०
सं० १९८०

पुस्तक-प्रकाशन-समिति
हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन,
प्रयाग।

## सुलभ-साहित्य-माला

इस माला का उद्देश्य यह है कि हिन्दी में उत्तमोत्तम ग्रन्थों के सुन्दर और सस्ते संस्करण इस ढंग से निकाले जायँ कि जिससे हिन्दी-प्रेमी इन ग्रन्थरत्नों को सुलभता से पा सकें। यह माला [illegible]ाचीन साहित्य का विशेष रूप से उद्धार करने की चेष्टा कर रही [illegible]। इसमें प्राचीन साहित्यिक, दार्शनिक, सामाजिक, राष्ट्रीय आदि उत्तमोत्तम ग्रन्थ सिद्धहस्त लेखकों को उचित पुरस्कार देकर लिखाये और प्रकाशित किये जाते हैं। अब तक इस माला में निम्नलिखित पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं—

पुस्तकें मिलने का पता—हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन,
पोस्ट बाक्स नं० ११ प्रयाग।

## १—भूषण-ग्रन्थावली (सटिप्पण)

भूषण कवि हिन्दी में वीररस के एक मात्र कवि हैं। इनकी कविता में भाव हैं, ओज है और प्राण हैं। परन्तु अधिकांश में वह इतनी क्लिष्ट है कि उसका समझना कठिन हो जाता है। इस कठिनाई को दूर करने के लिए हिन्दी के सुपरिचित विद्वान् पं० रामनरेशजी त्रिपाठी ने क्लिष्ट स्थानों पर टिप्पणी दे दी हैं और कठिन शब्दों का अर्थ लिख दिया है। कविता में सूत्र रूप से वर्णित ऐतिहासिक घटनाओं का भी यथास्थान स्पष्ट उल्लेख कर दिया गया है।

यदि भारतीय वीरता का पता चलाना हो, यदि जातीय ज्योति का प्रकाश जगमगाना हो और यदि साहित्यिक आनन्द लूटना हो, तो इस ग्रन्थावली को एक बार अवश्य पढ़ जाइए। इसमें अलङ्कार शास्त्र का अनुपम ग्रन्थ शिवराज-भूषण, शिवा-बावनी, छत्रसाल दशक तथा भूषण कवि के फुटकर कवित्तों का संग्रह किया गया है। यह ग्रन्थावली साहित्य-सम्मेलन की मध्यमा परीक्षा में भी स्वीकृत है। पृष्ठसंख्या १८४, मूल्य ॥-)

## २—हिन्दी-साहित्य का संक्षिप्त इतिहास

लेखक—श्री मिश्रबन्धु

हिन्दी भाषा और साहित्य का क्रमशः विकास कैसे हुआ, उसने कौन कौन से रूप पकड़े, किन किन बाधकों एवं साधकों का उसे सामना करना पड़ा, वर्त्तमान परिस्थिति क्या है आदि गम्भीर विषयों का पता इसी पुस्तक से भली भाँति लग जाता है। अपने ढंग की यह पहली पुस्तक है। "मिश्रबन्धु विनोद" रूपी महासागर से मथन कर यह इतिहासामृत निकाला गया है। यह भी हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की मध्यमा परीक्षा में स्वीकृत है। पृष्ठ संख्या १८८, मूल्य ।=)

**पुस्तकें मिलने का पता—हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, पोस्टबाक्स नं० ११ प्रयाग।**

## ३—भारतगीत

लेखक—पं० श्रीधर पाठक

श्रद्धेय पाठक जी की रसमयी-रचना से किस सहृदय साहित्य-रसिक का हृदय रसाप्लावित न होता होगा ? आपकी गणना वर्त्तमान हिन्दी-साहित्य के महारथियों में है। आपकी राष्ट्रीय कविता नवयुवकों में जातीय जीवन सञ्चार करनेवाली है। प्रस्तुत पुस्तक श्री पाठक जी के उन गीतों का संग्रह है जिन्हें उन्होंने समय समय पर स्वदेश-भक्ति की उमंग में आकर लिखे हैं। इसकी प्रस्तावना साहित्यमर्मज्ञ बाबू पुरुषोत्तमदासजी टंडन ने लिखी है। यह पुस्तक राष्ट्रीय विद्यालयों के बड़े काम की है। पृष्ठ संख्या ६४, मूल्य ≡)

## ४—भारतवर्ष का इतिहास

### ( प्रथम खण्ड )

ले०—श्री० मिश्रबन्धु

यह इतिहास प्राचीन और अर्वाचीन काल से सम्बन्ध रखता है। इसमें पूर्व वैदिक काल से सूत्र काल तक अथवा ६०० संवत् पूर्व से ५० संवत् पूर्व तक की घटनाओं का उल्लेख है। अब तक हिन्दी में भारतवर्ष का सच्चा इतिहास एक भी नहीं था। विदेशियों के लिखे हुए अपूर्ण और पक्षपातयुक्त इतिहासों के पढ़ने से यहाँ के नवयुवकों को अपने देश के प्रति अश्रद्धा उत्पन्न हो जाती है। ऐसे समय में हिन्दी के सुप्रसिद्ध लेखक मिश्रबन्धुओं ने बड़ा काम किया है। मध्यमा परीक्षा के इतिहास विषय में यह पुस्तक निर्दिष्ट है। जिल्दवाली पुस्तक जिसकी पृष्ठ संख्या ४०६ है, मूल्य केवल १॥)

## ५—राष्ट्रभाषा

संपादक—श्री० 'भारतीय हृदय'

कुछ समय हुआ, महात्मा गांधी ने यह प्रश्न किया था कि, क्या हिन्दी राष्ट्र-भाषा हो सकती है? इसके उत्तर में भारत के प्रत्येक प्रान्त के बड़े बड़े विद्वानों और नेताओं ने पक्षपात रहित सम्मतियाँ दी थीं, कि निःसन्देह हिन्दी ही राष्ट्रभाषा होने योग्य है। उन्हीं सब अमूल्य सम्मतियों का संग्रह इस पुस्तक में किया गया है। इसके विरोधियों का भी यथेष्ट खण्डन हुआ है। इस विषय के व्याख्यानों का भी इसमें सङ्कलन कर दिया गया है। हिन्दी भाषा के प्रेमियों के लिए यह पुस्तक प्राणस्थानीय नहीं तो क्या है? पृष्ठ संख्या २००, मूल्य ॥)

## ६—शिवा-बावनी

महाकवि भूषण के वीररस सम्बन्धी ५२ कवित्तों का उत्तम संग्रह। इन कवित्तों के टक्कर के छन्द शायद ही वीररस के साहित्य में अन्यत्र कहीं मिलें। महाराष्ट्रपति शिवा जी की देशभक्ति और सच्ची वीरता का यदि चित्र देखना हो, तो एक बार इस छोटी सी पोथी का पाठ अवश्य कर जाइए। शब्द एवं भाव काठिन्य दूर करने के लिये कवित्तों की सुबोधिनी टीका, टिप्पणी और अलङ्कार साहित्य से सम्बन्ध रखनेवाली आवश्यक बातों का इसमें उल्लेख कर दिया गया है। साहित्य सम्मेलन की प्रथमा परीक्षा में यह पुस्तक रखी गयी है। पृष्ठ संख्या ५४, मूल्य ≡)

## ७—सरल पिङ्गल

ले०— { श्री पुत्तनलाल विद्यार्थी,<br>श्री लक्ष्मीधर शुक्ल, विशारद

इस पुस्तक में पिङ्गल शास्त्र के गूढ़ रहस्यों को सरल और सुन्दर भाषा में समझाने का प्रयत्न किया गया है। छन्दों के उत्तम उदाह-

रण भी दिये गये हैं। अन्त में संस्कृत छन्दों का भी संक्षेप में दिग्दर्शन करा दिया गया है। पृष्ठ संख्या ५८, मूल्य ।)

## ८—सूरपदावली

(सटिप्पण)

श्री सूरदास जी के १०० अत्युत्तम पदों का अपूर्व संग्रह जो हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की परीक्षा में स्वीकृत भी है। मूल्य ।)

## ९—भारतवर्ष का इतिहास

(द्वितीय खण्ड)

लेखक—श्री मिश्रबन्धु

इसमें ६०० संवत् पूर्व से १२५० संवत् तक की घटनाओं का वर्णन किया गया है। भारतवर्ष के उत्थान-पतन के क्रम का पता इस पुस्तक से जैसा कुछ चलता है, वह पढ़ने से ही मालूम होगा। हिन्दू-समाज की उन्नति और अवनति, इस देश में स्वदेशी और विदेशी भावों का आविर्भाव तथा धार्मिक जीवन की महत्ता आदि जानने योग्य आवश्यक विषयों का ज्ञान इससे पूर्णतः हो सकता है। इस इतिहास की आवश्यकता प्रत्येक नवयुवक को होनी चाहिए। सुन्दर छपाई, कपड़े की जिल्द, पृष्ठ संख्या ४४८, मूल्य २)

## १०—पद्य-संग्रह

संपादक { श्री ब्रजराज एम. ए., बी, एस-सी., एल. एल. बी.
श्री गोपालस्वरूप भार्गव एम. एस-सी.

आधुनिक खड़ी बोली के प्रसिद्ध प्रसिद्ध कवियों की कविताओं का सुन्दर संग्रह। ये कविताएँ विद्यार्थियों के लिए बड़े काम की हैं। संग्रह सामयिक और उपादेय है। यह पुस्तक हिन्दी साहित्य सम्मेलन की प्रथमा परीक्षा के साहित्य में स्वीकृत है। पृष्ठ संख्या १२८, मूल्य ।≡)

---

पुस्तकें मिलने का पता हिन्दी—साहित्य-सम्मेलन,
पोस्ट बाक्स नं० ११ प्रयाग।

## ११—संक्षिप्त सूरसागर

संपादक—श्री वियोगी हरि

सूरदास जी रचित सूर-सागर से २५० पद-रत्न चुन कर इसमें एकत्र किये गये हैं। जहाँ तक हो सका है, कई प्रतियों से पदों का पाठ शुद्ध किया गया है। प्रत्येक पद की पाद-टिप्पणी भी लगा दी गयी है। इसकी प्रस्तावना हिन्दी-साहित्य के महारथी सुप्रसिद्ध विद्वान्

**श्रीराधाचरण जी गोस्वामी ने**

लिखी है। सागर की थाह लेनी सहज नहीं है। तब उसे पार कौन कर सकता है? तथापि बिना शोभा देखे रहा नहीं जाता। अब तक सब के अनुशीलन करने योग्य सूरसागर का सुन्दर और सुलभ संस्करण नहीं निकला था। लोग इसके रसास्वादन के लिए लालायित हो रहे थे। सम्मेलन ने इस अभाव को दूर कर हिन्दी-साहित्य-रसिकों की पिपासा शान्त करने की यथाशक्ति चेष्टा की है। पुस्तक के अन्त में लगभग १०० पृष्ठ की सूरदासजी की जीवनी तथा काव्य परिचय जोड़ा गया है। उनकी जीवनी की मुख्य मुख्य घटनाओं का पूरा पूरा उल्लेख आ गया है। कविता की सुन्दरता भी पर्याप्त रूप से दिखला दी गई है। पदों में आई हुई अन्तर्कथाएँ भी लिखी गयी हैं। यह पुस्तक हिन्दी-साहित्य सम्मेलन की उत्तमा परीक्षा में स्वीकृत है। एण्टिक काग़ज़ का जिल्ददार संस्करण पृष्ठसंख्या ४२५, मूल्य २)

## १२—विहारी-संग्रह

सम्पादक—श्री वियोगी हरि

कविवर बिहारीलाल की सतसई से प्रथमा परीक्षा के विद्यार्थियों के लिए यह छोटा सा संग्रह तैयार किया गया है। जहाँ तक सम्भव हुआ है इसमें श्रृङ्गार रस के दोहों ही का समावेश नहीं किया गया है, किन्तु ऐसे दोहों का संग्रह किया गया है, जो बिना

किसी सङ्कोच के हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की प्रथमा परीक्षा के परीक्षार्थियों को पढ़ाए जा सकते हैं। पृष्ठ संख्या ६४, मूल्य ≡)

## १५—ब्रज-माधुरी-सार

सम्पादक—श्री वियोगी हरि—इस पुस्तक का विषय इसके नाम ही से प्रकट होता है। इसमें ब्रजभाषा की कविता का सार सङ्कलन किया गया है। इस संग्रह में चार विशेषताएँ हैं:—

(१) इसमें सूरदासजी से लेकर आधुनिक काल के स्वर्गीय सत्यनारायणजी तक की भावपूर्ण कविताओं का संग्रह किया गया है। ब्रजभाषा का कोई भी प्रसिद्ध कवि नहीं छोड़ा गया है।

(२) इसमें कुछ ऐसे कवियों की रचनाओं का रसास्वादन भी कराया गया है जो अभी तक कहीं नहीं प्रकाशित हुई थीं।

(३) इस ग्रन्थ में यथेष्ट पाद टिप्पणी लगा दी गयी हैं जिनकी सहायता से साधारण पाठक भी लाभ उठा सकते हैं।

(४) इसके प्रारम्भ में प्रत्येक कवि का संक्षिप्त जीवनचरित और उसकी कविता की संक्षिप्त आलोचना भी की गयी है।

पृष्ठसंख्या ६३२, मूल्य जिल्दवाले संस्करण का केवल २)

## १६—पद्मावत (पूर्वार्द्ध)

सम्पादक—श्री लाला भगवानदीन

यह हिन्दी के सुप्रसिद्ध कवि मलिक मुहम्मद जायसी कृत पद्मावत का पूर्वार्द्ध है। इस भाग में पहले खण्ड से लेकर ३४वें खण्ड तक समावेश हुआ है। सम्पादक महोदय ने इस ग्रन्थ में इतनी यथेष्ट पादटिप्पणी लगा दी है कि अब इस प्राचीन काव्य का रसास्वादन करना प्रत्येक कविता प्रेमी के लिए सुलभ हो गया है। अन्त में एक संक्षिप्त शब्दकोश भी जोड़ दिया गया है। पृष्ठसंख्या लगभग २०० मूल्य साधारण जिल्द का १) और जिल्दवाली का १।)

---

पुस्तकें मिलने का पता—हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, पोस्टबाक्स नं० ११ प्रयाग।

भाग १२ } भाद्रपद, संवत् १९८१ { अङ्क १

## श्रीमैथिली-चरण

सब मनसा के मनसा के हैं पुजैया दोऊ,
सागर सुघरता के का के उपमा के हैं॥
कठिन कुदोषता के परम छमा के हेतु,
सकल छमा के बीज मूल सुखमा के हैं॥
दुखहरता के खान सुखकरता के मान,
देत करता के जा के प्रेम नेकता के हैं॥
मुद-भरता के सिंधुसुता के सुरूपता के,
'नाथ' हितताके पद जनकसुता के हैं॥

—लोकनाथ चौबे

# श्री चाचा हित वृन्दावनदासजी के कुछ सामयिक पद

## मलार

हमारें नित इष्ट राधिका रानी।

जाके प्रेम पगे नँदनन्दन विहरत सँग रुचि मानी॥
बंदत जाहि महा मुनि निसिदिन गावति सुजस-कहानी।
वृन्दावन हित रूप स्वामिनी आगम निगम बखानी॥ १॥

यह छबि मोहन की मनहरनी।

अति चटकीली पहरि चूनरी आवति ज्यों मद करनी॥
इन्द्रवधू सी सोभित भामिनि हरित भूमि पगधरनी।
चहलत दहलत लोचन पिय हिय हिलगन जाति न बरनी॥
छिन छिन महारंग रस बरषत लालहि सुख विस्तरनी।
वृन्दावन हित रूप रसिकनी सकल मनोरथ भरनी॥ २॥

रूप चटक चटकीली चुनरिया तापै अधिक लसी है।

मनु अनुराग जाल में दामिनि सोभा सहित फँसी है॥
दुहुं बिच हलनि पीठि वर बेनी इहि विधि छवि दरसी है।
मानों कनक-चौंहटें खेलन पन्नगतिय निकसी है॥
पाछैं ह्वै निरखति आछैं पिय बरबस दृष्टि डसी है।
वृन्दावन-हितरूप लड़ैती तू पिय हियैं बसी है॥ ३॥

चुनरिया भीजैगी चटकीली।

आई घटा उमड़ि श्रीराधे, कहा फिरति बन ढीली॥
बूँद परै न रहै रंग ऐसौ मानि अधिक अरबीली।
पीतम करी है पीत पट खोही लै न बचाइ छबीली॥
ये छूटीं जलधार चहुंदिसि रहिहै हठ न हठीली।
वृन्दावन हित अनखि उठी तब महारूप गरबीली॥ ४॥

### झूलन

लटकि लटकि झूलन में चुनरिया फहर फहर फरकी है।
पिय भुज जोर लेत जब झोटा कंचुकि उर तरकी है॥
ग्रीवा ढरनि मुरनि कृसकटि मुख अलकावलि ढरकी है।
जोबन जोर मरोरनि तन हिय मदन भीर भरकी है॥
होड़ी-होड़ा बढ़ति अलोलनि पटुली पग सरकी है।
वृन्दावन हित रूपसिंधु सुख मोहन मति गरकी है॥

### बधाई लालजी की

### मालकोश

गोकुल मंगल अवधि भयौ है।
रसमय बपु जसुमति दरसायौ ब्रजजन नैननि चैन दयौ है॥
भांति भांति ग्रह नंद अलंकृत जहं सोभा विश्राम लयौ है।
वृन्दावन हित रूप अवधि कौ अहा कहा अंबुद उनयौ है॥ ६॥

### केदारौ

लाला नादौ बाढ़ौ जीजौ,
सुनों जसोमति तुम जायौ याकों न्हात बारु जिनि छीजौ॥
गोपालक ह्वै जौ सब के मन नैननिकों सुख दीजौ।
बृन्दाबन हित रूप गोप-कुल सुजस उजागर कीजौ॥

### सोरठ

नन्द घर कौतुक आजु महा।
स्याम सलौनों सुत जु भयौ सब नैननि लेत लहा॥
ऐसी बजति बधाई सिव विधि ह्वै रहे मुंह जु चहा।
बृन्दाबन हित रूप अवधि इक रसना कहौं कहा॥ ७॥

### पलना

### देव गंधार

बन्यों मणि पलना नन्दनिकेत।
तामें ललहिँ झुलावति रानी निरखि बलैया लेत॥
छिन में लै पय पान करावति छिन पलना धरि देत।
छिन में प्रेम-विवश ब्रजरानी छिन में होत सचेत॥

यह सुख नन्दघरनि भागिनु कौ निगम थके कहि नेत ।
बृन्दाबन हित रूप स्याम दुलरावति वारिधि हेत ॥

### कवित्त

गहर गँभीर भादों अष्टमी अँधेरी रात तामें भयो रोहिनी नछत्र हू सँजूत है,
दामिनी अवनि नवे मंद मंद गरजनि देवता गगन छाये मंगल अभूत है।
बृन्दावन हित रूप प्रेम पूरि गयो लोक थिर चर घूमैं हिये आनँद अकूत है,
अखिल अंडथाती सो जसोदा सेज पौढ़ें पाई लौनों अनहोनों भयो नन्दजू के पूत है ॥

### सवैया

आजु महा या पुर छवि बरषत लागतु है मोहि सगुन भला,
ब्रजराज की पौरि हँसै सजनी जहँ अष्ट महा सिधि खेलें कला ।
जसुमति सौभाग्य उदोत भयौ मिलि मंगल गाय रहीं अबला,
बृन्दाबन हित रूप उदय ह्वै हैं देखो सुनो नहिं ऐसो लला ॥

### माँझ

कृष्ण जनम सुख गहरौ सागर कोऊ थाह न पावै,
ब्रज जन सबहि करत मन मज्जन उमगि उमगि जस गावै ।
ब्रह्मादिक सिवादि नारद सुक मनहि अधिक दौरावैं,
वृन्दाबन हित रूप महा गरुवौई सबहि बतावैं ॥
दै अशीष घर जांहिं बहुरि दैवे कों दौरी आवैं,
लाल जनम लखि प्रेम छकीं सब हुलसीं मंगल गावैं ।
रूप कलपतरु कूखि महरि की पुनि पुनि ताहि मल्हावैं,
बृन्दावन हित रूपसिंधु में नैन-मीन पैरावैं ॥

प्रेषक—श्री हितरूपलाल गोस्वामी.

---

# मर्म्म व्यथा

कहां गया तू मेरे लाल ?

आह ! काढ़ ले गया कलेजा आकर के क्यों काल ॥

पुलकित उर में रहा बसेरा।
था ललकित लोचन में. डेरा ॥
खिले फूल सा मुखड़ा तेरा।
प्यारे था जीवन-धन मेरा ॥

रोम-रोम में प्रेम प्रवाहित होता था सब काल ॥१॥

तू था सब घर का उँजियाला।
मीठे बचन बोलनेवाला ॥
हित कुसुमित तरु सुन्दर थाला।
भरा लबालब सुखरस-प्याला ॥

अनुपम रूप देख कर तेरा होती बिपुल निहाल ॥२॥

अभी आंख तो तू था खोले।
बचन बड़े सुन्दर थे बोले ॥
तेरे भाव बड़े ही भोले।
गये मोतियों से थे तोले ॥

बतला दे तू हुआ काल-कवलित कैसे तत्काल ॥३॥

देखा दीपक को बुझपाते।
कोमल किसलय को कुंभलाते ॥
मंजुल सुमनों को मुरझाते।
मलिन मृदुल-लतिका हो जाते ॥

किन्तु कहीं देखी न काल की गति इतनी विकराल ॥४॥

चपला चमक दमक सा चंचल।
तरल यथा सरसिज दल गत जल॥
बालू-रचित भीत सा असफल।
नश्वर घन-छाया सा प्रतिपल ॥

या इनसे भी क्षणभंगुर है जन-जीवन का हाल ॥५॥

आकुल देख रहा अकुलाता।
मुझसे रहा प्यार जतलाता॥
देख वारि नयनों में आता।
तू था बहुत दुखी दिखलाता॥
अब तो नहीं बोलता भी तू देख मुझे बेहाल॥७॥
तेरा मुख विलोक कुंभलाया।
कब न कलेजा मुँह को आया॥
देख मलिन कंचन सी काया।
विमल विधु वदन पर तम छाया॥
कैसे निज अचेत होते चित को मैं सकूं संभाल॥७॥
ममतामयी बनी यदि माता।
क्यों है ममता-फल छिन जाता॥
विधि है उर किसलिये बनाता।
यदि वह यों हैं विध-विध पाता॥
भरी कुटिलता से हूं पाती परम कुटिल की चाल॥८॥
किस मरुमहि में जीवन-धारा।
किस नीरवता में रव कारा॥
किस अभाव में 'स्व'भाव सारा।
किस तम में आलोक हमारा॥
लोप हो गया, मुझ दुखिया को दुख-जलनिधि में डाल॥९॥
आज हुआ पवि-पात हृदय पर।
सूखा सकल सुखों का सरवर॥
गिरा कल्पपादप लोकोत्तर।
छिना रत्न रमणीय मनोहर॥
कौन लोक में गया हमारा लोक अलौकिक बाल॥१॥

—अयोध्यासिंह उपाध्याय "हरि औध"

---

# अनुराग-वाटिका

## पद

भजु मन, श्री राधे ब्रजरानी ।
जाके नूपुर-रव तें प्रगटी विमल वेद की बानी ॥
जासु भ्रकुटि-संकेत पाय कै अलख ब्रह्म नाचै ।
जाके सुख कारन सुखसागर नित नव रचना राचैं ॥
जाके चरन पलोटत सिव सुक सनकादिक रसरासी ।
ता स्यामा के पद-पदुमन कौ हरि-मन-मधुप उपासी ॥

❦❦❦

सुहागिल, तेरो सहज सुहाग ।
तू पिय की, पिय प्यारो तेरो, नित नित नव अनुराग ॥
कपट-कपाट खोल उर अंतर रुचि रँगमहल सजाय,
डारि पलक-पट दृग-पुतरिन करि सेज पीउ पौढ़ाय,
लूटै सुख सरबस, उमगै जहँ प्रेमपयोधि अपार ।
जल थल नभ मदमय ह्वै जावै, झरै सुधाकर-सार ॥
नित ही गगन-घटा घहरावै, नित ही सावन मास ।
सुरत-निरत कौ बाँधि हिंडोरा झूलत दोउ रसरास ॥
लिये रहति नित नेह-रँगीली कर प्रीतम त्रित-चंग ।
अनुदिन झलकै सुख सुहाग तनु, छलकै नैननि रंग ॥

❦❦❦

तिहारी कौन परी यह बानि ।
सुधि नहिं लेत निठुर मनमोहन अब छुड़ाइ कुलकानि ॥
झलक दिखाय मोहिनी छिन में कीन्हों हमैं अधीन ।
अब हेरत हू नाहिं गुमानी एरे ! प्रेम-प्रवीन ॥
खैंचत छांड़ि देत पुनि सहजहि नीको यह ब्योहार ।
भली खिलाड़ी खेल तिहारो ! हम बूड़त मँझधार ॥

हम बापुरी मीन कहा जानैं तो जाली को जाल।
चाहभरो चातक समुझत नहिं कैसो मेघ कराल॥

प्राननाथ प्यारे! न करो अब बिफल मिलन की आस।
चाहत यह मन-मधुप तिहारे चरन-कमल कौ बास॥

❦❦❦
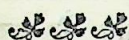
रही नहिं नैननि की परतीति।
जानत नैकहु नाहिं बिसासी कहा प्रीति की रीति॥

प्रीतम-छबि-रस भरि परिपूरन कहा भरैंगे और।
जो अबलौं यह खुले निहारत कठिन बिरह की ठौर॥

पीर सिराती जो न हेरते पिय आवन की बाट।
वा मूरति पधराय पूतरिन देते पलक-कपाट॥

पंकज, पंक, पतंग, मीन सों लेते जो गुरुमंत्र।
तौ पल माहिं सिद्ध है जातो इन्हैं प्रेम कौ तंत्र॥

सूखि न गये उसासनि आँसू मुँदि न गये दोउ नैन।
जानि परत, अँग-अंग दहैंगे यह दिन-दिन दुखदैन॥

❦❦❦

यहाँ तू क्यों ठाढ़ी पनिहारी!
औघट घाट, सांझ की बिरियाँ, गागर सिर पै भारी॥

छलकत नीर, डिगत सिर गागर भींजि गई रँगसारी।
कहाँ गिराय दियो कर कँगना, कहाँ मुँदरिया डारी॥

छिन पीछे छिन आगे देखति घूमति ज्यों मतवारी।
सुरति तिहारी कहाँ हिरानी, छाई दृगनि खुमारी॥

झूमति झुकति पियो प्रेमासव नेहबान की मारी।
मटुकी पटकि मिलै किन पियसों, सोचति कहा गँवारी॥

(क्रमशः)

—वि० ह०

---

# मेला

चार दिना को मेला।
दिन के ढरत यहौ ढरि जैहै, ज्यों बारू की बेला॥
पैंठ करत बालक ब्यौसायी;
मोल-भाव नहिं जानै।
अकरे दाम लगत, तौहू नहिं हानि-लाभ पहिचानै॥
सीपैं, संख, प्रबाल-जाल,
मनि-माल रुमाल पटोरे।
कौन काम चन्दन चकमक चामीकर ढेल बटोरे॥
उठतै पैंठ ऐंठ कढ़ि जैहै;
सबै पर्‌यो रहि जैहै।
केवल करनी ही बनजारे! जीवन-नाव लदैहै॥
लखु वा पार छितिज की लँग सौं;
रहि-रहि कोऊ टेरै।
चमकति सी आभा मसान पै तेरो मारग हेरै॥
अजहूँ हरि सों नेह जोरि लै;
धरु न ठीकरे सैंत।
ह्वैजा सजग पहरुआ! सिर पै खड़ो काल कमनैत॥

मदनलाल चतुर्वेदी

---

# मर्दुमशुमारी की कुछ बातें

पाठकों को यह सुन कर आश्चर्य्य होगा कि इस देश में बहुत से मनुष्य ऐसे भी हैं जिनकी प्रधान भाषा संस्कृत है। अर्थात् वे अपने घर में अपने कुटुम्बियों के साथ सदा संस्कृत ही में बातचीत करते हैं। पर पिछली मर्दुमशुमारी की रिपोर्ट जिन्होंने लिखी है उनको इस बात के प्रमाण मिले हैं कि इस देश में मृतभाषा संस्कृत बोलने वाले भी हैं। उन्होंने जो नक़शे अपनी रिपोर्ट में दिये हैं उनके अनुसार, भारत में, ३५६ मनुष्य संस्कृत बोलते हैं, जिनमें २३२ तो पुरुष हैं और १२४ स्त्रियां। यह देख कर हमारे मन में जिज्ञासा उत्पन्न हुई कि वे कौन से प्रान्त या देशी राज्य हैं जहां आज कल भी वहाँ के कुछ निवासी संस्कृत ही बोलते हैं। इससे हमने मर्दुमशुमारी की रिपोर्ट के दूसरे भाग में प्रकाशित, इम्पीरियल टेबल, नम्बर १०, का तृतीयांश देखना शुरू किया तो मालूम हुआ कि वह सौभाग्यशाली प्रान्त मदरास है। वहां ३१५ संस्कृतभाषा-भाषी मनुष्य हैं। उनमें से पूरे २०० तो पुरुष और ११५ स्त्रियां हैं। इस तरह ३५६ में से ३१५ का तो पता लग गया; पर बाकी के ४१ का पता किसी भी अन्य प्रान्त में नहीं लगा। अथवा शायद हमने देखने में भूल की हो।

मालूम नहीं, मदरास के ये ३१५ मनुष्य कौन हैं जिनकी प्रधान भाषा संस्कृत ही है और जो लड़कपन से यही भाषा बोलते और अपने घर में भी इसी भाषा के द्वारा अपने विचार व्यक्त करते हैं। मन में यह सन्देह उत्पन्न होता है कि क्या इन लोगों की मातृभाषा संस्कृत ही है? और क्या ये लोग अपने प्रान्त की प्रधान भाषा जानते ही नहीं अथवा जानते हैं, पर बोलते ही नहीं? पर इस सन्देह का निवारण कौन करेगा।

मर्दुमशुमारी की रिपोर्ट में भिन्न-भिन्न विषयों से सम्बन्ध रखने वाले जो अङ्क दिये गये हैं उन पर विश्वास करने को जी नहीं

चाहता। डाक्टर ग्रियर्सन ने संयुक्त प्रान्त की हिन्दी के चार भेद किये हैं—पश्चिमी हिन्दी, पूर्वी हिन्दी, बिहारी और मध्य पहाड़ी। पर अण्डमन, आसाम, ब्रह्मदेश और बलोचिस्तान तक में पश्चिमी हिन्दी बोलनेवालों की संख्या तो रिपोर्ट में की गई है, पर पूर्वी हिन्दी बोलनेवालों की नहीं। तो क्या इन प्रान्तों या देशों में एक भी पूर्वी हिन्दी बोलनेवाला नहीं? कुछ ही प्रान्त इस देश में ऐसे हैं जिनमें मर्दुमशुमारी की रिपोर्ट के अनुसार पूर्वी हिन्दी बोलने वाले मनुष्य पाये जाते हैं। दिल्लगी तो यह है कि अपने संयुक्त प्रान्त में भी एक भी पूर्वी हिन्दी बोलनेवाला नहीं दिखाया गया! इसी से इस रिपोर्ट के अङ्कों पर विश्वास करने को जी नहीं चाहता।

महावीरप्रसाद द्विवेदी

---

# साहित्य-सम्मेलन

हिन्दी साहित्य-सम्मेलन का पन्द्रहवां अधिवेशन देहरादून में होनेवाला है। सम्मेलन के सभापति के चुनाव के सम्बन्ध में चर्चा चल चुकी है। इसलिये मेरा भी इस बारे में कुछ निवेदन कर देना अनुचित न होगा। यह तो स्वयंसिद्ध सिद्धान्त है कि सम्मेलन का सभापति साहित्य-सेवी ही होना चाहिये। इसके लिये युक्ति और प्रमाण की आवश्यकता नहीं। इस समय मेरी दृष्टि दो सज्जनों की ओर जाती है। उनमें एक वृन्दावनवासी पूज्य पंडित राधाचरण गोस्वामीजी महाराज हैं और दूसरे सुप्रसिद्ध इतिहासज्ञ रायबहादुर पं० गौरीशंकर हीराचन्दजी ओझा हैं। यह दोनों ही अपने अपने विषय के अद्वितीय विद्वान् और सब तरह से सम्मेलन के सभापति-पद के उपयुक्त हैं, परन्तु मेरी सम्मति है कि अबके पूज्य गोस्वामीजी ही सभापति बनाये जांय।

वृद्धावस्था में दो-दो होनहार सुपुत्रों के अकस्मात् असमय कालकवलित हो जाने से गोस्वामीजी के चित्त में गहरी चोट पहुँची। इससे वह लिखना-पढ़ना छोड़ भगवान के भजन में ही अपना समय बिताते हैं। यही कारण है कि अधिकांश हिन्दी-प्रेमी उन्हें भूल से गये और नवयुवक-मंडली तो उनसे बिलकुल अपरिचित सी हो रही है। ऐसी अवस्था में गोस्वामीजी का कुछ परिचय दे देना अनुचित और अनवसर की बात न समझी जायगी।

"श्रद्धेय पंडित राधाचरणजी गोस्वामी की अवस्था इस समय पैंसठ के ऊपर है। आप वृन्दावन के प्रतिष्ठित रईस हैं। आप संस्कृत के विद्वान् और हिन्दी-साहित्य के एक स्तम्भ हैं। जिस समय भारतेन्दुजी हिन्दी का मार्ग परिष्कार कर रहे थे उस समय आपने उनका हाथ बटाया और साथ दिया था। उस समय हिन्दी की दशा आज कल की सी न थी; जो लक्कड़तोड़ तुकड़ों की कौन कहे, छन्दोरहित रचना करनेवाले भी युगान्तर उपस्थित करने का दम यों आसानी से भर लेते। उस समय की हिन्दी-सेवा बड़ी कठिन थी। न इतने लिखनेवाले ही थे और न इतने पढ़नेवाले ही। गोस्वामीजी उन इने गिने हिन्दी-सेवकों में हैं जिन्होंने स्वार्थत्यागपूर्वक हिन्दी का मार्ग परिष्कृत किया है। इन्हें अब के सभापति न बनाना बड़ी कृतघ्नता होगी।

गोस्वामीजी महाराज ब्रजभाषा-साहित्य के भाण्डार हैं। वह केवल उसके ज्ञाता ही नहीं, उस पर उनका पूरा अधिकार है। अष्टछाप के कवियों के तो वह पूरे जानकार और प्रमाण हैं। वह स्वयं सुलेखक और सुकवि हैं।

वह सुलेखक सुकवि ही नहीं, सम्पादन-कला के भी ज्ञाता हैं। इन्होंने "भारतेन्दु" नाम का मासिक पत्र निकालकर बहुत दिनों तक उसका सम्पादन उत्तम प्रकार से किया था। उसमें विविध विषय के चटपटे लेख निकलते थे। उसकी गिनती अच्छे मासिक पत्रों में थी। हास्यरस के तो आप सिद्धहस्त लेखक हैं। "नापित स्तोत्र" और "स्वर्गयात्रा" आदि पढ़कर अब भी पेट में बल पड़ जाते हैं। जिन्हें गोस्वामीजी के चटपटे लेखों का आनन्द लेना हो वह उनका भारतेन्दु ढूँढ़ कर पढ़ें। गोस्वामीजी की लिखी (१) सरोजनी नाटक (२) विधवा विपत्ति (३) विरजा (४) जाविन्नी (५) यमलोकयात्रा (६) स्वर्गयात्रा आदि कई पुस्तकें हैं। गोस्वामीजी सुवक्ता भी हैं। आपके व्याख्यान बड़े ओजस्वी और प्रभावोत्पादक होते हैं। भक्ति रस की वक्तृताएं सुनकर तो श्रोता गद्गद हो जाते हैं। आप राधारमणी गोसाईं होने पर भी सुधार के बड़े पक्षपाती हैं। आपके विचार बड़े उदार और उदात्त हैं। श्रीयुत वियोगी हरिजी अपने "कवि-कीर्तन" में गोस्वामी जी का कीर्तन यों करते हैं—

राधा-रमणी पूज्य गुसाईं बंस उजागर।
राधाचरण प्रवीन लीन काव्यामृत सागर॥

भारतेन्दु को सखा सनेही प्रेम-विलासी।
भजन-भावना रंग्यो रहत वृन्दावन-वासी॥

तात्पर्य यह है कि पूज्य गोस्वामीजी सब प्रकार से सम्मेलन के सभापति पद के उपयुक्त और अधिकारी हैं। अब तक इनका सभापति न होना हिन्दीवालों के लिये लज्जा और कलंककी बात है। पूज्य गोस्वामीजी अत्यन्त वृद्ध हैं। इसलिये अबके उन्हें सभापति बनाकर उनके अनुभव, उनके ज्ञान और उनके अनुशीलन का लाभ हम लोगों को उठा लेना चाहिये।

सम्मेलन की स्थायी समिति और स्वागत-समिति के सदस्यों से मेरा अनुरोध है कि वह अब के श्रद्धेय राधाचरण गोस्वामी को ही सभापति निर्वाचित करें। इससे सम्मेलन का ही गौरव बढ़ेगा, कुछ उनका नहीं। आशा है, मेरा निवेदन अरण्यरोदन न होगा।

जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी

---

# घासीराम का विरह-वर्णन

व्रजभाषा के प्राचीन कवियों ने अपने-अपने ढंग पर विरह का बड़ा अनूठा वर्णन किया है। यदि किसी ने अतिशयोक्ति का सहारा लेकर विरह-वेदना की पराकाष्ठा दिखलायी है तो किसी ने स्वभावोक्ति का आदर कर के विरह-ताप का हृदय-द्रावी वर्णन किया है।

पहले प्रकार के विदग्धतापूर्ण वर्णन पढ़ने हों तो महाकवि विहारीलाल की 'सतसई' देखनी चाहिए और यदि दूसरी तरह का अपूर्व चित्र देखना हो तो महाकवि सूर और देव की कविता पढ़नी चाहिए।

इस विषय पर कवियों ने इतनी अधिक कविता की है कि यदि भिन्न-भिन्न कवियों का 'विरह-वर्णन' इकट्ठा किया जाय तो एक बड़ा ग्रंथ तैयार हो जाय।

ब्रजभाषा-कविता के बहुसंख्यक ग्रंथ अभी तक अमुद्रित ही पड़े हैं। अनेकों का पता भी नहीं है। काशी नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा हिंदी की प्राचीन पुस्तकों की जो खोज होती है उस से बड़ा लाभ हुआ है। अनेक ग्रंथरत्नों का पता लगा है एवं बराबर लग रहा है। यदि कोई साहसी और धैर्यवान् पुस्तक-प्रकाशक हिंदी के प्राचीन अमुद्रित ग्रंथरत्नों के प्रकाशन का भार ग्रहण करने की तत्परता दिखलावे तो मातृभाषा का बहुत बड़ा उपकार हो। ब्रजभाषा की कविता के प्रति लोगों में जो घृणा का भाव कुछ समय से उत्पन्न हो गया था वह अब बहुत कुछ दूर हो रहा है। हिंदी की प्राचीन कविता की ओर सर्वसाधारण की रुचि भी फिरी है। विद्वान् समालोचकों द्वारा लिखी गयी पुराने कवियों पर सुंदर और मार्मिकतापूर्ण समालोचनाएं तथा साहित्यसम्मेलन की परीक्षाओं ने इधर बड़ा काम किया है। काशी की नागरी-प्रचारिणी सभा तो बहुत पहले से इस ओर अच्छा उद्योग कर रही है। अस्तु। इस लेख के द्वारा पाठकों को कविवर घासीरामजी के 'विरह-वर्णन' का परिचय कराया जाता है।

सुकवि घासीराम का कोई ग्रंथ अभी तक मुद्रित नहीं हुआ। माघ की 'माधुरी' द्वारा पाठकों के सामने आप की मनोहर अन्योक्तियाँ उपस्थित की गयी थीं। घासीराम का 'विरह वर्णन' भी अपने ढंग का अनूठा ही है। इस की स्वाभाविकता दर्शनीय है। भाषा ज़ोरदार और कहने का ढंग परम सुंदर है। आइये, देखिये—कृष्ण के मथुरागमन से कोमलांगी गोपियाँ विरह-विह्वला हैं। उद्धवजी मथुरा से कृष्ण का संदेशा लाये हैं। माधव के गोकुल में पुनरागमन की संभावना बहुत कम है। वियोगानल से व्यथित गोपियाँ उद्धव से कहती हैं कि यदि एकबार भी नंदनंदन को फिर हम देख पातीं तो हृदय शीतल हो जाता। इस के अनंतर माधव की जो इच्छा होती वही करते। भले ही वे तब अपनी नूतन प्रेमपात्री 'कुबरी' की ओर से धीरज देने के लिए कठोर, कपटतापूर्ण और कृत्रिम उपदेशपूर्ण

बातें हमें लिखते। हा! हमारे प्रियतम पहले तो ऐसे 'निर्मोही' न थे! यह सब उसी दासी कूबरी की लीला है!!

> कंचन की छुरी सी बियोग-बिषभरी हम
> एक बेर बहुरि गोविंद फेरि दिखते।
> फिरि प्रभु चहते तो बिलगु न औतै,
> वह चेरी की सिखामनि करेरी बहु लिखते।
> 'घासीराम' सुकबि बनाइ समुझाय हरि,
> कपट हँथ्यौटी की पठामनि के तिखते।
> सजन हमारे ऊधौ ऐसे तौ न होते,
> निरमोही भये जैसे वा खवासिनि के सिखते॥

कृष्ण के मिलन की कोई आशा नहीं रह गई! योग-साधन करने का आदेश उद्धवजी लाये हैं। किंकर्तव्यविमूढ़ा-गोपियों के हृदय का मर्मस्पर्शी दुःखोद्गार है—

> नागिन सी लटैं कहौ कैसे बटैं हांथ निज,
> कैसे मुखचंद भरैं भसमी भरीन में।
> अंजन कलित नैन करिए निरंजन क्यों,
> बरिए अयान किमु कान मुदरीन में॥
> 'घासीराम' सुकबि बसैये सेली कंठ किमु,
> कंचन जड़ाऊ जेब जड़ित तरीन में।
> सुलभ सलोनी लंक मूठी न समाति,
> ताहि कैसे के बसामैँ हम आजु गुदरीन में॥

उद्धव के कथन पर गोपियों को विश्वास नहीं हुआ। प्रियतम का हृदय ऐसा कठोर हो गया है, यह वे स्वप्न में भी नहीं मान सकतीं। हरि के हाथ की लिखावट से ही उनको विश्वास होगा, अन्यथा नहीं। कंस की दासी 'कुब्जा' के वशीभूत हुए कृष्ण को अब कौन पहिचान सकेगा? हृदय की गहरी वेदना मुश्किल से किसी प्रकार छिपाते हुए गोपियां कहती हैं:—

तुम तौ मधुप एक पाती के पठाव्रन हौ,
तिनको सिखावन निसंक उर आनै को ?
गोकुल के कुल के मयंक को चरित्र अति
परम पवित्र ताहि तुरत बखानै को ?
'घासीराम' सुकवि लिखावौ चिठी देखैं हम,
हरि की हथ्थौटी की पथ्थौटी भूंठ मानै को ॥
हांसी को न डर बिसवासी बसे कुबिजा के,
दासी बस भये अब कान्ह पहिंचानै को ?

उद्धव के पत्र हाथ में लेते ही सभी गोपियां नज़दीक आकर उन्हें घेर कर खड़ी हो गयीं। सभी निस्तब्ध हैं। पत्थर की मूर्ति की तरह निश्चल वे प्रियतम की याद में तन्मय हैं। कृष्ण के लिखे हुए प्रत्येक शब्द को सुनने की उत्कट लालसा है। कज्जल-कलित नेत्रों में आंसू भर आये! विरह-ताप से संतप्त उनके हृदय उमड़ पड़े !! प्यारे श्याम ने प्रेम-पत्र लिखा है, यह जानकर कुछ क्षण के लिए यमुनातट पर के पूर्व आमोद-प्रमोद का सुखद स्मरण होगया। किन्तु हाय ! फिर माधव के वियोग का समाचार सुनकर वे सुकुमारी गोपियां दीर्घोच्छ्वास लेकर नितांत कातर हो उद्धव के मुख की ओर टकटकी लगाकर देखने लगीं। घासीराम का यह करुण विरह-वर्णन इस प्रकार है:—

कर सों गहत घिरि आईं सबै आसपास,
चित्र की सी पूतरी श्रवन मग दै रहीं।
कज्जल-कलित चख सज्जल उमहि आईं,
भरि आईं छतियां अनंग रस छै रहीं ॥
'घासीराम' सुकवि सनेही स्याम लिखी सुनि,
प्रथम कलिंदी की सुरति कछु कै रहीं।
बहुरि वियोग के हरफ सुनि ऊधौ मुख
हरि के सलोनी दीह स्वांस लै चितै रहीं ॥

उपर्युक्त पद्य में स्वाभाविकता की छटा दर्शनीय है। कैसा हृदय-द्रावक वर्णन है !

× × × × × ×

गोपियां उद्धव से प्रार्थना करती हैं कि आप कृपा करके यह पत्र—जिसमें कृष्ण ने हम सब को योग साधने का आदेश दिया है—भूल से भी राधा को न सुनाइयेगा। नहीं तो उन बेचारी विरह-विह्वला का प्राणान्त ही हो जायगा—

> स्याम लिखे गुन प्यारी के आखर, जोग चिठी वह जो सुनि पैहै।
> बाँचत ही उड़ि जायगो प्रान कपूर लौं फेरि न हाँथन छ्वैहै।
> ऊधो चुपाउ सुनी खबरैं वृषभानलली तन क्यों विष बैहै।
> कौंल-कली सम राधे हमारी, सो वा कुबिजा की खवासिनि ह्वैहै॥

बड़ा ही मर्मस्पर्शी कथन है!

नायिका विरह-वेदना से व्यथित है। ज़रा देर के लिए भी कृष्ण को यदि पकड़ पाती तो हृदय की अभिलाषाएं पूर्ण हो जातीं। उन्हें नेत्र-कोठरी में बंद करके ताला जड़ दिया जाता! निद्रा तज कर पूरी रखवाली करती और आग्रह के साथ अपनी हृत्तन्त्री का स्वर उनको हृदय-वीणा के राग में भली भाँति मिला देती!

> कुलुफु लगाइ खिरकीन ना खुलन देती,
> आँखी कोठरीन में बनाइ कै सोवाउती।
> लेती मनभायो करि भरि भुजकंठ धरि,
> छतिया को दाह छिपि छिनक बुझाउती।
> 'घासीराम' सुकवि प्रगट करती न कहूं,
> आपनो सरूप हठि वाही में मिलाउती।
> निलज निगोड़ी नींद आउन न देती
> जुपे कारे बेष वारे को पकरि नेक पाउती॥

पावस ऋतु के बादल विरहिणी के क्लेश को और भी बढ़ा रहे हैं। मयूरों की कूक, झिल्ली की झनकार और तेज़ पूर्वी समीर उसको असह्य मालूम होता है। कैसे, पत्थर को भी पिघला देने वाले, करुण-स्वर में निज विरह-व्यथा निवारण करने के लिए 'मोहन' का स्मरण करती है:—

बिपति सँघाती राती प्रेम रँग माती लिखि
पाती तन बिरह बटावौ मुरवान सों।
झाँगु झिंगार झुकि झरप झुरावौ,
तन तपति बुझाओ झंझा पौन पुरवान सों।
'घासीराम' सुकवि सहाई मो वियोगिनि के
तर हरिआवौ घन घोर घुरवान सों।
छतियाँ लगावौ नेकु दरद दुरावौ,
अरि इतै आवौ मोहन बचावौ धुरवान सों॥

**और भी—**

पपीहा 'पी कहाँ' 'पी कहाँ' की टेर लगाये हुए हैं। बेचारी विरहणी उसे सुनकर कहती है कि यदि तेरी इस करुण-पुकार को सुनकर सचमुच मेरे प्रियतम मुझे मिल जायँ तो बड़े आदर के साथ तेरी चोंच सोने से मढ़वा दूँ! प्रोषित-भर्तृका नायिका की विरह-ज्वाला बड़ी प्रबल है। दीर्घोच्छ्वास भी कम रोमांचकारी नहीं—

पीउ पीउ करत मिलै जो मोहि पीउ आनि,
सोने चोंच चातिक मढ़ाऊँ करि आदरन।
कठिन कलापिन के कंठन कटाइ डारौं,
देत दुख दादुर चिराइ डारौं गादरन।
'घासीराम' झिल्लीगन मंदिर मुँदाइ डारौं,
बधिक बोलाइ बाँधौं बक के बिरादरन।
बिरह की ज्वालन सों जलहि जराइ डारौं,
स्वाँसन उड़ाऊँ बैरी बेदरद बादरन॥

गोपियाँ, उद्धव से, परम कातरतापूर्ण स्वर में कहती हैं कि हम श्याम को कैसे भूल जायँ! उनकी वंशी का वह सुरीला स्वर, हृदय को आकर्षित करनेवाला उनका वह हास-विलास, पीताम्बर की वह मनोमोहिनी झलक और रासमंडल की वह आनन्ददायिनी पुनीत स्मृति कैसे भुलाई जा सकती है?

मुरली बजामन की साँचे सुर गामन की,
अलबेली आमन की उर में अरति है।
'घासीराम' टेरन का पीत पट फेरन की,
हँसि हँसि हेरन की हियहीं हरति है।
कुडल कपोलन की मंद-गति डोलन की,
नैन मूंदि खोलन की टारे ना टरति है।
ऊधवजू, तुमहीं बतावौ जैसे तैसे,
घनश्याम की सुरति ऐसे कैसे बिसरति है?

कृष्ण-स्मरण और कीर्त्तन में गोपियाँ तन्मय सी हो रही हैं। उनके ये करुणाजनक शब्द उनकी असहाय और दीन दशा को भली भाँति प्रकट कर रहे हैं। सचमुच ही श्याम की वह मधुर 'स्मृति' भुलाई जा नहीं सकती।

विपिनविहारी मिश्र

---

# तुलसीदास की रामभक्ति

भक्तिर्मुक्तिविधायिनी भगवतः श्रीरामचंद्रस्य हे
लोकाः कामदुघांघ्रिपद्मयुगलं सेवध्वमत्युत्सुकाः
नाना ज्ञान विशेषमंत्रवितर्ति त्यक्त्वा सुदूरे भृशं
रामं श्यामतनुं स्मरारिहृदये भान्तं भजध्वं बुधाः॥

—श्रीमदध्यात्मरामायणे

भारतवर्ष की सत्रहवीं शताब्दि-सीपी ने एक अनमोल मोती पैदा किया। विश्व-धनी की रत्न मञ्जूषा उस मोती की ज्योति से जगमगा उठी। उस मोती में न जाने कितना आब था! सब रत्न उस के आगे फीके पड़ गये! उस आबदार मोती को कविता-कामिनी ने, अपना सर्वस्व दे कर, क्रय किया। बड़े शौक़ से नासा-मौक्तिक पहन कर वह 'मानस-सरोवर' के स्फटिक-स्वच्छ जल में अपना मुंह निहारने चली गयी। मानस-तट पर पहुँच कर उसने देखा—

"जो स्रद्धा-संबल-रहित, नहिं संतन कर साथ।
तिन कहँ 'मानस' अगम अति, जिनहिं न प्रिय रघुनाथ ॥"

'रघुनाथ' की ऐसी महिमा देखकर वह गद्गद कण्ठ से विनय-वाणी बोली—

"जस तुम्हार 'मानस'[१] विमल, 'हंसिनि' जीहा जासु।
'मुकताहल' गुन गन चुनइ, राम! बसहु मन तासु ॥"

'राम' तो भाव के भूखे और प्रेम के प्यासे ठहरे—

"रामहिं केवल प्रेम पियारा।
जानि लेउ जो जाननिहारा ॥"

झट कविता के मनमें बस गये। 'राम' के बसते ही कविता का मन-मंदिर साकेत का स्वर्ण-सिंहासन हो गया। कविता-कामिनी 'नाक' का मोती पाकर धन्य हो गयी! उसने उस रत्न को 'गले के हार'का 'नायक-मणि' बना डाला। फिर'सुमिरनी'का 'जप-विश्राम' बना लिया। उसी 'जप-विश्राम' का नाम 'तुलसी' हुआ। 'तुलसी' की सुमिरनी के बिना रामनाम का जप कैसा? जप करते-करते कविता 'तुलसी' में तल्लीन हो गयी! उस की आत्म-विस्मृति की अनन्यता असीम हो गयी! कविता और मुक्ता की, 'मुक्ता' और 'तुलसी' की, अभिन्नता अमर हो गयी! देखिये—

---

१. उथलहिं 'सीप मोति' उतराहीं।
चुगहिं 'हंस' औ केलि कराहीं ॥ जायसी

पुरइन सघन चारु चौपाई।
जुगुति मंजु 'मनि सीप' सुहाई ॥
अस 'मानस' मानस-चख चाही।
भइ कवि बुद्धि बिमल अवगाही ॥
जो नहाइ चह यहि सर भाई।
तो सतसंग करउ मन लाई ॥—तुलसी

हृदय-सिन्धु 'मति-सीपि' समाना।
स्वाती-सारद कहहिं सुजाना॥
जो बरखइ बर-बारि-बिचारू।
होहिं 'कवित-मुकुता[१]-मनि' चारू॥

जुगुति बेधि पुनि पोहियहि, रामचरित बर ताग।
पहिरहिं सज्जन बिमल उर, सोभा अति अनुराग॥

तुलसी की अनन्य भक्ति-पुष्पांजलि की अनवरत वृष्टि के आगे भक्तिभावमयी कविता का नन्दन-कानन फीका सा जान पड़ता है। रामचरितमानस और विनय-पत्रिका के प्रत्येक पद से रामभक्ति का शंख-नाद सुन पड़ता है। कहते हैं, 'विनय-पत्रिका से बढ़ कर भक्ति-रस-पूर्ण कोई ग्रंथ हिन्दी में नहीं है, यह सर्वमान्य मत है। विनय-पत्रिका के एक पद में गोस्वामीजी कहते हैं—

"हे प्रभो, मेरा हृदय आप का घर है। इसमें काम, क्रोध, मोह, लोभ, अहंकार आदि डाकू डेरा डाले हुए हैं। घोर उपद्रवी हैं। लाख मना करता हूँ, सुनते ही नहीं। बीचोबीच निर्जन मार्ग में मुझे सता रहे हैं। कोई पुकार भी नहीं सुनता। भागने से भी जान बचने की आशा नहीं। जल्दी ख़बर लो। ये लुटेरे तुम्हारा ही घर लूट रहे हैं।"

कहिये, कितनी अच्छी विनोदपूर्ण विनय है! कैसी दयनीय दीनता है! फिर देखिए—

"हे नाथ, मेरा हठी मन अपनी ज़िद्द नहीं छोड़ता। लाख शिक्षा देता हूं, अपनी ही मौज के माफ़िक काम करता है। जैसे युवती प्रसव-वेदना का दारुण शूल भूल कर प्रसन्नतापूर्वक पुनः पति के साथ रमण करती है, वैसे ही मेरा मन भी भव-भीति को भूल कर संसार में फँस जाता है। लालची कुत्ता जिस प्रकार घर-घर हाँड़ी ढूँढ़ता और मार खाता फिरता है, पर कभी लज्जित नहीं होता,

१. "भगति-सुतिय कल करन बिभूषन"—तुलसी।

उसी प्रकार यह मूढ़ मन भी कुमार्ग पर ठोकरें खा कर फिर उसी ओर से जाना चाहता है। कोटि यत्न करके हार गया; बड़ा प्रबल है—अजेय है। तुम्हीं उर-प्रेरक हो। यह तभी मानेगा, जब तुम स्वयं इसे मना करोगे।"

प्रार्थना का कैसा अच्छा ढंग है! स्वामी को रिझाने की कितनी सुंदर रीति है! ऐसे ही अनेक पद हैं; पद क्या हैं, प्रेम-महानद हैं, धारा शान्त है, जल शीतल है, तरंगें उज्ज्वल हैं, प्रवाह अगाध है, तट रमणीय हैं। एक बार भी अवगाहन कर लीजिए, पवित्रता पिण्ड न छोड़ेगी, आनन्द रोम-रोम में रम रहेगा।

रामचरित-मानस में जहाँ कहीं मर्यादापुरुषोत्तम भगवान् रामचंद्र का ख़ास प्रसंग आया है, वहाँ अपनी रामभक्ति का परिचय देने से गुसाँईजी ज़रा भी नहीं चूके हैं। बीहड़ से बीहड़ और ऊबड़-खाबड़ मार्ग में भी राम-भक्ति से लदा हुआ कविता-शकट निर्विघ्नता-पूर्वक खींच ले गए हैं। सचमुच उन्होंने बड़ी दूरदर्शिता से काम लिया है। शायद उन्हें इस बात की आशंका थी कि भविष्य में बड़े-बड़े तर्कशास्त्री उत्पन्न होंगे। इसीलिये वे राम-प्रसंग में सर्वत्र अतिशय सावधान देख पड़ते हैं। उन्हें हमेशा सन्देह बना रहता था कि हमारे पाठक कहीं रामचंद्रजी का ईश्वरत्व भूल न जायँ। पाठकों के मन में किसी प्रकार की शंका उत्पन्न होने की संभावना देखते ही वे सावधान हो जाते थे, और उस संदिग्ध स्थल पर, श्रीरामचंद्र का अतुलनीय ऐश्वर्य और प्रभुत्व वर्णन करके, पाठकों को इस तरह प्रभावान्वित कर देते थे कि कम-से कम उनके मनको अवश्य ही पूर्ण संतोष हो जाता था। विना पूर्ण संतोष प्राप्त किये, वे आगे बढ़ते ही न थे। गुसाईंजी के इस दैन्य में ग़ज़ब का जादू है। ऐसी अविरल राम-भक्ति, ऐसी अलौकिक रामोपासना, इतनी शीतल दीनता, इतनी मधुर विनय, कहीं ढूँढ़े भी नहीं मिलती। उन्होंने विनय-पत्रिका में सभी देवताओं को विनती करके केवल निष्काम रामभक्ति की याचना की है। रामचरित्र-मानस में भी देवता, गंधर्व, यक्ष, किन्नर, भूत, प्रेत, पिशाच,

ऋषि, मुनि, भक्त, कवि, मनुज, दनुज, संत, असंत, चराचर मात्र से एक मात्र निष्काम रामभक्ति के लिये ही प्रार्थना की है। समस्त जगत् को 'सियाराममय' जानकर सादर सविनय प्रणाम किया है। जहां निर्गुण ब्रह्म और आत्म-ज्ञान की चर्चा करने लगे हैं, वहां भी—उस सन्नाटे में भी, उस चतुर्दिक्-शून्य अनन्त विकट मार्ग में भी—रामभक्ति की गठरी सिर पर रखे निःशंक सानन्द चले गये हैं और तारीफ़ यह कि अन्तिम लक्ष्य-पर्यन्त सकुशल पहुँच गये हैं।

मालूम होता है, गुसाँईजी ने अध्यात्म रामायण की प्रणाली का अनुकरण किया है। अध्यात्म रामायण शिवजी की बनाई हुई है। शिवजी में गुसाईंजी की बड़ी श्रद्धा थी। वे उनको राम-भक्ति-दाता मानते थे। उन्हें साक्षात् विश्वास-रूप माना है। इसलिये अपने 'मानस' की कथा का आधार अधिकतर अध्यात्म रामायण को ही रखा है। कहीं-कहीं 'अध्यात्म' और 'मानस' की कथा की गति में भेद है। नहीं तो आद्यंत समानता है। वाल्मीकीय रामायण में श्री रामचंद्रजी का ईश्वरत्व प्रच्छन्न है। इसलिये उसका सहारा बहुत कम लिया है।

अध्यात्म रामायण में, बाल-लीला के प्रसंग में, लिखा है—

"धावत्यपि न शक्नोति स्प्रष्टुं योगिमनोगतिम्"

इसी तरह गुसाईंजी ने भी लिखा है—

कौशल्या जब बोलन जाई, ठुमुकि ठुमकि प्रभु चलहिं पराई।
निगम नेति शिव अंत न पावा, ताहि धरै जननी हठि धावा॥

अध्यात्म रामायण में, चित्रकूट के प्रसङ्ग में, लिखा है—

वशिष्ठः शांत वचनैः शमयामास तां शुचम्।
ततो मंदाकिनीं गत्वा स्नात्वा ते वीतकल्मषाः॥

गुसाईंजी ने भी लिखा है—

करि पितुक्रिया वेद जस बरनी, भे पुनीत पातक-तम-तरनी।
जासु नाम पावक अघ-तूला, सुमिरत सकल सुमंगल मूला।
शुद्ध सो भयउ साधु सम्मत अस, तीरथ आवाहन सुरसरि जस।

इसी प्रकार दो-चार उदाहरण और देखिये—

सूपनखा की शिकायतें सुनकर रावण सोचता है—

वध्यो यदि स्यां परमात्मनाऽहं, वैकुण्ठ राज्यं परिपालयेऽहं।
विरोधबुद्ध्यैव हरिं प्रयामि, द्रुतं न भक्त्या भगवान् प्रसीदेत्॥

—अध्यात्म०

खर दूषन मो सम बलवंता, तिन्हैं को मारै बिनु भगवंता।
सुररंजन-भंजन-महि भारा, जौ जगदीस लीन्ह अवतारा॥
तो मैं जाइ बैर हठि करिहौं, प्रभु शर ते भवसागर तरिहौं।
होइ भजन नहिं तामस देहा, मन क्रम बचन मंत्र दृढ़ एहा॥

—मानस०

मेघनाद द्वारा हनुमानजी के बाँधे जाने पर अध्यात्म में लिखा है—

यस्य नाम सततं जयंति येऽज्ञानकर्मकृतबंधनं क्षणात्।
सद्य एव परिमुच्य तत्पदं यांति कोटिरविभासुरं शिवम्॥
तस्यैव रामस्य पदांबुजं सदा हृत्पद्ममध्ये सुनिधाय मारुतिः।
सदैव निर्मुक्त समस्त बंधनः किं तस्य पाशैरितरैश्च बंधनैः॥

अब इसी को गोस्वामीजी संक्षेप में दुहराते हैं—

जासु नाम जपि सुनहु भवानी,
भव-बंधन काटहिं मुनि ज्ञानी।
तासु दूत बंधनतर आवा,
प्रभु कारज लगि आपु बंधावा॥

इसी प्रकार अध्यात्म में (लंकादाह के बाद) सुंदर कांड के चौथे सर्ग के अंत में लिखा है—

यन्नामसंस्मरणधूतसमस्तपापास्तापत्रयानलमपीह तरंति सद्यः।
तस्यैव किं रघुवरस्य विशिष्ट दूतः संतप्यते कथमसौ प्रकृतानलेन॥

इतने बड़े मज़मून को गुसाइंजी ने एकही चौपाई में बाँधा है—

जाकर अनल भक्त तेहि सिरजा।
जरा न सो तेहि कारन गिरिजा॥

अध्यात्म में बालि के मुख से भी श्रीरामचंद्र का ईश्वरत्व प्रतिपादित कराया गया है। तारा से बालि ने कहा है—

रामो नारायणः साक्षादवतीर्णोऽखिलप्रभुः।
भूभारं हरणार्थाय श्रुतं पूर्वं मयानघे॥

फिर बालि ने अंत समय में स्वयं रामजी से ही कहा है—

यन्नाम विवशो गृह्णन् म्रियमाणः परंपदम्,
याति साक्षात्स एवाद्य मुमूर्षोर्मे पुरःस्थितः॥

इन्हीं बातों को गुसाईंजी ने भी बालि से कहवाया है—

कहा बालि सुनु भीरु प्रिय, समदर्शी रघुनाथ।
जो कदापि मोहि मारिहैं, तौ पुनि होब सनाथ॥

पुनश्च—

जासु नामबल शंकर कासी, देत सबहिं सम गति अविनासी।
मम लोचनगोचर सो आवा, बहुरि कि अस प्रभु बनै बनावा।

ऐसे ही सैकड़ों उदाहरण हैं। किन्तु यहाँ बिम्ब-प्रतिबिम्ब भाव वाली रचनाएँ उद्धृत करना अभिप्रेत नहीं है। आशय केवल इतना ही है कि प्रत्येक प्रसंग में श्रीरामचंद्र के ईश्वरत्व का समर्थन करके गुसाईंजी ने अपनी अमोघ रामभक्ति को चरितार्थ किया है। कहीं कहीं भक्ति-भागीरथी की वेगवती धारा में स्वाभाविकता बह गई है, आदर्श मानव-चरित्र-चित्रण का सौष्ठव कुछ कम हो गया है और पाठकों के संदिग्ध हो जाने की शंका सद्यन्त हो उठी है। वे प्रत्येक प्रकरण में, पग-पग पर, पाठकों को सचेत करते गये हैं कि याद रहे, श्रीरामचंद्र पूर्णब्रह्म के पूर्णावतार हैं, लोकोपकारार्थ नर-लीला कर रहे हैं।

बाल-लीला का वर्णन करते हुए विद्याभ्यास के सम[य] लिखते हैं—

जा की सहज स्वास श्रुति चारी।
सो हरि पढ़ यह कौतुक भारी॥

फिर उसी प्रसंग में मृगया को लक्ष्य कर लिखते हैं—

जे मृग राम बान के मारे।
ते तनु तजि हरि लोक सिधारे॥

मुनिवर विश्वामित्रजी के अस्त्र-दान पर कहते हैं—

तब ऋषि निज नाथहिं जिय चीन्हा।
विद्यानिधि कहँ विद्या दीन्हा॥

ऋष्याश्रम-निवास के समय—

भक्ति हेतु बहु कथा पुराना।
कहैं विप्र यद्यपि प्रभु जाना॥

जनकपुर की रंगशाला में—

लव निमेष महँ भुवन-निकाया,
रचै जासु अनुसासन माया।
भक्त हेतु सोइ दीनदयाला,
चितवत चकित धनुष-मखसाला।
कौतुक देखि चले गुरु पाहीं।
जानि बिलम्ब त्रास मन माहीं।
जासु त्रास डर कहँ डर होई,
भजन-प्रभाव दिखावत सोई।

पुनः गुरुवर की सेवा के समय—

मुनिवर शयन कीन्ह तब जाई।
लगे चरन-चाँपन दोउ भाई,
जिन के चरन-सरोरुह लागी,
करत विविध जप जोग विरागी।
ते दोउ बंधु प्रेम जनु जीते,
गुरु पदकमल पलोटत प्रीते।

अब अधिक उदाहरणों की आवश्यकता नहीं है। प्रत्येक काण्ड के प्रसंग में ऐसे-ऐसे अनेक उदाहरण सहज-सुलभ हैं। बात

-बात में भक्ति का पुट है। पग-पग पर ईश्वरत्व का संकेत है। हर जगह दीनता और दासता की सूचना है। प्रसंगानुकूल घटना की घनघोर घटा-घिर आती है, उस में रह-रह कर भक्तिभावना की दामिनि-द्युति दमक उठती है। कथा-वर्णन की धवल धारा बहती चली जा रही है, एकाएक भक्ति का भँवर पाठकों को आत्मविस्मृति के अगाध गर्भ में दबोच देता है।

श्रीरामचंद्र का सौंदर्य-वर्णन करने लगे हैं, सुध-बुध खो बैठे हैं! अपने साथ-साथ भावुक वाचकवृन्द को भी ले बीते हैं। अद्भुत सृष्टि है। अभूतपूर्व दृश्य है। आलम ही निराला है। भक्ति-रस का ऐसा लबालब प्याला जिस किसी रसज्ञ के होठों से लग जायगा, कृतकृत्य हो जायगा, जीवन्मुक्त हो जायगा, इस में संदेह की गुञ्जायश नहीं। वह भक्त-प्रवर नारद की तरह अनायास कह उठेगा—

"अहं त्वद्भक्तभक्तानां तद्भक्तानां च किङ्करः।
अतो मामनुगृह्णीष्व मोहयस्व न मां प्रभो॥"

शिवपूजन सहाय

## स्थायी समिति का तीसरा अधिवेशन

मिति चैत्र शु० १५-सं० १९८१ वि० तदनुसार ता० १९-४-२४ ई० को बिहार प्रान्तीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन का अधिवेशन पटना में निम्नलिखित सदस्यों की उपस्थिति में हुआ—

१—श्रीयुत सूर्यप्रसाद महाजन, गया
२— " रामानन्द सिंह, छपरा
३— " बदरीनाथ वर्म्मा, पटना
४— " साँवलिया बिहारीलाल वर्म्मा, छपरा
५— " पं० राधाकृष्ण झा, पटना
६— " रामधारी प्रसाद, मुजफ्फ़रपुर
७— " अध्यापक पं० रामरत्न, प्रयाग

१—श्रीयुत पं० रामरत्न अध्यापकजी के प्रस्ताव तथा श्रीयुत बदरीनाथ वर्म्मा के समर्थन से श्रीमान् पं० राधाकृष्ण झा सभापति बनाये गये।

२—विषय १ (प्रान्तीय सम्मेलनों की नियमावली पर विचार) पर विचार हो कर यह निश्चय हुआ कि चूंकि प्रान्तीय सम्मेलनों के नियमों पर कहीं से कोई सम्मति नहीं आई, अतएव आगामी बैठक तक यह स्थगित किया जाय।

इसके बाद यह बैठक सर्वसम्मति से ता० २०-४-२४ ई० की रात में फिर बैठने के लिये स्थगित कर दी गई।

स्थगित बैठक पुनः ता० २०-४-२४ ई० की रात में निम्नलिखित सज्जनों की उपस्थिति में हुई—

१—श्रीयुत राय बहादुर राम रणविजय सिंह, पटना
२— " बद्रीनाथ वर्म्मा, पटना
३— " पं० राधाकृष्ण झा, पटना
४— " सांवलिया बिहारीलाल वर्म्मा, छपरा
५— " मौ० लतीफ़ हुसैन, मुजफ्फरपुर
६— " रामधारी प्रसाद, मुजफ्फरपुर
७— " अध्यापक पं० रामरत्न, प्रयाग

१—श्री० पं० राधाकृष्णजी झा ने सभापति का आसन सुशोभित किया।

२—बिहार में "संग्रहालय" के लिये धन एकत्र करने की बात पर यह निश्चय हुआ कि स्थायी समिति की यह बैठक निश्चय करती है कि स्थायी समिति की ओर से संग्रहालय के लिए, बिहार-प्रदेश में घूम कर धन एकत्र करने के लिए, एक डेप्युटेशन का प्रबन्ध किया जाय और बिहार प्रादेशिक सम्मेलन से लिख-पढ़कर उपयुक्त समय और डेप्युटेशन के बिहार प्रान्तीय सदस्यों के सम्बन्ध में निर्णय किया जाय।

३—संग्रहालय के लिए बिहार में सामग्री एकत्र करने की बात पर विचार कर यह निश्चय हुआ कि—

स्थायी समिति बिहार में संग्रहालय के लिए सामग्री एकत्र करने के लिए निम्नलिखित सज्जनों की एक उपसमिति बनाती है—

१—श्रीयुत पं० राधाकृष्ण झा ( नियोजक )
२— " सांवलिया बिहारीलाल वर्म्मा, छपरा
३— " शुकदेव सिंह, आरा

तदनन्तर सभापति को धन्यवाद देने के बाद अधिवेशन समाप्त हुआ।*

**रामजी लाल शर्मा**
प्रधान मंत्री

---

* देर से प्राप्त होने के कारण स्थायी-समिति का यह कार्य-विवरण विलम्ब से प्रकाशित हो रहा है। —सम्पादक

# स्थायी समिति का पाँचवाँ अधिवेशन

स्थायी समिति का पाँचवाँ अधिवेशन मि० श्रावण शुक्ल ३ रविवार, तदनुसार ३—८—२४ को, मध्याह्नोत्तर ४॥ बजे सम्मेलन-कार्यालय में निम्नलिखित सदस्यों की उपस्थिति में हुआ—

१—श्री पुरुषोत्तमदास टंडन
२— " पं० देवीप्रसाद शुक्ल
३— " वियोगीहरि
४— " पं० इन्द्रनारायण द्विवेदी
५— " पं० लक्ष्मीनारायण नागर
६— " पं० लक्ष्मीधर वाजपेयी
७— " पं० रामरत्न अध्यापक
८— " पं० रामजीलाल शर्म्मा

(१) सर्व-सम्मति से श्रीपुरुषोत्तमदासजी टंडन ने सभापति का आसन सुशोभित किया।

(२) हिन्दी-विद्यापीठ के लिए जो भूमि ४० वर्ष के पट्टे पर ३००) वार्षिक भाड़े में ली है उसकी स्वीकृति के लिए विचार हुआ। सर्वसम्मति से ४० वर्ष वाला पट्टा स्वीकृत हुआ।

(३) पुस्तक-प्रकाशन-समिति के लिए निम्नलिखित उपनियम स्वीकृत हुए—

(१) हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के उद्देश्य (ठ) को कार्यरूप में परिणत करने के लिये, प्रति वार्षिक अधिवेशन के पश्चात्, स्थायी समिति अपने ६ सदस्यों की एक पुस्तक-प्रकाशन-समिति बनायगी और उन्हीं ६ सदस्यों में एक को संयोजक नियत करेगी।

(२) समिति का कोरम ३ सदस्यों का होगा।

(३) उत्तमा परीक्षा के निबन्धों को छोड़ कर सम्मेलन के द्वारा प्रकाशित होनेवाली शेष समस्त पुस्तकें समिति की आज्ञा के बिना प्रकाशित न की जायँगी।

(४) सम्मेलन की ओर से यही समिति ग्रन्थकारों, टीकाकारों तथा संग्रह और सम्पादन-कर्त्ताओं का पारिश्रमिक निश्चित करेगी।

(५) प्रकाशित होनेवाली पुस्तकों की छपाई की दर, कागज़, मूल्य, आकार, प्रेस और कितनी प्रतियाँ छपेंगी, इन सब बातों का तथा इन सब बातों से सम्बन्ध रखनेवाली अन्य बातों का निर्णय भी पुस्तक-प्रकाशन-समिति ही करेगी।

(६) आवश्यक नवीन ग्रन्थों का निर्माण, प्राचीन ग्रन्थों और सम्मेलन से प्रकाशित पुस्तकों का समयानुसार सम्पादन संशोधनादि करवाना इसी समिति के अधिकार में होगा।

(७) सुलभ-साहित्य-माला की सब पुस्तकें यथासम्भव एक ही आकार-प्रकार की छापी जायँगी। इस माला की बड़ी पुस्तकों में बड़ौदा-नरेश श्रीमान् सयाजी राव गायकवाड़ का चित्र लगा दिया जायगा।

(४) प्रबन्ध-परिष्कार-परिषद् की रिपोर्ट के विषय में सर्व-सम्मति से निश्चय हुआ कि यह रिपोर्ट, पं० इन्द्रनारायणजी द्विवेदी के विरोध के साथ, छपा कर सब सदस्यों के पास भेजी जाय और पुनः स्थायी समिति के अगले अधिवेशन में विचारार्थ उपस्थित की जाय।

(५) पं० लक्ष्मीधरजी वाजपेयी स्थायी समिति के स्थानीय ८ सदस्यों में से एक सदस्य थे। परन्तु अब वे प्रचार-मन्त्री नियत हो गये हैं। अतः उनका सदस्य-स्थान रिक्त था। उसके लिए सर्व सम्मति से श्री बा० केदारनाथजी गुप्त स्थायी समति के सदस्य निर्वाचित हुए।

(६) कटिंग मैशीन के मँगाने के सम्बन्ध में निश्चय हुआ कि अभी कटिंग मैशीन न मँगाई जाय।

७—प्रधान-मंत्री ने सूचना दी कि वर्धा के श्रीमान् सेठ जमनालाल जी बजाज का २५०) सम्मेलन के स्थायी सदस्य होने के लिए शुल्क स्वरूप सम्मेलन-कार्यालय को प्राप्त हो गया और सदस्य-फ़ार्म भी भरकर आ गया। इसलिए सेठजी स्थायी सदस्य बना लिये जायँ।

श्री टंडनजी के प्रस्ताव और श्री पं० रामजी लालजी शर्म्मा के अनुमोदन करने पर सर्व-सम्मति से श्रीमान् सेठ जमनालालजी स्थायी सदस्य निर्वाचित किये गये।

८—बा० रामदासजी गौड़ का वह प्रस्ताव उपस्थित हुआ, जिसमें उन्होंने नियमों में परिवर्त्तन पर विचार करने के लिये एक उपसमिति के बनाये जाने के लिए स्थायी समिति से अनुरोध किया था।

सर्वसम्मति से निश्चय हुआ कि गौड़जी से प्रार्थना की जाय कि आप अपना नियम-सम्बन्धी कोई संशोधन पहले उपस्थित करें, तब उस पर विचार किया जायगा।

९—वियोगी हरिजी ने "सम्मेलन-पत्रिका" के सम्बन्ध में अपनी योजना उपस्थित की। उस योजना के सम्बन्ध में निश्चय हुआ कि—

(क) पत्रिका का आकार (साइज) न बदला जाय। जो है, वही रहे।

(ख) अब तक पांच फ़ार्म छपते थे, पर अब भाद्र सं० ८१ से ६ फ़ार्म की पत्रिका छपा करे।

(ग) मूल्य वही रहे, जो अब तक था।

(घ) स्थायी समिति के प्रत्येक अधिवेशन का कार्य-विवरण पत्रिका में पूर्ववत् छपता रहे और परीक्षा-समिति, पुस्तक-प्रकाशन-समिति आदि अन्य जितनी समितियाँ, उपसमितियां हों, उनका कार्य-विवरण भी, यदि उस समिति के मंत्री या संयोजक छपाना चाहें, तो पत्रिका में छपा करें।

(१०) पं० इन्द्रनारायणजी द्विवेदी ने अदालतों में नागरी-प्रचार के सम्बन्ध में प्रस्ताव उपस्थित किया। इस पर सर्वसम्मति से निश्चय हुआ कि सम्मेलन के जो उपदेशक आजकल बाहर भ्रमण कर रहे हैं, उनको सूचना दी जाय कि वे जहां-जहां जायें, वहां अदालतों में नागरी-प्रचार के सम्बन्ध में भी आन्दोलन करें और ऐसा उद्योग करें, जिससे अदालतों में नागरी का यथेष्ट प्रचार हो जाय।

रामजी लाल शर्मा
प्रधान मन्त्री

बारहवां वर्ष ] इस अंक से "सम्मेलन-पत्रिका" का बारहवां वर्ष आरंभ होता है। अभी तक पत्रिका जिस रूप में निकलनी चाहिए वैसी नहीं निकली। इसका प्रकाशन मुख्यतः सम्मेलन-सम्बंधी समाचारों के ही लिए हो रहा है, लेखादि तो गौण रूपसे छापे जाते हैं। इस वर्ष से, जहाँ तक हो सकेगा, कुछ अच्छे-अच्छे साहित्यिक लेख भी प्रकाशित किये जायँगे। विचार है कि प्राचीन अप्रकाशित गद्य-पद्यात्मक साहित्य के अंश, शोध संबंधी नोट और समालोचनात्मक टिप्पणियाँ छापी जायँ। देखें, मंगलमूर्ति भगवान् हमारे इस विचार को कहाँ तक सफल करते हैं।

गतवर्ष हिन्दी के जिन सुपुत्रों ने अपना अमूल्य समय देकर अपने सुललित लेखों और कविताओं द्वारा हमारा हाथ बटाया है उनके प्रति हम हार्दिक कृतज्ञता प्रकाश करते हैं। विश्वास है, इस वर्ष भी हमें वे अपनी अप्रतिम सहायता द्वारा कृतार्थ करेंगे।

❧❧❧

सभापति कौन हो ?] सम्मेलन का पंद्रहवां अधिवेशन समीप आ गया है। सभापति के आसन के लिए हमारे सहयोगियों और मित्रों ने जिन सज्जनों का नामोल्लेख किया है, उनमें मुख्य राधाचरण गोस्वामी, अमृतलाल चक्रवर्ती और गौरीशंकर हीराचंद ओझा हैं। भाई परमानंद एम. ए, माधवराव सप्रे आदि हिंदी-हितैषी राजनीतिक पुरुषों की ओर भी कुछ मित्रों की दृष्टि गयी है। हमारी सम्मति में इस वर्ष किसी वयोवृद्ध साहित्यमर्मज्ञ पुरुषरत्न को ही

सभापति का आसन सुशोभित करना चाहिए। हमारी दृष्टि में तो, नर्मदा के कंकड़-पत्थर की तरह, सभी हिंदी-साहित्य-सेवी शिव रूप हैं, पर ज्योतिर्लिङ्गस्वरूप कीर्त्तिकलाधर वयोवृद्धों की ही अर्चना अधिक श्रेयस्कारिणी होगी। विशेषज्ञों की दृष्टि पूज्य गोस्वामीजी की ओर जा रही है। है भी यह मणि-कांचन का संयोग।

❧❧❧
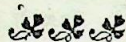
देहरादून] सम्मेलन का अधिवेशन देहरादून में होगा। दिव्य हिमांचल के अंक में वाग्देवी की यह अर्चना अवश्य ही अलौकिक फलदात्री होगी। स्वागत-कारिणी के माननीय अध्यक्ष अपनी देवोपम तपस्या द्वारा सम्मेलन में नवीन प्राण संचार करेंगे, इसमें संदेह नहीं। क्या वह दिन हमारे लिए वास्तव में स्वर्गीय न होगा, जब हम हिमांचल के प्रेम-प्राङ्गण में बैठ कर भगवती वीणापाणि की पत्र-पुष्प से पूजा कर अपने को कृतकृत्य समझेंगे ?

❧❧❧

सत्यनारायण स्मृति] सहृदयवर बनारसीदासजी चतुर्वेदी स्वर्गीय महाकवि सत्यनारायण की 'स्मृतिरक्षा' के लिए प्रशंसनीय उद्योग कर रहे हैं। आपने इस संबंध में बहुत कुछ काम किया भी है। आप सम्मेलन के "बृहत् संग्रहालय" में "सत्यनारायण-कुटीर" के नाम से एक कमरा बनवाने का प्रस्ताव कर रहे हैं। इस में आप कविरत्न का तैल चित्र और उन की सामग्री रखने का प्रबंध करेंगे। चतुर्वेदीजी इस अक्षय "स्मारक" के लिए बड़े ही अधीर हो रहे हैं। प्रेममूर्त्ति सरल हृदय सत्यनारायण के प्रति उन की यह स्नेहाधीरता वास्तव में प्रत्येक साहित्य-सेवी के लिए अनुकरणीय है। हमें आशा है कि हिंदी-साहित्य का प्रत्येक रसिक इस कुटीर में 'व्रज-कोकिल' की कलित कुहूक सुनने के लिए दौड़ता हुआ आयगा।

❧❧❧

पोथियों की ज़ब्ती ] हिन्दी-पुस्तक एजेन्सी [कलकत्ता] द्वारा प्रकाशित और रामदास गौड़-लिखित हिंदी की तीसरी, चौथी, पांचवीं तथा छठी पोथी की ज़ब्ती का समाचार प्रायः प्रत्येक हिंदी-हितैषी के कान तक पहुँच चुका है। इस पर आन्दोलन भी अच्छा हुआ है और हो रहा है। ज़ब्ती हमें यही सूचना देती है कि सरकार "राष्ट्र-भाषा" हिन्दी की उन्नति नहीं चाहती। छोटे छोटे बच्चों के सरल हृदय-क्षेत्र में राष्ट्रीय बीजों का बोना उसे खल रहा है। वह हमारे बालकों को "भारतीय" बनाना नहीं चाहती। वह तो उन्हें ऐसी विषैली और गंदी पुस्तकें हृदयंगम कराना चाहती है, जिनके द्वारा वे अपने जन्म-जात स्वत्वों को भूल कर कठपुतली की तरह उस के आगे नाचते रहें। समझ में नहीं आता कि गौड़जी की पोथियों में ऐसा कौन सा राजविद्रोह भरा है कि जिन्हें पढ़ कर लड़कों के बागी हो जाने की शंका थी? हाँ, उन में देशविद्रोह बेशक नहीं है। पर अब यह संकीर्णहृदय सरकार "देश-विद्रोही" पैदा भी नहीं कर सकती। वे दिन गये। भारतीयों ने 'स्वतंत्रता' का स्वर्गीय नाद सुन लिया है। वे स्वतंत्रता-देवी का दिव्य दर्शन करके ही दम लेंगे। हिन्दी भी 'राष्ट्र भाषा' हो चुकी है। अब स्वदेश-भाषा का पाशवी बल से दमन नहीं हो सकता। हमारी सम्मतिमें सरकार की ज़ब्ती संबंधी आज्ञा की उपेक्षा कर हिंदी-हितैषियों को गौड़ जी की ही पोथियां अपने बच्चों को पढ़ानी चाहिए।

❧❧❧

हिंदी-विद्यापीठ ] सम्मेलन के "हिंदी-विद्यापीठ" का पठन-पाठन कार्य कुछ दिनों से बंद सा हो गया था। अब यह कार्य फिर आरंभ हो गया है। सम्मेलनने यमुना के उस पार ४० वर्ष के पट्टे पर, ३००) वार्षिक भाड़े में राजा सिसेंडी की भूमि ली है। यहां चार-पांच सुन्दर इमारतें और खेती के लिए कछार पर कुछ उपजाऊ भूमि भी है। कालिन्दी-कूलपर विद्यापीठ के लिए यह स्थान बड़ा ही उपयुक्त है। यहां वही बालक शिक्षा-लाभ करेंगे, जो नियमपूर्वक विद्यापीठ में डट कर रह सकेंगे। पाठ्य विषयों के अतिरिक्त उन्हें कृषि,

शिल्प आदि का भी व्यावहारिक ज्ञान कराया जायगा। यदि विद्यापीठ अपने उच्च उद्देश्यों में सफल हुआ तो निःसंदेह उसके विद्यार्थी बलिष्ठ, ब्रह्मचारी, सदाचारी, स्वावलम्बी, साहित्य-सेवी और सच्चे देशभक्त बन कर निकलेंगे। करुणासागर परमात्मा से हमारी प्रार्थना है कि वह इस विद्यापीठ के जीवन-प्रवाह को कलिन्द-नन्दिनी की विमल धारा के समान ही शान्त, पुनीत, रसमय और अजर-अमर बनावे।

## सभापति का चुनाव

सभापति के चुनाव के सम्बन्ध में यदि पुराने सच्चे साहित्य-सेवियों को सम्मान प्रदान करना सम्मेलन अपना गौरवावह धर्म मान सके तो इस वर्ष के सभापति के स्थान के लिए पं० राधाचरण गोस्वामी की उपयुक्तता का विचार स्थायी समिति को सम्यक् रीति से करना उचित है। साहित्यिक दृष्टि से, मेरी समझ में, उक्त विद्वान् इस पद के लिए सर्वथा उपयुक्त हैं। सम्भव है, ब्रजभाषा की विशाल संपत्ति सम्बन्धिनी कोई अनूठी गूढ़ बातें वह जनता को बता सकें, अथवा कोई और रहस्य प्रकाश में ला सकें। ब्रजभाषा और खड़ी हिन्दी की काव्योपयोगिता पर उनकी तुलनात्मक सम्मति वर्त्तमान काल में एक आदरणीय और विचारणीय वस्तु होगी। यदि उनको सभापति बनाया जाय तो अपने अभिभाषण में इस विषय पर अपनी सविस्तर सम्मति संयुक्त करने के लिए उनसे विशेष प्रार्थना करनी चाहिए। गोस्वामीजी उन महान् शक्तियों में हैं जिन्होंने वर्त्तमानकालीन साहित्य के आरम्भ में विस्मृत मातृभाषा के मृतप्राय कलेवर में चिरकाल तक अदम्य अध्यवसाय के साथ जीवन का संचार किया है। ऐसे योग्य पुरुष को अपने सभापतियों में सम्मिलित करके सम्मानित न करना सम्मेलन की भारी भूल होगी, जिसका पश्चात्ताप उसे युगों तक करना पड़ेगा।

श्रीधर पाठक

---

# बर्मा में हिन्दी का प्रचार

यों तो रंगून में हिन्दी-साहित्य के प्रचारार्थ कई संस्थाएँ वर्त्तमान समय में कुछ न कुछ कार्य अवश्य ही कर रही हैं, परन्तु पूर्वकाल में इस भाषा का यहां जैसा अभाव था उसको दूर करने के लिए स्थानीय मारवाड़ी-समाज ने लगभग १२ वर्ष से निज व्यय द्वारा परोपकारार्थ एक ऐसा पुस्तकालय स्थापित कर रक्खा है कि ऐसी संस्था इस प्रान्त भर में दूसरी नहीं है, जिसमें साहित्य के हर एक विषय की पुस्तकें अधिक संख्या में पायी जाती हों। दैनिक, साप्ताहिक, पाक्षिक और मासिक २८ समाचार-पत्र भी आया करते हैं। पुस्तकालय-भवन में पधारने और वहाँ का कार्य देखने से बड़ा ही आनन्द प्राप्त होता है। मैं यहां के मारवाड़ी-समाज को कोटिशः धन्यवाद देता हुआ ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि ऐसे सद्कार्यों में सर्वदा वह समाज का उत्साह बढ़ाता रहे। ब्रह्म देश में पधारनेवाले साहित्य-प्रेमी महानुभावों से भी मेरा सादर अनुरोध है कि वे भी पुस्तकालय का निरीक्षण करना न भूलें।

राजनाथधर द्विवेदी, रंगून

---

# सत्यनारायण कविरत्न
का
# जीवनचरित और स्मारक

सत्यनारायणजी के स्वर्गवास होने पर उनके लिये चार कार्य्य करने का विचार मैंने किया था:—

(१) उनकी फुटकर कविताओं का संग्रह करना,
(२) उनके सब ग्रन्थों का संग्रह एक जिल्द में प्रकाशित करना,
(३) उनका तैल-चित्र बनवाना और उसका उद्घाटन-संस्कार किसी सहृदय महानुभाव द्वारा कराना,
(४) जीवनी लिखना।

इनमें पहला कार्य्य "हृदयतरङ्ग" के रूप में सर्वसाधारण के सम्मुख पहुंच चुका है। दूसरे कार्य्य का भार सत्यनारायणजी के पुराने मित्र अध्यापक. पं० रामरत्नजी को सौंप दिया गया है। उनका एक सुन्दर चित्र भी बनवा लिया गया और इस तेल-चित्र का उद्घाटन-संस्कार भारत-भक्त ऐण्ड्रूज़ महोदय द्वारा "भारती-भवन" ( फीरोज़ाबाद ) में करा दिया गया। इस प्रकार तीसरा कार्य्य भी पूर्ण हुआ। सत्यनारायणजी के मित्रों तथा प्रेमियों को यह सुनकर हर्ष होगा कि सत्यनारायणजी की जीवनी भी अब मैंने लिखकर तयार कर ली है और जीवनी की भूमिका लिखाने के लिये शीघ्र ही पंडित पद्मसिंहजी शर्मा की सेवा में जा रहा हूँ।

जीवनी में अन्तिम अध्याय है "सत्यनारायणजी की कुछ स्मृतियां" इसमें मैंने कविरत्नजी के मित्रों और प्रेमियों के लेखों के आवश्यक अंश उद्धृत कर दिये हैं। ख़ासकर अनेक छोटी-छोटी बातें, जिनसे जीवनी पर प्रकाश पड़ता है, संग्रह की गयी हैं। यदि कोई महाशय सत्यनारायणजी के विषय में ऐसी बातें जानते हों, अथवा यदि किसी के पास उनके पत्र हों तो वे कृपा कर मुझे भेज दें।

सत्यनारायणजी के स्मारक के लिये मैंने यह विचार किया है कि हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के "संग्रहालय" में एक कमरा 'सत्य नारायण-कुटीर' के नाम से बनवा दिया जावे। यदि सत्यनारायण जी के मित्रों को यह प्रस्ताव स्वीकृत हो तो सम्मेलन के अधिकारियों से लिखा-पढ़ी की जायगी। सम्मेलन की स्वीकृति आने पर उपर्युक्त स्मारक के लिये रुपया इकट्ठा करना कोई कठिन बात न होगी।

इस विषय में जिन्हें कुछ परामर्श देना हो, वे मेरे साथ पत्र-व्यवहार करें। उनकी इस कृपा के लिये कृतज्ञ होऊँगा।

बनारसीदास चतुर्वेदी
फीरोज़ाबाद (आगरा)

---

## द्विवेदीजी की ऐतिहासिक भूल

श्रीयुत पण्डित महावीरप्रसादजी द्विवेदी ने अपने रचे हुए सचित्र हिन्दी महाभारत के २८वें पृष्ठ में लिखा है "धृतराष्ट्र के एक वेश्या भी थी। उससे भी एक पुत्र हुआ। उसका नाम पड़ा युयुत्सु।" यह उनकी भूल है।

क्योंकि महाभारत के आदि पर्व के अन्तर्गत संभव पर्व के १२६ वें अध्याय में लिखा है कि

"गान्धार्यां क्लिश्यमानायामुदरेण विवर्धता ॥८५॥
वैश्या सा त्वम्बिका पुत्रं कन्या परिचचार ह।
तया समभवद्राजा धृतराष्ट्रो यदृच्छया ॥८६॥
तस्मिन्संवत्सरे राजन्धृतराष्ट्रान्महायशाः।
जज्ञे धीमांस्ततस्तस्यां युयुत्सुः करणो नृप ॥८७॥"

"बढ़ते हुए पेट से गान्धारी के क्लिष्ट होनेपर वैश्य की प्रसिद्ध कन्या धृतराष्ट्र की परिचर्या करने लगी। यदृच्छा से राजा धृतराष्ट्र ने उससे गमन किया, तो हे जनमेजय! उस वर्षभर में धृतराष्ट्र से उस वैश्य-पुत्री के महायशस्वी बुद्धिमान युयुत्सु पुत्र उत्पन्न हुआ।" टीकाकार लिखता है कि वह जाति में करण के समान होने से करण कहलाया। क्योंकि वह क्षत्रिय से वैश्या में उत्पन्न हुआ था न कि वैश्य से शूद्रा में।

गणेशीलाल सारस्वत

---

## हिन्दी-प्रेमियों की सेवा में

### आवश्यक निवेदन

हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन का पन्द्रहवाँ महाधिवेशन कार्तिक शुक्ल ११, १२ और १३ सं० १९८१ को देहरादून में होगा। सम्मेलन की सफलता के लिए देहरादून की हिन्दी-प्रेमी जनता यथाशक्ति प्रयत्न कर रही है। पारस्परिक राग-द्वेष को भूल कर देहरादून की

जनता का यह कर्त्तव्य है कि सम्मेलन की सफलता के लिये वह पूरा उद्योग करे।

सम्मेलन के उपदेशक पं० प्रभुदयालुजी श्रावण से देहरादून-सम्मेलन का ही कार्य कर रहे हैं। कार्तिक मास के अन्त तक वे वहीं काम करेंगे। आज कल उपदेशकजी देहरादून के आसपास बिजनौर, मुरादाबाद, सहारनपुर, मुजफ्फरनगर, मेरठ आदि स्थानों में भ्रमण करके स्वागत-समिति के सदस्य बनाने, धन-संग्रह करने और सम्मेलन में सम्मिलित होने के लिए हिन्दी-प्रेमी जनता को उत्साहित करने का काम बड़े परिश्रम से कर रहे हैं। आशा है, उपदेशकजी इसी प्रकार उत्साह के साथ उद्योग करके सम्मेलन को सफलता प्राप्त कराने में पूरा परिश्रम करेंगे। साथ ही मैं हिन्दी-प्रेमी जनता की सेवा में सप्रेम निवेदन करता हूँ कि वह उपदेशकजी को पूरी सहायता दें और ऐसा उद्योग करें, जिससे देहरादून का सम्मेलन विशेष सफलता से सम्पन्न हो।

निवेदक—

रामजी लाल शर्मा
प्रधान मंत्री

---

## हिन्दी-विद्यापीठ

लगभग पाँच वर्ष हुए, इन्दौर के अष्टम सम्मेलन के मंतव्यानुसार प्रयाग में हिन्दी-विद्यापीठ की स्थापना हुई थी। इसका उद्घाटन काशी-निवासी सौम्यमूर्ति बाबू भगवानदासजी ने किया था। इस विद्यापीठ का मुख्य आदर्श था बालकों को आत्म-निर्भर, स्वस्थ, उच्च शिक्षित और स्वतंत्र बनाना। प्रत्येक विद्यार्थी विद्यापीठ से भूमिका एक टुकड़ा पाकर स्वयं अपने भोजन के लिए अन्न और फल पैदा करे एवं अपने निर्वाह के लिए वस्त्र बुने; और इस तरह स्वावलंबी बन उच्च शिक्षा और औद्योगिक कलाओं में पारंगत हो,

यही इस विद्यापीठ का उद्देश्य था। उस समय उपयुक्त स्थान न मिलने के कारण इस बृहद् रूप में तो विद्यापीठ न आ सका, पर उसका एक छोटा सा रूप सामने लाया गया। उसमें सिर्फ़ सम्मेलन की प्रथमा और मध्यमा परीक्षा के ही पठन-पाठन की व्यवस्था की गयी। अन्य कई प्रचार-संबंधी आवश्यक कार्यों में संलग्न रहने के कारण सम्मेलन के संचालकों का ध्यान विशेष रूप से विद्यापीठ की ओर न जा सका। पर शिक्षा के अन्तर्जगत् में इसकी विचार-धारा प्रतिक्षण प्रबल वेग से बहने लगी। आज हम अपने आदर्श-क्षेत्र में उस दिव्य धारा का पुनीत प्रवाह देख रहे हैं, जिसकी ओर हमारी आँखें उत्कण्ठा से लगी हुई थीं। विश्वास है, हम इस पवित्र प्रवाह में अवगाहन कर जागरित, प्रबुद्ध और उन्नत होंगे।

प्रयाग में, महेवा गाँव के समीप, यमुना-तटपर, राजा सिसेंडी के स्थान में, हमें विद्यापीठ का नव्य दर्शन हुआ है। यहाँ शिक्षा देवी की प्राण-प्रतिष्ठा भाद्रपद कृष्णा १३ गुरुवार को हुई। प्रातःकाल सरस्वती-पूजन, विद्यारंभ और हवन हुआ; और संध्या समय थोड़े से हिन्दी-हितैषी मित्रों को प्रीति-भोज दिया गया। यह प्रारंभोत्सव अभी साधारण रीति से ही किया गया है। महोत्सव तो इसका कुछ दिनों बाद मनाया जायगा; और तभी समस्त साहित्य-सेवियों, हिन्दी-हितैषियों और शिक्षा-प्रेमियों को सादर सप्रेम निमंत्रण दिया जायगा।

यह विद्यापीठ बालकों को स्वस्थ, बलिष्ठ, सदाचारी, स्वावलंबी, उच्चशिक्षित और स्वतंत्र बनाने का ध्येय सदैव सामने रखेगा। ऊँची से ऊँची शिक्षा हिन्दी-माध्यम द्वारा दी जायगी। अँगरेज़ी की भी ऊँची शिक्षा दी जायगी। व्यावहारिक और औद्योगिक कलाओं में भी विद्यार्थी दक्ष कराये जायँगे। स्वात्म-निर्भर हो वे यहाँ शिक्षा लाभ करेंगे। उन्हें हल भोजन देगा और चरखा वस्त्र। सरस्वती, लक्ष्मी और काली—इन तीनों महाशक्तियों का साक्षात्कार कर लेना यहां के ब्रह्मचारियों का चरम लक्ष्य होगा। निर्धन, पददलित,

परतंत्र भारत के लिये और क्या चाहिये ? हाँ, जिस देश में माँ-बाप पेट की आग में झुलसते हुए अपने बालकों को सच्ची और ऊँची शिक्षा नहीं दे सकते, जहाँ के विद्यार्थी केवल पुस्तकीय ज्ञान में पड़कर व्यवहार-कुशलता, सच्चरित्रता, स्वाधीनता और आस्तिकता भूल से गये हैं, जहां उन्हें अष्टभुज-धारिणी मुक्तहासिनी शक्ति का दर्शन स्वप्न में भी दुर्लभ हो गया है, जहाँ करोड़ों दुर्भिक्ष-पीड़ित अस्थि-कंकाल लड़खड़ाते फिरते हैं, उस अभागे देश में, उस परतंत्र भारतवर्ष में, क्या ऐसा विद्यापीठ एक स्वर्गीय आदर्श उपस्थित न करेगा ? क्या इसके द्वारा हमें शुभ्रवसना हंसवाहिनी भगवती वीणा-पाणि का दर्शन न होगा ? क्या इस मंदिर में हम पद्मासना पद्मा के कृपापात्र न बन सकेंगे ? क्या यहाँ शत्रुसंहारिणी मुंडमाल-धारिणी चंडिका अपने छोटे-छोटे बच्चों के हृदयों में ज्वलंत तेज और साहस का संचार न करेगी ? क्या भगवान् मरीचिमाली यहाँ के ब्रह्मचारियों की भालस्थली पर अरुणोदय के साथ ही मंगलोदय न करेंगे ? क्या कलकल-निनादिनी कलिन्दिनी अपनी विमल धारा के समान इस आश्रम में सरसप्रेम की सरल शान्त धारा प्रवाहित न करेंगी ? क्या हमारी इन कवि-कल्पनाओं को अनन्त करुणाब्धि भगवान् गणित के सिद्धान्तों में परिणत न करेंगे ? अवश्य, निःसंदेह ।

तो आइये—अपने जीवन-उद्यान की अछूती कलिकाओं को इस मन्दिर की अधिष्ठात्री देवी के चरणों पर चढ़ाइये, अपने छोटे-छोटे बालकों को मोह-ममता छोड़ कर यहाँ भेजिए । यहाँ उनके मस्तक पर कल्याणरूपा शक्ति का हाथ रहेगा, यहाँ वे प्रकृति की गोद में खेलेंगे, वीणा-पुस्तक-धारिणी वाग्देवी का साक्षात्कार करेंगे, मातृभूमि को स्वतंत्र और स्वाधीन बनायँगे और अर्थ, धर्म एवं काम का संपादन करते हुए अंत में मोक्ष-लाभ करेंगे । "सा विद्या या विमुक्तये" इस "स्वर्ण वाक्य" का अनुभव उन्हें यहीं हो सकेगा । भेजिए—उनकी हड्डियाँ यहाँ दधीचि के ऐसी होंगी, उनके नेत्रों से दिव्य ज्योति फूट निकलेगी; हृदय सरस, सुदृढ़ और उदार होगा;

और उनका मुखमंडल अखंड ब्रह्मचर्य से निर्धूम अग्निखंड के समान प्रज्ज्वलित रहेगा। यहाँ तो उनका रूप ही बदल जायगा। क्या संदेह कि यहाँ के ब्रह्मचारी धूल-भरे हीरे या गुदड़ी के छिपे लाल निकलें। क्या संदेह कि इन्हीं के द्वारा हमें स्वाधीनता का दिव्य दर्शन हो।

वियोगी हरि

## बुद्ध-चरित (काव्य)

लेखक—श्रीयुत पंडित रामचंद्र शुक्ल; प्रकाशक—काशी नागरी प्रचारिणी सभा, काशी; पृष्ठ-संख्या २८४; काग़ज बढ़िया एंटिक, छपाई उत्तम; रेशम जिल्द—मूल्य २॥)

अँगरेज़ी बौद्ध साहित्य में सर एडविन आर्नल्ड कृत 'लाइट आफ़ एशिया' नामक काव्य ग्रन्थ का स्थान बहुत ऊँचा है। उसी के आधार पर सहृदयवर शुक्लजी ने यह बुद्धचरित विरचित किया है। यद्यपि यह ग्रन्थ 'लाइट आफ़ एशिया' का हिन्दी-काव्य के रूप में अवतरण है, तो भी इसका ढँग ऐसा रखा गया है कि यह एक स्वतंत्र हिन्दी-काव्य के रूप में लिया जा सकता है। एक तो संसार-मान्य भगवान् बुद्धदेव का दिव्य चरित, दूसरे अनन्य बुद्धभक्त महानुभाव आर्नल्ड की सरस रचना, तीसरे शुक्लजी की मधुर वाणी का विमल विकास! उत्तरोत्तर लोकोत्तरानंददायी यह कलित काव्य वास्तव में हृदयंगम करने योग्य है। हिन्दी-संसार में इस स्वर्गीय ग्रन्थरत्न का जितना ही अधिक आदर हो उतना ही थोड़ा है।

शुक्लजी ने आदि में ५५ पृष्ठ का जो वक्तव्य लिखा है, वह पढ़ने ही योग्य है। आपकी काव्य-भाषा की विवेचना, आप की भाषा-विज्ञता और साहित्य-मर्मज्ञ का अच्छा परिचय देती है। प्राकृत, बैसवाड़ी, अवधी, खड़ी, पंजाबी, भोजपुरी, मैथिली, बँगला, मारवाड़ी आदि भाषाओं का पारस्परिक संबंध क्या है, किसका किसके साथ कितना साम्य या अंतर है, उनके मूल और कृत्रिम रूप क्या हैं आदि कई आवश्यक बातों पर बड़े ही सूक्ष्म परिशीलन

द्वारा विचार किया गया है। खड़ी, अवधी और व्रजभाषा के व्याकरण का दिग्दर्शन भी द्रष्टव्य हैं। अवधी और व्रजभाषा की कुछ विशेषताओं के दिखाने में लेखक महोदय ने भाषा-विज्ञान से अच्छा काम लिया है। पर व्रजभाषा की अपेक्षा अवधी के ही विशेषता-प्रदर्शन में आप को अधिक सफलता मिली है। व्रजभाषा के महत्व को भी आपने खूब समझा है। वक्तव्य के अंतमें लिखा है—

'ऐसी भाषा को देखते 'व्रजभाषा को जो 'ऐतिहासिक' या 'मरी हुई' कहे उसे अपना अनाड़ीपन दूर करने के लिए दिल्ली भाड़ झोंकने न जाना होगा, मथुरा की एक परिक्रमा से ही काम चल जायगा।

हम इसे यों कहेंगे—

'आज' कल जो व्रजभाषा को 'काव्य के अनुपयुक्त' या 'सड़ी गली' कहे उसे जीर्ण-शीर्ण पोथियों के पन्ने उलटने की ज़रूरत न होगी, शुक्लजी के 'बुद्धचरित' से ही काम चल जायगा।'

कतिपय स्थानों पर थोड़ा बहुत मत-भेद रखते हुए भी हम इस अमूल्य वक्तव्य के मनन करने में प्रत्येक विचारशील पाठक को साग्रह प्रवृत्त करेंगे।

आठ सर्ग का यह काव्य किसी महाकाव्य से कम उत्कृष्ट नहीं है। शैली इतनी रोचक है कि पढ़ते समय हृदय काव्यानंद में परिप्लुत हो जाता है। रस-संचार भी पर्याप्त मात्रा में विद्यमान है। भाषा का सौष्ठव भी शब्द-रत्न के जौहरियों को चमत्कृत करता है। शब्दों की व्यर्थ भरती तो शायद ही कहीं मिले। इन्हीं सब बातों पर सम्यक् प्रकारेण ध्यान देने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि इस ग्रन्थ में मौलिकता का अभाव नहीं है। नमूने के तौर पर नीचे दो-तीन पद्य दिये जाते हैं—

> ह्वै कै परी लाँबी कोऊ बीना लै कपोल तर,
> आँगुरी अरुझि रहीं अब ताइँ तार पर।
> याही रूप जैसे जब कढ़ति सों तान रही,
> भूमि रस जाके झपे लोचन विशाल वर॥

लैकै परी कोऊ मृगशावक हिये तें लाय ;
सोय गयी टुँगत कुसुम पाय तासुं कर।
कुतरों कुसुम लसै कामिनी के कर बीच ,
पाती लपटानी हरी हरिन-अधर तर ॥

× × × × × ×

आँसुन पलक भारी, कोमल कपोल छीन,
बिरह की पीर अधरान पै लखाति है।
चपि रही चीकने चिकुर की चमक चारु,
वेणी बीच बँधि नेकु नाहिं बगराति है ॥
आभरनहीन पीरी देह पै है सेत सारी,
खचित न जापै कहुं हेम नग पांति है।
पाय पिय बोल गति हरति जो हंसन की,
चरन धरत सोइ आज थहराति है ॥

× × × × × ×

रैन मानो घाटिन में, बासर पहारन पै,
ठमकि सुनत बानी प्रभु की सुधा भरी।
बीच में सलौनी साँझ अप्सरा सो मानो कोउ,
मति गति खोय थकी मोहित सी जो खरी ॥
छिटके घुवा से घन कुंतल कलाप मानो,
तारावलि मोतिन की लरी बिखरी परी।
अर्द्धचंद्र सोइ मानो बेंदी विलसति भाल,
तम को पसार मानो नील सारी पातरी ॥

विश्वास है, साहित्य रसिकजन इन मणियों को देख कर अवश्य ही बुद्धचरित-रत्नाकर में डूबने के लिए लालायित होंगे।

हमारी तुच्छ सम्मति में बुद्धचरित में व्यवहृत 'अंघड़, परदो, वाँ, टहरत' आदि कतिपय शब्द व्रजभाषा के उत्तम शब्द नहीं कहे जा सकते। 'सब बंधुन की आँसुन में' यहां आँसू स्त्रीलिंग में प्रयुक्त हुआ है। यह प्रयोग कुछ-कुछ खटकता-सा है। समस्त ग्रन्थ

में ऐसी प्रयोगावली इतनी कम मिलेगी कि रचना-सौष्ठव देख कर उस पर ध्यान ही न जायगा।

बुद्धचरित जैसा परमोत्कृष्ट ग्रन्थ प्रकाशित करने के लिये हम काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा का हृदय से अभिनंदन करते हैं। इस काव्य की सुललित भाषा और स्वर्गीय भाव देखकर किस साहित्य-रसिक के हृदय में रस-संचार न होगा? अस्तव्यस्त पद्यावली जोड़नेवाले और ऊट-पटाँग तुक्कड़ कवियों को तो अवश्य ही इस ग्रन्थ से कुछ शिक्षा लेनी चाहिये, और उन्हें दाद देनेवाले मम्मटों को भी उन पर से 'युगान्तर पैदा करने' का दावा उठा लेना चाहिये। हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन और हिन्दू-विश्व-विद्यालय ने इसे अपने-अपने पाठ्यक्रम में स्थान देकर अपनी गुणग्राहकता का वास्तव में अच्छा परिचय दिया है। हम तो चाहते हैं कि इस ग्रन्थ का समादर प्रत्येक विश्व-विद्यालय में होना चाहिए।

## प्राप्ति-स्वीकार

नीचे लिखी पुस्तकें भी प्राप्त हो गयी हैं। प्रेषक महोदयों को अनेक हार्दिक धन्यवाद!

**१-झाँसी डिस्ट्रिक्ट बोर्ड की वार्षिक रिपोर्ट**—( सन् १९२३ व २४ )

**२-कुँवर चाँदकरणजी शारदा का भाषण**—( बीकानेरी माहेश्वरी बाल विधवा के विवाह के समय का भाषण ) प्रकाशक—माहेश्वरी विधवा सहायक सभा, अजमेर।

**३-राम विजय तरंग नाटक**—( प्रथम भाग ) लेखक-श्रीयुत मुंशी ईश्वरीप्रसादजी हेडमास्टर ( पेंशनर ); प्रकाशक—श्रीमुंशी केदार सहाय श्रीवास्तव्य, महोबा; पृष्ठसंख्या १९२; मूल्य १)

**४-प्रमाणपूर्ण प्राचीन धर्म**—( प्रथमभाग ) लेखक श्रीयुत पंडित पुरुषोत्तम देव सत्यधारी; प्रकाशक—मैनेजर, वेदविद्यासागर औषधालय, कटरा साहब खाँ, इटावा; पृष्ठसंख्या ३२; मूल्य ।)

—सम्पादक

# हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के कार्य-विवरण

तथा

## लेखमालाएँ

| | | | |
|---|---|---|---|
| प्रथम सम्मेलन की लेखमाला | ॥।) | प्रथम वर्ष का कार्य विवरण | ।) |
| द्वितीय (मध्यमा में स्वीकृत) | (अप्राप्य) | द्वितीय " " | (अप्राप्य) |
| तृतीय सम्मेलन की लेखमाला | ।॥) | तृतीय " " | ।=) |
| चतुर्थ " " | ॥।) | चतुर्थ " " | ॥) |
| पंचम " " | ॥) | पंचम " " | ॥।) |
| षष्ठ " " | ॥।) | षष्ठ " " | ।) |
| सप्तम " " | ॥=) | सप्तम " " | ।=) |
| अष्टम " " | १) | अष्टम " " | ।) |
| नवम " " | १॥) | नवम " " | ।=) |
| दशम " " | ।≡) | दशम " " | ॥) |
| द्वादश " " | १) | | |
| त्रयोदश " " | १) | | |

## सम्मेलन द्वारा प्रकाशित उत्तमोत्तम पुस्तकें

| | |
|---|---|
| अकबर की राज्य-व्यवस्था ... ... ... | १) |
| सूर्य सिद्धान्त ... ... ... ... | १।) |
| इतिहास ( चिपलूणकर ) ... ... ... | ≡) |
| हिन्दी-भाषा-सार ... ... ... ... | ॥।) |
| प्रथमालंकार-निरूपण ... ... ... ... | =) |
| द्वितीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के सभापति का भाषण ... | ।) |
| तृतीय " " " " ... | ।) |
| मद्रास प्रान्त में हिन्दी-प्रचार का विवरण ... ... | -) |
| हिन्दी-विद्यापीठ ... ... ... ... | -)॥ |
| नागरी अंक और अक्षर ... ... ... | ≡) |
| हिन्दी का सन्देश ... ... ... ... | -) |
| वृत्त चन्द्रिका ... ... ... ... | =) |
| तेरहवें हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के सभापति का भाषण ... | =) |

# हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग

## ५०) का पारितोषिक

जो शिक्षा-विधिज्ञ विद्वान्, देशोन्नति को ध्यान में रख कर, "हिन्दी-विद्यापीठ के लिए शिक्षण-पद्धति" पर हिन्दी में निबन्ध लिखकर आगामी दशहरे तक सम्मेलन-कार्यालय में भेजेंगे, उनकी परीक्षा श्रीपुरुषोत्तमदासजी टण्डन, प्रो० व्रजराजजी और श्री गंगाप्रसादजी, ये तीन सज्जन करेंगे। सर्वोत्तम निबन्ध के विद्वान् लेखक को देहरादून के सम्मेलन में ५०) का पारितोषिक भेंट किया जायगा। आशा है, शिक्षाशास्त्र-निष्णात विद्वान् 'हिन्दी-विद्यापीठ' के लिए एक समयोपयोगी, व्यावहारिक और स्वातन्त्र्यपूर्ण शिक्षा-क्रम निबन्ध के रूप में लिख कर भेजने का उद्योग करेंगे।

रामजीलाल शर्मा
प्रधान मंत्री

---

हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग द्वारा प्रकाशित।
सूरजप्रसाद खन्ना के प्रबन्ध से हिन्दी-साहित्य प्रेस प्रयाग में मुद्रित

तार का पता—"सम्मेलन" प्रयाग रजिस्टर्ड नं० ए. ६२६.

भाग १२ अङ्क २; आश्विन १९८१

संपादक

**वियोगी हरि**

प्रकाशक

**हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग**

वार्षिक मूल्य २) प्रत्यंक ≈)

# विषय-सूची

# सम्मेलन-पत्रिका के नियम

१—'पत्रिका' प्रत्येक मास की पूर्णिमा को प्रकाशित हो जाती है। यदि किसी मास को कृष्णा १० तक उस मास की पत्रिका न मिले, तो पत्र द्वारा सूचना देनी चाहिये।

२—'पत्रिका' का वर्ष भाद्रपद से प्रारम्भ होता है। वर्ष के बीच में, किसी भी मास में, ग्राहक होने पर उस वर्ष के पूर्व मासों के अंक अवश्य लेने पड़ते हैं। डाक-व्यय-सहित पत्रिका का वार्षिक मूल्य २=) है। २) मनीआर्डर द्वारा भेजने से अधिक सुभीता होता है।

३—यदि दो-एक मास के लिए पता बदलवाना हो तो डाकख़ाने से प्रबन्ध कर लेना चाहिए, और यदि बहुत दिनों के लिए बदलवाना हो, तो हमें उसकी सूचना देनी चाहिए, अन्यथा 'पत्रिका' न मिलने के लिए हम उत्तरदायी न होंगे।

४—लेख, कविता, समालोचना के लिये पुस्तकें—"सम्पादक सम्मेलन पत्रिका, पोस्ट बाक्स नं० ११ प्रयाग" के पते से वा प्रबन्ध सम्बन्धी पत्र—"प्रचार-मन्त्री हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, पोस्ट बाक्स नं० ११ प्रयाग" के पते से और पत्रिका का मूल्य, विज्ञापन की छपाई आदि का द्रव्य "अर्थमंत्री, हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन पोस्ट बाक्स नं० ११ प्रयाग" के पते से आना चाहिए।

५—प्राप्त कविता और लेखों के घटाने, बढ़ाने एवं प्रकाश करने या न करने का पूर्ण अधिकार सम्पादक को है।

---

## सम्मेलन-पत्रिका में
## विज्ञापन की दर

| | १ मास | ६ मास | एक वर्ष |
|---|---|---|---|
| एक पृष्ठ | ५) | २५) | ४५) |
| आधा पृष्ठ | ३) | १५) | २८) |

## आवश्यक सूचना

६—सम्मेलन द्वारा प्रकाशित पुस्तकों की बिक्री पर कमीशन की दर निम्नलिखित अनुसार होगी।

(क) १०) से नीचे की पुस्तकों पर कुछ भी कमीशन न दिया जायगा।

(ख) १०) से २५) तक की पुस्तकों पर दो आना रुपया कमीशन दिया जायगा।

(ग) २५) से ऊपर १००) तक २०) रुपया सैकड़ा।

(घ) १००) से ऊपर, २५) सैकड़ा।

(ङ) ५००) या अधिक की पुस्तकें लेने पर तृतीयांश कमीशन अर्थात् ३३।-)४ दिया जायगा।

(नोट) सम्मेलन से सिर्फ़ सम्मेलन द्वारा प्रकाशित पुस्तकें बेची जाती हैं। अतः सर्वसाधारण को चाहिए कि वे सम्मेलन से केवल सम्मेलन द्वारा प्रकाशित ही पुस्तकें मगावें। अन्य प्रकाशकों की पुस्तकें हमारे यहाँ नहीं मिलतीं।

## सुलभ-साहित्य-माला

इस माला का उद्देश्य यह है कि हिन्दी में उत्तमोत्तम ग्रन्थों के सुन्दर और सस्ते संस्करण इस ढंग से निकाले जायँ कि जिससे हिन्दी-प्रेमी इन ग्रन्थ-रत्नों को सुलभता से पा सकें। यह माला प्राचीन साहित्य का विशेष रूप से उद्धार करने की चेष्टा कर रही है। इसमें प्राचीन साहित्यक, दार्शनिक, सामाजिक, राष्ट्रीय आदि उत्तमोत्तम ग्रन्थ सिद्धहस्त लेखकों को उचित पुरस्कार देकर लिखाये और प्रकाशित किये जाते हैं। अब तक इस माला में निम्न लिखित पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं—

## १—भूषण-ग्रन्थावली ( सटिप्पण )

भूषण कवि हिन्दी में वीर रस के एक मात्र कवि हैं। इनकी कविता में भाव हैं, ओज है और प्राण है। परन्तु अधिकांश में वह इतनी क्लिष्ट है कि उसका समझना कठिन हो जाता है। इस कठिनाई को दूर करने के लिए हिन्दी के सुपरिचित विद्वान् पं० रामनरेशजी त्रिपाठी ने क्लिष्ट स्थानों पर टिप्पणी दे दी हैं और कठिन शब्दों का अर्थ लिख दिया है। कविता में सूत्र रूप से वर्णित ऐतिहासिक घटनाओं का भी यथास्थान स्पष्ट उल्लेख कर दिया गया है।

यदि भारतीय वीरता का पता चलाना हो, यदि जातीय ज्योति को जगमगाना हो, यदि साहित्यक आनन्द लूटना हो, तो इस ग्रन्थावली को एक बार अवश्य पढ़ जाइए। इसमें अलङ्कार [illegible] का अनुपम ग्रन्थ शिवराजभूषण, शिवा-बावनी, छत्रसाल-दशक तथा भूषण कवि के फुटकर कवित्तों का संग्रह किया गया है। यह ग्रन्थावली साहित्य-सम्मेलन की मध्यमा परीक्षा में भी स्वीकृत है। पृष्ठ-संख्या १८४, मूल्य ॥=)

## २—हिन्दी-साहित्य का संक्षिप्त इतिहास

लेखक—श्री० मिश्रबन्धु

हिन्दी भाषा और साहित्य का क्रमशः विकास कैसे हुआ, उसने कौन-कौन से रूप पकड़े, किन-किन बाधाओं एवं साधनों का उसे सामना करना पड़ा, वर्त्तमान परिस्थिति क्या है आदि गम्भीर विषयों का पता इस पुस्तक से भली भाँति चलता है। अपने ढंग की यह पहली पुस्तक है। "मिश्रबन्धु-विनोद" रूपी महासागर से मथन कर यह इतिहासामृत निकाला गया है। यह भी हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की मध्यमा परीक्षा में स्वीकृत है। पृष्ठसंख्या १८८, मूल्य ।=)

---

**पुस्तकें मिलने का पता—हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, पोस्ट बाक्स नं० ११ प्रयाग।**

## ३—भारतगीत

लेखक—पं० श्रीधर पाठक

पाठकजी की रसमयी-रचना से किस सहृदय साहित्य रसिक का हृदय रसप्लावित न होता होगा? आपकी गणना वर्त्तमान हिन्दी-साहित्य के महारथियों में है। आपकी राष्ट्रीय कविता नवयुवकों में जातीय जीवन सञ्चार करनेवाली है। प्रस्तुत पुस्तक पाठकजी के उन गीतों का संग्रह है, जिन्हें उन्होंने समय-समय पर स्वदेश-भक्ति की उमंग में आकर लिखा हैं। इसकी प्रस्तावना साहित्य-मर्मज्ञ बाबू पुरुषोत्तमदासजी टंडन ने लिखी है। यह पुस्तक राष्ट्रीय विद्यालयों के बड़े काम की है। पृष्ठसंख्या ६४, मूल्य ≡)

## ४—भारतवर्ष का इतिहास

### ( प्रथम खण्ड )

लेखक—श्री मिश्रबन्धु

यह इतिहास प्राचीन और अर्वाचीन काल से सम्बन्ध रखता है। इसमें पूर्व वैदिक काल से सूत्र काल तक अथवा ६०० संवत् पूर्व से ५० संवत् पूर्व तक की घटनाओं का उल्लेख है। अब तक हिन्दी में भारतवर्ष का सच्चा इतिहास एक भी नहीं था। विदेशियों के लिखे हुए अपूर्ण और पक्षपातयुक्त इतिहासों के पढ़ने से यहां के नवयुवकों को अपने देश के प्रति अश्रद्धा उत्पन्न हो जाती है। ऐसे समय में हिन्दी के सुप्रसिद्ध लेखक मिश्रबन्धुओं ने बड़ा काम किया है। मध्यमा परीक्षा के इतिहास विषय में यह पुस्तक निर्दिष्ट है। जिल्दवाली पुस्तक, जिसकी पृष्ठसंख्या ४०६ है, मूल्य केवल २॥)

---

**पुस्तकें मिलने का पता—हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, पोस्ट बाक्स नं० ११ प्रयाग।**

## ५—राष्ट्रभाषा

संपादक—श्री 'भारतीय हृदय'

कुछ समय हुआ, महात्मा गांधी ने यह प्रश्न किया था कि, क्या हिन्दी राष्ट्र-भाषा हो सकती है ? इसके उत्तर में भारत के प्रत्येक प्रान्त के बड़े-बड़े विद्वानों और नेताओं ने पक्षपातरहित सम्मतियाँ दी थीं, कि निःसन्देह हिन्दी ही राष्ट्रभाषा होने योग्य है। उन्हीं सब अमूल्य सम्मतियों का संग्रह इस पुस्तक में किया गया है। इसके विरोधियों का भी यथेष्ट खण्डन हुआ है। इस विषय के व्याख्यानों का भी इसमें सङ्कलन कर दिया गया है। हिन्दीभाषा के प्रेमियों के लिए यह पुस्तक प्राणस्थानीय नहीं तो क्या है ? पृष्ठसंख्या २००, मूल्य ॥)

## ६—शिवा-बावनी

महाकवि भूषण के वीररस सम्बन्धी ५२ कवित्तों का उत्तम संग्रह। इन कवित्तों के टक्कर के छन्द शायद ही वीररस के साहित्य में अन्यत्र कहीं मिलें। महाराष्ट्रपति शिवाजी की देशभक्ति और सच्ची वीरता का यदि चित्र देखना हो, तो एक बार इस छोटी सी पोथी का पाठ अवश्य कर जाइए। शब्द एवं भाव-काठिन्य दूर करने के लिये कवित्तों की सुबोधिनी टीका, टिप्पणी और अलङ्कार आदि साहित्य से सम्बन्ध रखनेवाली आवश्यक बातों का इसमें उल्लेख कर दिया गया है। साहित्य-सम्मेलन की प्रथमा परीक्षा में यह पुस्तक रखी गयी है। पृष्ठसंख्या ५४, मूल्य ≡)

## ७—सरल पिङ्गल

ले० — { श्री पुत्तनलाल विद्यार्थी
श्री लक्ष्मीधर शुक्ल, विशारद }

इस पुस्तक में पिङ्गलशास्त्र के गूढ़ रहस्यों को सरल और सुन्दर भाषा में समझाने का प्रयत्न किया गया है। छन्दों के उत्तम उदाह-

रण भी दिये गये हैं। अन्त में संस्कृत छन्दों का भी संक्षेप में दिग्दर्शन करा दिया गया है। पृष्ठ संख्या ५८, मूल्य ।)

## ८—सूरपदावली

(सटिप्पण)

श्री सूरदासजी के १०० अत्युत्तम पदों का अपूर्व संग्रह, जो हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की परीक्षा में स्वीकृत भी है। मूल्य ।)

## ९—भारतवर्ष का इतिहास

(द्वितीय खण्ड)

लेखक—श्री मिश्रबन्धु

इसमें ५०० संवत् पूर्व से १२५० संवत् तक की घटनाओं का वर्णन किया गया है। भारतवर्ष के उत्थान-पतन के क्रम का पता इस पुस्तक से जैसा कुछ चलता है, यह पढ़ने से ही मालूम होगा। हिन्दू-समाज की उन्नति और अवनति, इस देश में स्वदेशी और विदेशी भावों का आविर्भाव तथा धार्मिक जीवन की महत्ता आदि जानने योग्य आवश्यक विषयों का ज्ञान इससे पूर्णतः हो सकता है। सुन्दर छपाई, कपड़े की जिल्द, पृष्ठसंख्या ४४८, मूल्य २)

## १०—पद्य-संग्रह

संपादक { श्री ब्रजराज एम. ए., बी, एस, सी., एल. एल. बी.
श्री गोपालस्वरूप भार्गव एम. एस. सी.

आधुनिक खड़ी बोली के प्रसिद्ध-प्रसिद्ध कवियों की कविताओं का सुन्दर संग्रह। ये कविताएँ विद्यार्थियों के बड़े काम की हैं। संग्रह सामयिक और उपादेय है। यह पुस्तक हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की प्रथमा परीक्षा के साहित्य में स्वीकृत है। पृष्ठ संख्या १२[illegible] मूल्य ।≡)

पुस्तकें मिलने का पता—हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, पोस्ट बाक्स नं० ११ प्रयाग।

## ११—संक्षिप्त सूरसागर

सम्पादक—श्री वियोगी हरि

सूरदासजी रचित सूर-सागर से ५०० पद-रत्न चुन कर इसमें एकत्र किये गये हैं। जहाँ तक हो सका है, कई प्रतियों से पदों का पाठ शुद्ध किया गया है। प्रत्येक पद की पाद-टिप्पणी भी लगा दी गयी है। इसकी प्रस्तावना हिन्दी-साहित्य के महारथी सुप्रसिद्ध विद्वान्

**श्री राधाचरणजी गोस्वामी**

ने लिखी है। सागर की थाह लेना सहज नहीं है। उसे पार कौन कर सकता है? तथापि बिना शोभा देखे रहा नहीं जाता। अब तक सब के अनुशीलन करने योग्य सूरसागर का सुन्दर और सुलभ संस्करण नहीं निकला था। लोग इसके रसास्वादन के लिये लालायित हो रहे थे। सम्मेलन ने इस अभाव को दूर कर हिन्दी-साहित्य-रसिकों की पिपासा शान्त करने की यथाशक्ति चेष्टा की है। पुस्तक के अन्त में लगभग १०० पृष्ठ की सूरदासजी की जीवनी तथा काव्य-परिचय जोड़ा गया है। उनकी जीवनी की मुख्य-मुख्य घटनाओं का पूरा-पूरा उल्लेख आगया है। कविता की सुन्दरता भी पर्याप्त रूप से दिखला दी गई है। पदों में आई हुई अन्तर्कथाएँ भी लिखी गयी हैं। यह पुस्तक हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की उत्तमा परीक्षा में स्वीकृत है। एण्टिक कागज़ का जिल्ददार संस्करण, पृष्ठसंख्या ४२५, मूल्य २)

## १२—विहारी-संग्रह

सम्पादक—श्री वियोगी हरि

कविवर विहारीलाल की सतसई से प्रथमा परीक्षा के विद्यार्थियों के लिए यह छोटा सा संग्रह तैयार किया गया है। जहाँ तक सम्भव हुआ है, इसमें श्रृंगार रस के दोहों का समावेश नहीं किया गया है, किन्तु ऐसे दोहों का संग्रह किया गया है, जो बिना

किसी सङ्कोच के हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की प्रथमा परीक्षा के परीक्षार्थियों को पढ़ाए जा सकते हैं। पृष्ठसंख्या ६४, मूल्य ≡)

## १५—ब्रज-माधुरी-सार

सम्पादक—श्री वियोगी हरि—इस पुस्तक का विषय इसके नाम ही से प्रकट होता है। इसमें ब्रजभाषा की कविता का सार सङ्कलन किया गया है। इस संग्रह में चार विशेषताएँ हैं :—

( १ ) इसमें सूरदासजी से लेकर आधुनिक काल के स्वर्गीय सत्यनारायणजी तक की भावपूर्ण कविताओं का संग्रह किया गया है।

( २ ) इसमें कुछ ऐसे कवियों की रचनाओं का रसास्वादन भी कराया गया है जो अभी तक कहीं प्रकाशित नहीं हुई थीं।

( ३ ) इस ग्रन्थ में यथेष्ट पादटिप्पणियां लगा दी गयी हैं, जिनकी सहायता से साधारण पाठक भी लाभ उठा सकते हैं।

( ४ ) इसके प्रारम्भ में प्रत्येक कवि का संक्षिप्त जीवनचरित और उसकी कविता की संक्षिप्त आलोचना भी की गई है।

पृष्ठसंख्या ६३२, मूल्य जिल्दवाले संस्करण का केवल २)

## १६—पद्मावत ( पूर्वार्द्ध )

सम्पादक—श्री लाला भगवानदीन

यह हिन्दी के सुप्रसिद्ध कवि मलिक मुहम्मद जायसी कृत पद्मावत का पूर्वार्द्ध है। इस भाग में पहले खण्ड से लेकर ३४वें खण्ड तक समावेश हुआ है। सम्पादक महोदय ने इस ग्रन्थ में इतनी यथेष्ट पादटिप्पणी लगा दी है कि अब इस प्राचीन काव्य का रसास्वादन करना प्रत्येक कविता-प्रेमी के लिए सुलभ हो गया है। अन्त में एक संक्षिप्त शब्दकोश भी जोड़ दिया गया है। पृष्ठसंख्या लगभग २००; मूल्य साधारण जिल्द का १) और जिल्दवाली का १।)

पुस्तकें मिलने का पता—हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन
पोस्ट बाक्स नं० ११ प्रयाग।

भाग १२ } आश्विन, संवत् १९८१ { अङ्क २

## सत्कर्त्तव्य

चीखि चीखि चसकन से राम-सुधा पीजिये।
राम-चरित-सागर में रोम-रोम भींजिये॥
राग-द्वेष जग बढ़ाइ काहे को छीजिये।
पर दुख्खन देखत ही आपसों पसीजिये॥
तोरि-तारि खैंचि-खाँचि स्रुति को नहिं गींजिये।
जामें रस बन्यो रहै सोइ अर्थ कीजिये॥
बहुत काल संतन के दोऊ चरन मींजिये।
'देव' दृष्टि पाइ बिमल जुग-जुगलौं जीजिये॥

काष्ठ जिह्वा ( देव )

# अनुराग-वाटिका

## पद

नित नित नव रसरीति प्रीति कहु कैसे जाति कही।
नैन. बैन बिन मोल गये बिकि नहिं परतीति रही॥

मधुर परम प्यारी पिय-मूरति अँखियन आय बसी।
मंजु मालती-माल मनों दृग-पुतरिन बिलसि लसी॥

कैधौं कल कमनीय कलाधर-कला बिमल उनई।
किधौं प्रभात कमल-कलियन पै कोमल किरिन छई॥

कैधौं रूप-रासि-रस-रेखा चित्रित चखनि खची।
किधौं ललित लावन्य-लतान्तत कांति-कुटीर रची॥

कबहुँ अमित-आनंद-बेलि हिय-केलि-कुंज लपटी।
कबहुँ रहस-कृत रंगभूमि पै नाचति नेह-नटी॥

कबहुँ निर्झर झरत दृगनतें भरत सुरत-सरसी।
बिगसत भाव-कंज मन-मधुकर गुंजत मधु-दरसी॥

अति अगाध प्रेमामृत-नीरधि, लगन-लहर लहरी।
मो मन-मीन लीन तहँई नित बिलसत छबि-छहरी॥

❧❧❧
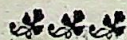
बताऊँ कैसे हिय की पीर।
कसक करेजे कसकति अजहूँ, जैसे तीछन तीर॥

हौं जु गई वा दिन फुलबगिया विहरनि कुसुम-कुटीर।
कालत कुंज के द्वार गयो गड़ि इक काँटो बेपीर॥

वा काँटे की अनी अलीरी, बेध्यो सकल सरीर।
जदपि कमल-केसर लौं कोमल, कीनों तदपि अधीर॥

तबहीतें हौं दरद-दिवानी, बरसत नैननि नीर।
कासों कहौं मरम अब अपना, कौन धरावै धीर॥

❧❧❧

बसूंगी अब कालिन्दी-कूल ।
श्यामल तरल तरंगमाल उर धारि मेटिहौं सूल ॥
कलकल रवमुरली-धुनि सम सुनि हरिहौं हिलगन-हूल ।
पुलकित पुलिन सप्रेम भेंटिहौं पिय भरिभरि भुजमूल ॥

✤✤✤

हठीले, क्यों एते इठलात ।
फोरत मेरी मान-मटुकिया, मन-माखन किम खात ॥
मचलि-मचलि चाहत चित-चकरी काहे न खेलन जात ।
जोरत तोरत मो रस-रसरी मन ही मन मुसकात ॥
बिरुझत कहा लाल लरिकाई झकझोरत दिन रात ।
मनमोहन रसरासि रसिकधन, तुम बिन कछु न सुहात ॥

✤✤✤

(क्रमशः)
वि० ह०

---

# देवजी के एक छन्द में पाठ-भेद

**देवजी का निम्नलिखित छंद बहुत प्रसिद्ध है:—**

सखी के सकोच गुरु सोच मृगलोचनी
रिसानी पिय सों जु उन नेक हंसि छुयो गात ;
देव वै सुभाय मुसकाय उठि गए
यहि ससकि ससकि निसि खोय रोय पायो प्रात ;
को जानै री बीर ! बिनु बिरही बिरह बिथा
हाय हाय करि पछितात न कछू सुहात ;
बड़े बड़े नैनन ते आंसू भरि भरि ढरि
गोरो-गोरो मुख आजु ओरो सो बिलानो जात ।

एक समालोचक महोदय ने ऊपर दिए पाठ को सम्पूर्ण शुद्ध न बतला कर दूसरा ही पाठ स्वीकार किया है । अधिक भेद प्रथम

और चतुर्थ पद में है, अतः उनका स्वीकृत पाठ भी नीचे दिया जाता है:—

सखिन के सोच औ सकोच गुरु लोगन के
तीय रिस कीन्हीं पीय नेकु हँसि छुयो गात ;

× × × × × ×
× × × × × ×
× × × × × ×
× × × × × ×

बड़ी बड़ी आंखिन ते आंसू बड़े ढरि ढरि
गोरे गोरे मुख परि ओरे से बिलात जात ।

इन दोनों पाठों में कौन पाठ अधिक शुद्ध और उपयुक्त है इस पर यहां हम संक्षेप में विचार करते हैं। उपर्युक्त छंद देवजी के निम्नलिखित ग्रंथों में हम को मिला है।

(१) भवानी विलास (२) रस विलास (३) सुजान विनोद (४) शब्द-रसायन (५) सुखसागर तरंग। शब्द रसायन को छोड़ कर शेष चार ग्रन्थ मुद्रित भी हो गए हैं। हमारे पास उन चारों ग्रन्थों की मुद्रित प्रतियां भी हैं और प्राचीन हस्तलिखित प्रतियाँ भी। शब्द रसायन की जो प्रति हमारे पास है, वह संवत् १८६७ की लिखी है। इन सभी प्रतियों में—क्या मुद्रित और क्या अमुद्रित—पहला पाठ ही दिया हुआ है। किसी भी प्रति में समालोचकजी द्वारा स्वीकृत पाठ नहीं है। बाबू जगन्नाथदासजी रत्नाकर ने 'घनाक्षरी-नियम-रत्नाकर' नामक एक पुस्तक छपवाई है। इसमें भी देवजी का उपर्युक्त छंद उद्धृत है और पाठ भी वही है जो अन्य सब प्रतियों में पाया जाता है। ऐसी दशा में यह स्पष्ट है कि पहला पाठ देवजी के ग्रन्थों में मौजूद है और उस हस्तलिखित प्रति तक में मौजूद है जो इस समय ११४ वर्ष की पुरानी है। उधर समालोचकजी वाला पाठ दो एक संग्रह-ग्रन्थों में भले ही हो, पर देवजी के ग्रन्थों में देखने को नहीं मिलता है, फिर भी यदि समालोचक

जी के पाठ से उक्ति में विशेष चमत्कार झलकता हो तो उसी को स्वीकार करना चाहिए। हमारी राय में इस दृष्टि से भी यह पाठ पहले पाठ से घट कर ठहरता है। प्रथम पद में जो पाठांतर है उससे उक्ति में कोई भेद नहीं पड़ता है, इसलिये उसपर हमें कुछ नहीं कहना है। नए पाठ में जब कोई अनोखापन नहीं है तब देव जी के ख़ास ग्रन्थों में पाया जानेवाला पाठ ही हमें माननीय है, इसलिये समालोचकजी ने प्रथम पद में जो पाठांतर दिखलाया है, यद्यपि उसपर हमें कुछ आपत्ति नहीं है, फिर भी वह संग्रह-ग्रन्थ से लिया गया है, इसलिये वैसा प्रामाणिक नहीं है जैसा मूल ग्रंथ में प्राप्त पाठ। अब चौथे पद के पाठ-भेद पर ध्यान दीजिए। छंद में कलहान्तरिता नायिका का वर्णन है। 'गोरो-गोरो मुख आजु ओरो सो बिलानो जात' इस इतने कथन से कई भाव सूचित होते हैं। सब से प्रबल भाव यह है कि प्रतिक्षण मुख निष्प्रभ होता जाता है इससे शोक के बराबर बढ़ते जाने का पता चलता है। ज्यों ज्यों शोक बढ़ता है, त्यों त्यों मुख की आभा फीकी पड़ती जाती है। वर्धमान विरह-दुःख का पता इस वाक्य से भली भांति लगता है। उधर गोरे मुख की ओले से उपमा भी अनूठी है। नायिका का मुख-मण्डल तुषार के समान धवल है। यह तो रंग सादृश्य हुआ, पर यहाँ ओले से उपमा देने में उसके 'बिला जाने' वाले धर्म पर ही लक्ष्य है। 'शब्द रसायन' में यह छंद 'एक देशोपमा' के उदाहरण में उद्धृत भी हुआ है। ओला पृथ्वी पर गिरकर धूलि-धूसरित हो गया है। मुख भी अश्रुप्रवाह के साथ बह कर आनेवाले कज्जल से मलिन है। ओला ज्यों ज्यों गलता जाता है छोटा दिखलाई पड़ता है। मुख भी ज्यों ज्यों शोक बढ़ता है त्यों त्यों निष्प्रभ होता जाता है। ओले के गलने से पानी नीचे ढुलक-ढुलक कर गिरता है। अश्रु-प्रवाह में भी मुख-मण्डल की वही दशा है। सो 'गोरे मुख' और 'ओले' की उपमा में एक अपूर्व चमत्कार है। यह ठीक है कि ओला सब गल जाता है, पर शरीर सब न गलेगा। इसीलिये यह छंद 'एक देशोपमा' का उदाहरण है। यदि सभी बातों में साम्य होता

तो वह 'सर्वांगोपमा' में रक्खा जाता। 'एक देशोपमा' के अंतर्गत होने से यह बात भी साबित हो जाती है कि स्वयं कवि को भी पहला ही पाठ अभीष्ट था। फिर 'ओले' की शरीर के अंगों के साथ यह उपमा पहले-पहल ही देवजी ने नहीं दी है। उनके पहले सूर और तुलसी ने भी शरीरांगों की उपमा ओले से दी है। देखिए:—

(१) रथ पहिचानि बिकल लखि घोरे; गरहिं गात जिमि आतप ओरे।

तुलसी

(२) अब सुनि सूरस्याम के हरि बिनु गरत गात जिमि ओरे।

सूर

आलम कवि ने भी अंग का ओरे के समान बिलाना लिखा है—

'आगि सी झँवाति है जू ओरो सी बिलाति है जू' इत्यादि

निदान सभी दृष्टि से मुख और ओले की उपमा में चमत्कार है, रमणीयता है और कवित्व-गुण है। इसके विपरीत "बड़ी बड़ी आंखिन ते आंसू बड़े ढरि-ढरि, गोरे-गोरे मुख परि ओरे से बिलात जात" इस पाठ में वह बात नहीं है। द्रव और गरम आंसू और ठोस तथा ठंढे ओले की उपमा यों भी अच्छी नहीं है, तिसपर उनको बिला देने के लिये 'मुख' से तात्पर्य 'कपोल' का लेना पड़ता है, और फिर विरह के कारण कपोलों को इतना उष्ण मानना पड़ता है कि उनपर पड़ते ही आंसू बिला जाते हैं। यहां कई बातें अपनी ओर से जोड़नी पड़ती हैं, फिर भी कलहांतरिता का शोक क्षण-क्षण बढ़ रहा है इस भाव की पुष्टि नहीं होती है। आँसू जैसे पहले गिर रहे थे, जैसे पहले गिर कर बिला जाते थे, वैसे ही अब भी बिला रहे हैं। उनमें कोई अधिकता नहीं है। अधिक से अधिक आँसुओं का जैसा वेग आरम्भ हुआ था वैसा ही जारी है। आंसुओं के 'ओरे' से बिलाने में शोक की वृद्धि नहीं सूचित होती है, पर मुख के ओरे के समान बिलाने में वर्धमान शोक की तस्वीर खड़ी हो जाती है। पहले पाठ में यही विशेषता है जो दूसरे में नहीं है।

दोनों पाठों के संबन्ध में हमें जो कुछ निवेदन करना था वह हमने ऊपर दे दिया है। पाठकगण हमारी दलीलों पर स्वयं विचार कर सकते हैं। सब बातों को सोच कर हम पहले पाठ ही को ठीक मानते हैं और समालोचकजी के पाठ को स्वीकार करने में असमर्थ हैं।

कृष्णविहारी मिश्र, बी० ए० एल्-एल्० बी०

---

# स्वामी हरिदासजी का सिद्धान्तसार

श्री स्वामी हरिदासजी महाराज ने एक समय श्रीमुख से भक्तवर बिहारिन दासजी को अपना अनुभवगम्य सिद्धान्त सुनाया था। बिहारिन दासजी ने उस उपदेशामृत को पीछे लिख लिया और उस का नाम 'सिद्धान्तसार' रखा। यह ग्रन्थ ब्रजभाषा में है। इसके और 'चौरासी वैष्णवों की वार्ता' के गद्य में यत्किंचित अंतर है। महात्मा बिहारिन दासजी टट्टी स्थान के पहुंचे हुए संत और अनुभवी कवि थे। इस सिद्धान्तसार ग्रन्थ का प्राकट्य हुए लगभग पौने तीन सौ वर्ष हुए हैं। ग्रन्थ बड़े महत्व का है। छोटे-छोटे सीधे-सादे वाक्यों में स्वामीजी ने उच्चातिउच्च एवं सूक्ष्म तत्वों का बड़ा ही मनोरम निरूपण किया है। ग्रन्थ के आदि में बिहारिन दासजी ने लिखा है—

"सिद्धान्तसार सब सार कौ सार श्रीमुख सौं श्रीस्वामीजू नै काहू समै कह्यौ। सुनौ सो मेरी बुद्धि मैं समायौ। प्राकृत भाषा मैं लिख लियो। सो ततकाल समझौ परै। जैसे अमोलक लाल झीने पट मैं धरियै तो सबही की दृष्टि में आवै। ऐसै यह रत्न अमोल जौ कोटि जतन कीजियै तौऊ हात न आवै। सो सुगम सुलभ दिषरायौ। याकों जापर श्रीललितेजू की पूरन कृपा होय ताकों दिषरावनो। कदाचित और कों दिषरावनो नहीं।"

वास्तव में, सिद्धान्तसार ऐसा ही अमोल रत्न है। भावुकजनों के सम्मुख हम इस ग्रन्थरत्न से कुछ अंश लेकर नीचे देते हैं—

"श्रीरामानुज आचारज सौं सिष्यन नै पूंछी सुरके लच्छन कहा असुर के कहा। श्रीआचारजजू ने कही ग्यानी हरिके स्वरूपको मंडन करतु है। सो सुर। महा असुर के कहा। श्रीआचारजजू ने कही

अग्यानी हरि के स्वरूप को षंडन करतु है। सो महाअसुर। हरिवंस गुसाईं सौं सिष्यन नै पूँछी सुर के लच्छन कहा असुर के कहा। कही पहिचानत नाहीं। हमारे दोऊ पूज्य हैं। रूप गुसाईं सौं जीव गुसाईं नै पूँछी तुम कों प्रथ्वी पै भारी कौन लागतु है। कही भारी पाथर हमारी छाती पै धरौ तौ भारी न लगै। राजा अभक्त हमारी छाती कों सालै है। नारदजू नै भगवान कों देष्यौ ध्यान करतु हैं। पूँछी सब तिहारो ध्यान करतु हैं। तुम कौन कौ ध्यान करतु हौ। उत्तर दिश्रो संतन कौ। जो स्वास षालो है ताको मोल सब ब्रह्मांड है। जो हरिनाम सहित जावै सो अमोल है। सेवक कौ सुभाव गदहा कैसौ होय। गदहा अपनै षामंद की टहल सब दिन करै और षाइवे कों न चाहै और वाकौ षामंद जब चाहै तब टहल करावै। भक्त हू ऐसौ चाहिए। निहकाम होय क भक्ति करै। भक्त कौ सुभाव कुत्ता जैसो चाहिए। जा समै वाकौ षसम ललकारै ततकाल उठि जाइ। वह जा ओर कों बतावै ताहीओर कों चलै। जदपि दीन दुषित असमर्थ होय तदपि ढील न लगावै।"

"दत्त प्रजापति के जग्य में नारदजू बीरी प्रसादी पाय कें गये। सब नै पूँछी एकादसी के दिन बीरी क्यों पाई। नारदजू बोले कै एकादसी मूर्त्तिमान या जग्य में आई है वाही सौं पूँछि देषौ। सबने एकादसी सौं पूँछ्यो। वाने कह्यौ प्रसाद कौ प्रताप ऐसौ जैसे चिंतामनि। मेरे ब्रत कौ प्रताप जैसे कौंड़ी। प्रसाद कौ स्वरूप जैसे समुद्र, मेरे ब्रत कौ स्वरूप जैसे बूंद। प्रसाद हरि के मुखारबिंद सौं परसतु है। हौं हरि के चरन परस की बाँछा राखति हौं।"

"एक जिग्यासू कों राह में ठग मिल्यौ। पूंछी भगवान के दरसन चाहतु हौ। ठग ने कह्यो आँषें मूँद दरसन होंहिगे। जब मैं कहूं तब षोलियौं। ऐसै ही करी। ठग वाकी सब बस्तु लैकें चल्यौ गयौ वाने बहुत दिन ताईं आंषि न खोली। नारदजू आये। कही आंषि षोलौ। उत्तर दयौ कै मेरे गुरू कहैंगे तब षोलंगो। नारदजू बैकुंठ मैं गये। नारायणजू सौं कही। नारायणजू नै बिमान पठायौ। तौऊ आंषि न षोली। नारदजू वाही ठग कों लिवाय लाये।

वाके कहे तें आंषि षोली। नारदजू ने कही बिमान पै बैठौ। कही मेरे गुरू बैठें तौ बैठूँ। नारदजू भगवान नारायन की अग्यासौं दोनौ कों बिमान पै बिठाय कें बैकुंठ लै गये।"

"साधू एक रस प्रसन्न रहै। दुष सुष कौ द्रष्टा है। साधू कौ अहार एक भजन ही कौ चाहिए। और जो प्रसाद ठाकुर देवै ताकों प्रसन्न होय कें पावै। जानै कै आज ये ही बस्तु की ठाकुर की इच्छा भई। सोई आप अंगीकार करी। सोई मोकों प्रसाद दियौ। अब मेरी रसना सौं वाकौ स्वादु लेतु हैं। कोऊ कहै जो वस्तु ठाकुर कों भोग लगतु है तामैं तें रंचक मात्र घटत नाहीं। तौ यह प्राकृत प्रानी भोजन करै तौ घटि जावै। जाकों वै भोजन करैं सो कैसे घटै। प्रसाद बढ़ै। सुंदर स्वादु लगै। भोग कौ प्रमान यही कै सामग्री बढ़ि जावै स्वादु बिसेष होइ।"

सिद्धान्तसार हमें छत्रपुराधीश्वरी गोलोकवासिनी सतत बन्दनीया श्रीमती महारानी साहिबा के पुस्तकालय से प्राप्त हुआ था। अब इसे हमने सम्मेलन के ग्रहत संग्रहालय को भेंट कर दिया है। ऐसे अप्राप्य ग्रन्थों का प्रकाशन हो जाय तो ब्रज-भाषा के गद्य-साहित्य का भी लोगों को कुछ पता चले।

---

# छतरपूर के पान

मध्य भारत में दो प्रान्त हैं, जिनमें एक सरकारी राज्य में है और दूसरा देशी रियासतों का है। सरकारी भाग को मध्यदेश और देशी भाग को मध्यभारत कहते हैं। बुन्देलखंड मध्य भारत का एक अंग है, जिसमें नौ बड़ी और कई छोटी रियासतें हैं। छतरपूर बड़ी रियासतों में एक है, जो बुन्देलखंड के मध्य में झांसी से प्रायः ७५ मील की दूरी पर है। यहां के शासक एक प्रमर वंशी महाराज हैं। इसकी वार्षिक आय प्रायः सात लाख है। इस रियासत के उत्तर-पच्छिमी भाग में महराजपूर, कुसुमा और मलहरा नाम के तीन क़स्बे हैं, जिनमें विशेष रूप से पान की खेती होती है। इनके अतिरिक्त लौंड़ी, गौरहरी,

गढ़ी, बारी और नेवारी में भी कुछ पानों की उपज है। ये सब छतरपूर रियासत के ग्राम हैं। इनके अतिरिक्त पास की बिजावर तथा चरखारी रियासतों में भी कुछ पान होते हैं, किन्तु बहुतायत से नहीं। महराजपूर विशेष रूप से पानों की खानि है। यह महोबा से २७ मील है तथा मलहरा से ४ मील। महोबे का रास्ता, महराजपूर के लिये मलहरा से, पक्की सड़क सरकारी से है। मलहरा से महराजपूर वा कुसुमा होती हुई पक्की रियासती सड़क आगे चली गई है। पानों के लिये बाहर के प्रान्तों में महोबे का नाम बहुत प्रसिद्ध है, किन्तु वहां महराजपूर, कुसुमा तथा मलहरा के दशमांश से भी अधिक पान न होते होंगे। महोबा अंगरेज़ी राज्य में है और वहां रेलवे स्टेशन होने से छतरपूर का पान वहीं होकर अन्य प्रान्तों के लिये लदता है। इसी से वह सब पान महोबे का पान कहलाता है। प्राचीन काल में पानों की उपज महोबे ही में अधिकांश होती थी, किन्तु अब महराजपूर का पान सर्वोत्कृष्ट है। तीस-चालीस साल हुए, बिजावर के पनागर का पान प्रसिद्ध था, किन्तु अब वहां का भी पान लेखकों की राय में छतरपूर के पान के आगे कोई वस्तु नहीं है। छतरपूर के पान की खपत बहुत करके पश्चिमी युक्त प्रान्त और पूर्वी पंजाब में है। यह पान साधारण से बहुत बड़ा, मोटा और जल्द टूटनेवाला होता है। इसमें यह खूबी है कि खाने में मुख में घुल जाता है और लिब्दी शेष नहीं रह जाती। स्वाद में भी इसमें सोंधापन विशेष है और मुख में अच्छी सुगंध देता है। बड़े से बड़ा पान १५ इञ्च लम्बा तथा १२ इंच चौड़ा होता है। पानों को उपजानेवाले लोग बरई कहलाते हैं। ये लोग एक प्रकार के तमोली हैं, किन्तु उनसे इनकी रिश्तेदारी नहीं होती। तमोली अपने को बड़ा कहते हैं, और बरई अपने को।

महराजपूर के बरई बड़े इज्ज़तदार माने जाते हैं। इनमें १२ मुखिया हैं, जो सब 'लल्ला' की उपाधि से विभूषित हैं। सिह पर इन लोगों के नाम हैं। ये मुखिया ज़मींदार हैं। इनके नीचे १२ थोकदार हैं जो लल्ला न कहे जाकर 'थोकदार' कहलाते हैं। आजकल

इन लोगों में दो लोग मुख्य हैं, जिनके नाम लल्ला सुजानसिंह और लल्ला अधारसिंह हैं। रियासत की ओर से महराजपूर ठेके पर प्रायः किसी बरई को ही दिया जाता है। उस ठेकेदार के कई विशेष अधिकार बिरादरी में भी रहते हैं और एक प्रकार से वही सब का मुखिया रहता है। चालीस-पचास साल से उपरोक्त दोनों मुखियाओं में से किसी एक के घर में ठेका रहा आया है। महराजपूर की आबादी बहुत जल्द बढ़ती जाती है। गत बीस वर्षों में वह ड्योढ़ी हो गई है। कुसुमा थोड़े दिनों से बढ़ा है किन्तु उसमें बरई नहीं रहते और महराजपूर से ही उसका प्रबन्ध करते हैं। वह महराजपूर से मिला हुआ है। मलहरा में महराजपूर से प्रायः आधे बरई होंगे। पान की प्रति क्यारी को पारी कहते हैं। महराजपूर में १०००० पारियां है, कुसुमा में ६५००, मलहरा में ७२००, गढ़ी में १०३२, गौरहरी में ११२७, बारी में ६७, नेवारी में ४५२ और लौंड़ी में प्रायः २००० हैं। पनागर में करीब १००० होंगी और महोबे में क़रीब ३००० के। मलहरा में दो घराने मुखिया हैं जिन्हें महतों तथा मोदी कहते हैं। आजकल महतों लोगों में गणेश मुख्य हैं, और मोदियों में नन्दकिशोर। गढ़ी, गौरहरी व बारी में बरई नहीं हैं, किन्तु नेवारी में प्रायः पन्द्रह-बीस घर बरइयों के हैं तथा लौंड़ी में इनके प्रायः २०० घर हैं। मलहरा का भी ठेका महतों या मोदियों में से किसी एक या कई लोगों के पास रहता है। अन्य गांवों के ठेके नहीं हैं, किन्तु पन्द्रह-बीस वर्षों से बरई लोगों की बड़ी उन्नति हुई है और उनका व्यापार बहुत फैलता आया है। इससे अन्य ग्रामों के भी ठेके वे लेते जाते हैं। महराजपूर में थोड़े दिनों से आर्य्यसमाज का भी प्रभाव पड़ा है। सनातनधर्मी तथा आर्य्यसमाजी बरई लोगों में मन-मोटाव भी विशेष है। इस मन-मैलो के कारण झगड़े आदि भी होते हैं और उन्हें रोकने में रियासत के कर्मचारियों को बहुत सजग रहना पड़ता है। बरई लोग क़ानून के बहुत पाबन्द रहते हैं। यदि एक पुलीस का सिपाही चला जावे तो दो सौ लोगों को पकड़े थाने को चला आवे। सरकारी आज्ञा मानने में बरई बहुत-

अच्छे हैं। फिर भी आपस के झगड़ों से दो-चार बार अच्छे खासे बखेड़े भी इनमें हो गये हैं और एक बार बन्दूक भी चल गई थी, किन्तु जांच से सिद्ध हुआ कि वह धोखे में चल गई थी। महराजपुर की रक्षा को धनी बरई लोग प्रायः ७५ बन्दूक़बन्द रखते हैं। लोगों का विचार ठीक ही है कि यहां डाका नहीं पड़ सकता। फिर भी यदि सरकारी एक सिपाही चला जावै तो पछत्तरों बन्दूक़बन्द हाज़िर हो जावैं। सरकार को मदद करने में ये लोग बहुत अग्रसर रहते हैं। इनमें पांड़े, मोदी, हड़ा, पटैल, कठल, अतरया, बहोरया, चमरेला, खजवा, कोरी, बोहरा आदि की अनेकानेक अल्लैं हैं। बातें करने में अमुक पांड़े आदि के ऐसे कथन करते हैं कि इन से अपरिचित व्यक्ति को पूरा भ्रम हो सकता है कि वह मनुष्य वरई न होकर ब्राह्मण ही होगा। आर्य्यसमाजी बरई लोगों ने एक पाठशाला बालकों के लिये तथा एक बालिकाओं के लिये अपने व्यय से महाराजपूर में स्थापित कर रक्खी है।

पानों के खेत को बरेजा कहते हैं। एक पारी सौ से २५० हाथ तक लम्बी होती है तथा उसकी चौड़ाई १/२ गज़ की रहती है। सौ हाथ से कम लम्बी पारी को लम्बाई के अनुसार अधिया पौनिया कहते हैं। पौवा, अढ़ाई पौवा, डेढ़ पौवा आदि नामों की भी पारी होती है। पान का पौधा एक प्रकार की बेलि है। उसे नागबेलि कहते हैं। सेजा, सागोना तथा अन्य सतकठा (सातों प्रकार का साधारण काठ) की प्रायः दस फ़ीट लम्बी पतली लकड़ी को कोरो या कोरवा कहते हैं। सौ हाथ लम्बी पारी में प्रायः ७५ कोरो गाड़े जाते हैं और हर दो कोरवाओं के बीच में ३ से ६ तक सनौड़े गाड़े जाते हैं। सनौड़ों की संख्या बेलि की सघनता पर है, अर्थात बेलि जितनी ही घनी होती है उतने ही अधिक सनौड़े गड़ते हैं। सन की छड़ी को सनौड़ा कहते हैं। करीब सात फ़ीट ऊंचा सनौड़ा बरेजों में लगता है। कोरवा एक सीधी रेखा में गाड़े जाते हैं। कोरवाओं की एक पंक्ति को पारी कहते हैं। दो पारियों के बीच १/२ गज जगह छोड़ी जाती है। इसे

नापने को एक लकड़ी रखते हैं जिसे कठा कहते हैं। पारी में जो कोरवा गाड़े जाते हैं, उनके बीच भी एक-एक कठा का ही अन्तर होता है। बरेजे के ऊपर तथा उसके चारों ओर बांस की कमटियों की जाफ़री बना कर उसे गुनर तथा भौंर घास से मढ़ देते हैं। गुनर एक प्रकार का सेंठा है, किन्तु सेंठे से पतला होता है। भौंर का पत्ता गुनर से कुछ लम्बा-चौड़ा अधिक होता है। इस प्रकार बरेजे के चारों ओर दीवारें सी हो जाती हैं और ऊपर हल्का छप्पर सा हो जाता है। ऊपर का छप्पर प्रायः ७ फ़ीट ऊँचा होता है। बरेजे को आँथर भी कहते हैं। प्रत्येक बरेजे में १२५ से ५०० तक पारियां होती हैं। प्रति बरई उस में पांच से दस तक पारियां रखता है। किसी बरई की, एक बरेजे में, पच्चीस-तीस से अधिक परियां नहीं होती हैं। यदि कोई बरई इससे अधिक पारियां भी रखता है तो वह कई बरेजों में थोड़ी-थोड़ी पारियां रखता है। बरेजे में आग लग जाने से बड़ी हानि हो सकती है। इसी प्रकार सेही, सुअर आदि के अन्दर घुस पड़ने से बहुत हानि हो सकती है। इन्हीं कारणों से बरई लोग अपनी पारियां कई बरेजों में बिथरी रखते हैं, जिस में एक में हानि होने से दूसरे में लाभ उठा सकें और बिल्कुल मिट न जावें। प्रति बरई अपने भाग के सामने तथा ऊपर टट्टी बनाता है। जिन के भाग किनारे होते हैं उन्हें किनारे वाली टट्टी पूरी बनानी पड़ती है। इसीलिये किनारेवाले हिस्सेदार को दो-तीन पारियों का लगान नहीं पड़ता है। हर बरेजे में पहले साल पांच व दूसरे साल चार पारियों का लगान माफ़ रहता है। ये पारियां पाखे की पारियां कहलाती हैं। हर बरई अपने भाग के सामने एक टट्टी का दरवाज़ा रखता है। उसीसे सींचने या काम करने को लोग आते-जाते हैं। रात को हर एक बरई अपना दरवाज़ा मजबूत बांध देता है। एक आँथर में दो से चार तक आदमी रात को पहरा देने को रहते हैं। दिन में आठ बजे से पाँच बजे तक काम होता है। ज्यों ज्यों बेलि बढ़ती जाती है, त्यों त्यों सनौड़ों व कुरवाओं में आड़ी कमटी बांधते जाते हैं। इस कमटी को लगर कहते हैं तथा सनौड़े को

बातें कहते हैं। प्रति कुरवा एक ही बीज बोया जाता है, किन्तु उससे पांच-छः बेलें फूटती हैं। वे कोरवा तथा स नौड़ों पर चढ़ती जाती हैं। जब धीरे-धीरे छत को पकड़ लेती हैं तब कभी-कभी छत पांच छः इंच ऊपर उठा कर बांध दी जाती हैं। उसके पीछे बेलि नीचे को लौटा दी जाती है। बलवान बेलि साल भर में सात-आठ बार इसी भाँति लौटाई जाती है तथा निर्बल बेलि तीन ही चार बार लौटती है। साल भर के पीछे फागुन में बचे-बचाये पान खोंट कर हर एक लता की साधारण शाखाएँ काट कर वहीं कोरो के नीचे डाल दी जाती हैं और उस के पुष्ट भाग रक्खे जाते हैं। उनसे फिर नये पोके फूटते हैं तथा जो काट कर डाली जाती हैं उनसे भी कभी कभी पोके फूटते हैं। कटी लता के शेष भाग सड़ कर अच्छी खाद बनते हैं, जो जड़ों को लाभ पहुँचाते हैं। दूसरे साल फिर लता ऊपर चढ़ती व कई बार लौटाई जाती है। दोनों सालों में ज्यों ज्यों लता बढ़ती जाती है त्यों त्यों उसके पान खोंटे जाते हैं। पान खोंटने में यह बुद्धिमानी है कि बिगड़नेवाला खोंटा जावै व बढ़नेवाला न खोंटा जावै। जहां पान बहुत घने हो जावें वहां भी खोंटे जाते हैं जिस में गस कर ख़राब न हो जावें। इसी भांति लता के लौटाने में बड़ी बुद्धिमानी आवश्यक है जिसमें टूट न जावै। लता माघ या फाल्गुन में बोई जाती है। पहली वर्षा तक उसका पान कच्चा रहता है और कुँवार से पक्का कहलाता है। दूसरे साल पान बहुत अच्छा होता है। कच्चा पान कुछ कम दामोंपर बिकता है तथा पक्का पान साहिया भी कहलाता है और अच्छे दामोंपर बिकता है। प्रति लता में नीचे के दो पान बहुत ही अच्छे होते हैं। वे पेड़ी के पान कहलाते हैं तथा रुपये के २० या २२ बिकते हैं। दूसरे साल फाल्गुन में बचे-बचाये पान काटकर पेड़ी उजाड़कर फेंक दी जाती है जिसे जानवर चर डालते हैं। तीसरे साल उस पृथ्वी पर बरेजा नहीं लग सकता, वरन् ख़रीफ़ के धान्य, तिली, काकुन, समा, जुवार आदि बोये जाते हैं। कुँवार से बरेजा उठाने का प्रबन्ध चल पड़ता है। पृथ्वी समथर की जाती है तथा कोरवा सनोड़ा आदि

गाड़े जाते एवं जाफ़री आदि बनाई जाती हैं। खेत बीच में ऊंचा होता है और माही पुश्त की भांति हर ओर ढलवाँ रहता है जिससे उसमें पानी कहीं ठहरने न पावे। सरसों की खली, गेहूं और उर्द का आटा, नीम की खली और कभी-कभी प्याज़ की खाद इन खेतों में पड़ती है। प्रत्येक पारी में दोनों साल मिला कर वस्तु तथा मेहेनत में प्रायः १२५) व्यय होता है, तथा २००) के पान मिलते हैं। इस प्रकार सही बचत प्रति पारी दो साल में प्रायः ७५) रहती है। सरकार को प्रतिपारी १॥≡) प्रति वर्ष देना पड़ता है तथा बरेजा गिरने पर तीसरे वर्ष केवल =) पारी देना पड़ता है। १०० से २५० हाथवाली पारी का लगान एक ही होता है, किन्तु १०० हाथ से कमवाली पारी का लगान उसकी लम्बाई के अनुसार कम होता है। १०० हाथ की पारी ठीक है। यदि लता अच्छी न हुई या पृथ्वी ख़राब हुई तो पारी लम्बी होती है। (शेष आगे)

"मिश्रबंधु"

---

# मदरास-केन्द्र-कार्यालय के निरीक्षण

## का

## विवरण

हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की प्रचार-समिति की ज्येष्ठ शुक्ल ३ सं० १६८१ वि० की बैठक के अन्तिम मन्तव्यानुसार हम प्रयाग से ता० २२ जुलाई सन् १६२४ मंगलवार को अर्थलेखक पं० जयनारायण पांडेय को साथ ले मदरास के लिये प्रस्थानित हुए और ता० २५।७।२४ शुक्रवार को प्रातःकाल मदरास पहुँच गये। आज ही के दिन प्रचारक-विद्यालय की स्थापना का, मदरास में, विशेष उत्सव होने को था; किन्तु यह उत्सव ता० २७ जुलाई के लिये स्थगित हो चुका था। हमने कार्यालय में पहुंचकर वहाँ का हिसाब जाँचना आरम्भ किया, और श्रावण शु० १५ सं० १६८१ तक का एक चिट्ठा भी तैयार कर-

वाया। हमने मद्रास-कार्यालय का निरीक्षण कर जो बातें जानी हैं, उनको हम यहाँ, संक्षेप में, लिखने का प्रयत्न करते हैं।

ता० १७ जून सन् १९१८ ई० को मद्रास-प्रान्त में हिन्दी-प्रचार के कार्य का श्रीगणेश किया गया। ता० १४।८।२४ को इस कार्य को आरम्भ हुए ६ वर्ष ६ मास और २८ दिन पूरे हो चुके। ता० १७।६।१८ से ता० १८।१२।१९१९ तक श्रीयुत देवीदासजी गांधी के नेतृत्वावधान में यह कार्य हुआ। तत्पश्चात् व्यवस्थापक के पद पर श्रीयुत पं० हरिहरजी शर्मा नियुक्त किये गये, जो आजतक उक्त पद पर स्थित हैं। ता० १ जून सन् १९१९ से १८ दिसम्बर सन् १९१९ तक के आय-व्यय का हिसाब पर्चों पर है। तदनन्तर आश्विन कृष्ण ६ सं० १९७६ से श्रावण शु० १५ सं० १९७७ तक हिसाब रखने का क्रम पर्चों पर ही जारी रहा। तदुपरान्त भाद्र कृष्ण १ सं० १९७७ से आज तक का हिसाब रजिस्टरों में दर्ज पाया गया। तथापि हिसाब रखने की पद्धति यथोचित न होने के कारण, हिसाब की जाँच में, केवल अनावश्यक परिश्रम ही नहीं करना पड़ा; किन्तु अनावश्यक समय भी व्यय करना पड़ा। श्रावण शुक्ल १५ सं० १९८१ तक के आय-व्यय का चिट्ठा, व्यवस्थापक का सही किया हुआ, इस रिपोर्ट के अन्त में नत्थी कर दिया गया है। इसके अनुसार भाद्र कृष्ण १ सं० १९८१ वि० को रोकड़-बाकी १२,१२६॥।) १ थी; जिसका ब्योरा इस प्रकार है :—

| | | |
|---|---|---|
| नक़द | ४४१९॥।≡) | इंडियन बैंक में करेंट और सेविंगज़ बैंक एकाउन्ट |
| | २०००) | उक्त बैंक में फ़िक्सड डिपाज़िट |
| | १५४॥=) | ४ कार्यालय में नक़द |
| | २६७७।) | कर्मचारियों के संरक्षण-कोष में |
| | ७८५।–)। | पेशगी कर्मचारियों को |
| | ५४५॥=)। | रामजी-कल्याणजी की दूकान में जमा |
| | ६८५॥)॥। | आन्ध्र-कार्यालय हिसाब-तलब |
| | ८५८।=)॥ | तामिल कार्यालय हिसाब-तलब |
| योग | १२,१२६॥।)॥। | |

जो रोकड़ बैंक में जमा है वह पं० हरिहर शर्माजी के निज नाम से जमा है। हमारी राय में किसी भी सार्वजनिक संस्था का धन किसी व्यक्ति-विशेष के नाम से जमा रहना उचित नहीं। अतः प्रधान-कार्यालय अपेक्षित मन्तव्य पासकर, उन बैंकों से पत्र-व्यवहार कर, ये रक़में सम्मेलन के नाम से अपनी मदरास-शाखा-खाते जमा करवा दे और एक निर्दिष्ट संख्या तक प्रतिमास रुपये निकालने का अधिकार व्यवस्थापक को देदे। इस कार्य के करने में विलम्ब न होना चाहिये।

७६५।-)। की रक़म कर्मचारियों के नाम पेशगी-खाते में पड़ी है। यह कार्य मदरास-केन्द्र-कार्यालय ने प्रधान-कार्यालय की आज्ञा के विरुद्ध किया है। हमने व्यवस्थापकजी को लिखकर दे दिया है कि वे प्रतिमास उन कर्मचारियों के वेतन से, जिनके नाम पेशगी रुपये पड़े हैं, एक तिहाई वेतन काटकर यथासम्भव शीघ्र पेशगी-खाते को ब्यौढ़ा करें और प्रतिमास इसकी सूचना प्रधान-कार्यालय को देते रहें। आइन्दा किसी को भी पेशगी तब तक न दें, जब तक प्रधान-कार्यालय की स्वीकृति प्राप्त न कर लें।

हिसाब-तलब-खाते में जो रक़में पड़ी हैं, वे प्रान्तीय सञ्चालकों की शिथिलता के कारण पड़ी हैं। आइन्दा इस प्रथा को भी बंद करने की आवश्यकता है।

भाई रामजी-कल्याणजी कुछ दिनों तक केन्द्र-कार्यालय के बैंकर थे। उनकी दूकान से समय पर जब रुपया मिलने में कठिनाई हुई, तब व्यवस्थापक ने बैंक में खाता खोला। किन्तु उस दूकान से हिसाब साफ़ न किया। इसीसे ५४५॥=)। की रक़म उस दूकान के नाम चिट्ठे में डालनी पड़ी है। इस दूकान से खाता उठे एक वर्ष से ऊपर हो चुका। अब यह रक़म शीघ्र दूकान से लेकर बैंक में जमा करा देनी चाहिये। हमने इस सम्बन्ध में लिखकर व्यवस्थापकजी को आज्ञा दे दी है। आशा है, वे इस कार्य को अविलम्ब कर डालेंगे।

## आय

आरम्भ से श्रा० शुक्ल १५ सं० १९८१ तक सब मिलाकर १,२४,०९०।≡)१ जमा हुए। इनमें से ३३,६००) महात्माजी ने सीधे केन्द्र-कार्यालय को भेजे और ३५,६१४॥-)॥ मद्रास-प्रान्त तथा अन्य प्रान्त-वासियों ने सहायतार्थ प्रदान किये तथा १९,४६४।) प्रधान-कार्यालय-द्वारा केन्द्र-कार्यालय को प्राप्त हुए।

मद्रास प्रान्त एवं अन्य प्रान्तवासियों ने सहायतार्थ जो दान दिया, उसकी रसीदें कार्यालय से दाताओं के पास भेजी गयीं तो बतलायी जाती हैं, किन्तु उनकी प्रतिलिपियाँ जाँच के लिये उपस्थित नहीं की गयीं। अतः इस आमदनी की इतनी बड़ी रक़म हमें विवश हो ठीक मान लेनी पड़ती है। किन्तु आइंदा आमदनी की रसीदें अवश्य सुरक्षित रहनी चाहिये और हिसाब की जांच के समय उपस्थित की जानी चाहिये।

## ख़र्च

श्रावण-शुक्ल १५ सं० १९८१ वि० तक १,११,९६३ ॥≡) ख़र्च हुए। जितना ख़र्चा हुआ है, प्रायः सबकी स्वीकृति प्रधान-कार्यालय से ले ली गयी है और उनकी रसीदें भी सुरक्षित रखी गयी हैं। ख़र्च का हिसाब रखने में यहाँ के रजिस्टरों में अनेक त्रुटियां पायी गयीं, जिनके संशोधन के लिये व्यवस्थापकजी को आवश्यक बातें बतला भी दी गयी हैं। जो महानुभाव इस विषय में विशेष जानने को उत्सुक हों, वे मद्रास-कार्यालय की निरीक्षण-फ़ाइल को देखकर सन्तोष प्राप्त कर सकते हैं।

## प्रचार-कार्य

मद्रास-हाता २४ ज़िलों में विभक्त हैं। भाषा की दृष्टि से यह हाता चार प्रान्तों में बाँटा जा सकता है। अर्थात्—

१. आन्ध्र, २. तामिल, ३. कर्नाटक ४. केरल

साधारणतः तो हिन्दी-प्रचार का कार्य इस समय चारों ही प्रान्त में हो रहा है; किन्तु विशेष रूप से यह कार्य आन्ध्र-प्रान्त में और

आन्ध्र से उतरकर तामिल-प्रान्त में हुआ है। आन्ध्र-प्रान्त में इस समय भी सम्मेलन की ओर से १६ प्रचारक काम कर रहे हैं। इनके अतिरिक्त ५० प्रचारक स्वतंत्ररीत्या हिन्दी-प्रचार के कार्य में संलग्न हैं। तामिल में १४ वैतनिक और २ स्वतंत्र प्रचारक हैं। आन्ध्र-प्रान्त का मुख्य स्थान बेजवाड़ा और वहां के सञ्चालक श्रीयुत सत्यनारायणजी हैं। तामिल का केन्द्र-स्थान त्रिचनापल्ली है और वहाँ के सञ्चालक विहार-प्रान्त-वासी श्रीयुत अवधनन्दनजी हैं। केरल में केवल दो प्रचारक ही काम कर रहे हैं। इसी प्रकार कर्नाटक में भी दो ही प्रचारक हैं। केरल में हिन्दी-प्रचार के लिये अच्छा क्षेत्र है; किन्तु कर्नाटक में केवल मैसूर, बंगलौर, मंगलौर एवं उड़पी में हिन्दी-प्रचार की विशेष आवश्यकता है। कर्नाटक प्रान्त का आधा भाग महाराष्ट्र-प्रान्त का सीमावर्त्ती होने से हिन्दी-भाषा से अपरिचित नहीं है।

आन्ध्र-प्रान्त हिन्दी-प्रचार के लिये उर्वरा भूमि सिद्ध हुई है। इस प्रान्त ने इस कार्य में सन्तोषजनक उन्नति की है। यह प्रान्त अब इस योग्य हो चुका है कि यहाँ के हिन्दी-प्रचार का कार्य-भार इस प्रान्त के गण्यमान्य सज्जनों को सौंपा जा सकता है। हमारी समझ में एक निर्दिष्ट अवधि के भीतर आन्ध्र प्रान्त को स्वतंत्र कर देना आवश्यक है। प्रधान-कार्यालय को इस ओर ध्यान देने की आवश्यकता है। आन्ध्र प्रान्त को स्वतंत्र करने पर जो बचत हो, वह केरल और कर्नाटक प्रान्तों में हिन्दी-प्रचार के कार्य में लगाई जानी चाहिये।

आरम्भ से आज तक इस प्रान्त में लगभग ७०,००० सत्तर हज़ार स्त्री-पुरुषों ने हिन्दी सीखना आरम्भ किया। यदि आरम्भ से इन प्रान्तों में नियमित रूप से कार्य हुआ होता तो और भी अधिक सफलता प्राप्त होती। व्यवस्थापकजी का अधिकांश समय प्रेस-प्रबन्ध एवं पुस्तक-प्रकाशन में लगा। वे नियमित रूप से प्रचारकों के कार्य का निरीक्षण कर उनको न तो उत्साहित ही कर सके और न उन्हें प्रचारकों की त्रुटियां दूर करने के लिए अपेक्षित परामर्श देने-

का अवसर ही प्राप्त हुआ। इससे हिन्दी-प्रचार के कार्य की गति मन्द अवश्य रही। इस दोष को दूर करने की आवश्यकता है। दोष दूर करने का उपाय यथास्थान आगे चलकर हम लिखेंगे।

यहाँ पर इतना अवश्य हम प्रकट करेंगे कि प्रचारकों को हिन्दी-प्रचार का कार्य पाठशाला और स्कूल के छात्रों में ज़ोर-शोरसे करना चाहिये। साथ ही हिन्दी-प्रचार के कार्य को स्थायी और दृढ़ बनाने के लिये आवश्यक है कि उस प्रान्त की स्त्रियों में हिन्दी सीखने की रुचि उत्पन्न की जाय। इस आन्दोलन को सफल बनाने के लिये यह भी आवश्यक है कि यथासम्भव शीघ्र मदरास-सरकार की सहानुभूति-सम्पादन करने का उद्योग किया जाय। अनेक विशिष्ट जन इस कार्य में सहयोग प्रदान करने को उत्सुक हैं; किन्तु सरकार के सङ्केत की प्रतीक्षा में हैं। इस आन्दोलन का स्वरूप विशुद्ध साहित्यिक रखा जाय। इस कार्य में सभी सम्प्रदायों, सभी मतों, सभी विचारों एवं सिद्धान्तों के लोगों की सहानुभूति और उनका हार्दिक सहयोग हमें अपेक्षित है। ऐसा तभी होगा, जब हमारे प्रचारक इस पर सदा ध्यान रक्खेंगे और पाठ्य-पुस्तकों, एवं वहाँ का मुख-पत्र "हिन्दी-प्रचारक" ऐसी बातों से सदा अपने को अछूता बनाये रक्खेंगे। किसी किसी पाठ्यपुस्तक की केवल भाषा ही अनुपयुक्त नहीं है, बल्कि उसमें वर्णित विषय भी सुरुचिपूर्ण नहीं हैं। प्रचलित पाठ्य पुस्तकों के नवीन संस्करण जब छापे जायँ, तब उनका संशोधन ऊपर की बातों को ध्यान में रखकर होने की नितान्त आवश्यकता है।

प्रचार के विषय में हमें प्रत्यक्ष अनुभव करने का सुअवसर प्राप्त न हो सका। इसका मुख्य कारण मदरास में हमारे स्वास्थ्य का बिगड़ जाना तो है ही; साथ ही दक्षिणभारत की बाढ़ के कारण यात्रा-सम्बन्धिनी असुविधाएँ भी थीं। तथापि २-४ वर्गों में उपस्थित रह कर हमने प्रचलित कार्यपद्धति की त्रुटियाँ जान लीं और उनको दूर करने का उपाय भी संक्षिप्त रूप में हमने बतला दिया है।

## हिन्दी-प्रचार-प्रेस

इस प्रेस को खड़ा करने में ५१७८=) खर्च हो चुके और व्यवस्थापकजी के मतानुसार दस सहस्र की अभी और नितान्त आवश्यकता है। हर्ष की बात है, महात्माजी ने इस कार्य्य के लिये व्यवस्थापकजी के पास सात हज़ार रुपये भेजवा भी दिये हैं। इस प्रेस द्वारा प्रचारोपयोगी पुस्तकें भी प्रकाशित होती रहती हैं। इस खाते में अभी तक २४,३४२॥=) ख़र्च हुए और २८,४३५॥=) की आमदनी हुई, और ७०८४॥-)॥ मूल्य की पुस्तकें ता० १५।८।२४ को पुस्तक-भण्डार में थीं।

इस कार्य को व्यापारिक सिद्धान्त पर चलाने से और भी विशेष लाभ की आशा है। पूँजी लगाने पर भी लाभ तभी हो सकता है, जब प्रेस चलाने का दायित्व किसी विशेषज्ञ को सौंपा जाय। हमारी समझ में प्रेस के लिये एक सुपरिन्टेन्डेन्ट Superintendent ७५)—५)—१००) के मासिक वेतन पर तुरन्त नियुक्त कर देना नितान्त आवश्यक है। Press-Superintendent व्यवस्थापक के नीचे स्वतंत्र काम करे, किन्तु उत्तरदायित्व व्यवस्थापक एवं निरीक्षक दोनों पर समान रूप से रहे। यदि प्रेस-निरीक्षक के पास नक़द रुपये रखे जाँय, तो उससे ५००) रु० की नक़द ज़मानत अवश्य ली जाय।

प्रेस-विभाग का रैकर्ड ठीक तरह से नहीं रखा गया, किन्तु अब इसका ढंग व्यवस्थापकजी को भली भाँति समझा दिया गया है। प्रेस के कर्मचारी सम्मेलन के संरक्षण-कोष में सम्मिलित नहीं हैं किन्तु अब वे सभी इस कोष में सम्मिलित कर लेने चाहिये। प्रेस-विभाग के बिलों के भुगतान की ओर विशेष ध्यान देने की अवश्यकता है। ता० १२। ४। २३ से आजतक ऐसे २० बिल मिले; जिनके रुपये अभी तक वसूल नहीं हुए। आइंदा वसूलयाबी पर पूर्णरूप से ध्यान दिया जाना आवश्यक है। इसके अतिरिक्त केन्द्र-कार्यालय के सब विभागों की आमदनी व ख़र्च की रक़में कच्ची रोकड़ में अवश्य दर्ज़ की जानी चाहिये।

## पुस्तक-प्रकाशन विभाग

पुस्तक-प्रकाशन कार्य में सन्तोषजनक कार्य हुआ और लाभ भी हुआ है। विशेष उद्योग करने से और भी अधिक लाभ होने की आशा है। इस समय प्रचार-कार्यालय की निज की पुस्तकों के अतिरिक्त बाहिरी पुस्तकें भी भण्डार में रक्खी और बेची जाती हैं। इससे भी अवश्य कुछ-न-कुछ लाभ होता ही है; किन्तु हमारी समझ में दक्षिण-भारत के आवश्यकतानुसार केन्द्र-कार्यालय को अपनी एवं सम्मेलन की प्रकाशित पुस्तकों ही का प्रचार करना चाहिये। जो पुस्तकें आवश्यक हों, वे यदि अपने यहाँ न हों तो केन्द्र-कार्यालय उनको बनवाकर स्वयं छपवा ले। इससे आगे चलकर विशेष लाभ की आशा है। इस नीति पर कुछ लोग कह सकते हैं कि जिन प्रकाशकों की सहानुभूति केन्द्र-कार्यालय से है, ऐसा होने पर केन्द्र-कार्यालय को उनकी सहानुभूति से हाथ धोने पड़ेंगे। इस कथन में कुछ तथ्य अवश्य है, पर हमारी समझ में ऐसी स्वार्थ-मूलक सहानुभूति का न तो कुछ महत्व ही है और न सहानुभूति के चिरस्थायी होने का कुछ भरोसा ही। जभी ऐसे लोगों के स्वार्थ में बाधा पड़ेगी, तभी वे अपनी सहानुभूति उठा लेंगे। अतः इस भय के कारण केन्द्र-कार्यालय को उक्त कार्य-पद्धति प्रचलित करने में किसी प्रकार की हिचकिचाहट की आवश्यकता नहीं मालूम पड़ती।

## पुस्तकालय

केन्द्र-कार्यालय में एक पुस्तकालय भी है। इसमें ६८३ पुस्तकें हैं। पुस्तकालय-ख़र्च-खाते १०७॥-) पड़े हैं। इस रक़म में ५५॥=) दो आलमारियों के दाम भी शामिल कर दिये गये हैं। पुस्तकालय में पुस्तक-प्रकाशकों ने बिना मूल्य पुस्तकें दी हैं, इसी से इस खाते में ख़र्च कम पड़ा है। अन्य लोगों की तरह यहाँ के भी अधिकांश लोगों को भ्रम है कि हिन्दी-साहित्य में कुछ भी साहित्य नहीं है। हमारी समझ में यह भ्रम दूर करने का उपाय पुस्तकालय की

उन्नति करना है। अतः हमारी राय में २००) साल पुस्तकालय के लिये बजट में स्वीकृत किये जाँय। पुस्तकों में कुरुचि-पूर्ण उपन्यासों अथवा नाटकों की भरमार न हो; किन्तु हिन्दी के उच्च-कोटि के गद्य-पद्यात्मक ग्रन्थों का संग्रह होना चाहिये। केन्द्र कार्यालय प्रतिवर्ष २००) के मूल्य तक की पुस्तकें खरीदे; और खरीदने के पूर्व प्रधान-कार्यालय से पुस्तकों के विषय में परामर्श ले ले। जिन पुस्तकों की जिल्दबंदी नहीं हुई, उनकी जिल्दबंदी होनी चाहिये और यह पुस्तकालय कार्यालय में न रख कर विद्यालय में रहना चाहिये। पुस्तकों की सूची से मासिकपत्रों की फाइलें निकाल दी जाँय। मासिकपत्रों की फाइलों की सूची स्वतंत्र होनी चाहिये।

## विद्यालय

ता० २७।७।२४ से मद्रास-नगर में एक प्रचारक-विद्यालय की स्थापना की गयी है। इसमें १२ विद्यार्थी हैं, जिनमें से ४ को १५) मासिक की छात्र-वृत्ति दी जाती है। शेष निज-व्यय से अध्ययन करते हैं। अभी विद्यालय आरम्भिक अवस्था में है। इसका प्रबन्ध अभी से समुचितरीत्या होना चाहिये। इसके प्रधानाध्यापक के पद पर उत्तर देशवासी हिन्दी-भाषा का कोई विद्वान् जो Trained भी हो, नियुक्त किया जाना अत्यन्त आवश्यक है। साथ ही जिन छात्रों को छात्र-वृत्ति दी जाती है, उनसे पक्के काग़ज़ पर एक इक़रारनामा लिखाने की भी आवश्यकता है। इस इक़रारनामे में यह अवश्य रहे कि छात्र यदि अध्ययन-काल की समाप्ति के पूर्व अध्ययन छोड़ बैठे, अथवा अध्ययन-काल समाप्त कर दो वर्ष तक सम्मेलन की ओर से नियमानुसार प्रचार कार्य न करे, तो वह सारी रक़म लौटा दे, जो उसे छात्रवृत्ति के रूप में दी गयी हो। इसके अतिरिक्त हम छात्रों के चुनाव में भी कई बातों पर ध्यान रखने की आवश्यकता समझते हैं। यह विद्यालय हिन्दी के प्रचारक तैयार करने के उद्देश्य से खोला गया है। अतः इसमें साधारणतः वे ही विद्यार्थी भर्त्ती किये जायँ, जिनकी उम्र २० वर्ष से कम न हो। देखने में भव्य हों एवं बातचीत से लोगों पर प्रभाव डाल सकें। मिलनसार हों।

मिष्ठ-भाषी हों, एवं व्याख्यान देने की योग्यता सम्पादन करने की शक्ति रखते हों। चरित्रवान् होने के साथ ही साथ कष्ट-सहिष्णु भी हों, अंगरेज़ी अथवा दक्षिणी-भारत किसी भी एक प्रान्तीय भाषा का साङ्गोपाङ्ग ज्ञान रखते हों। जैसा कि इस विद्यालय की विवरण-पत्रिका में छापा गया है कि इस विद्यालय में उर्दू सब को अवश्य सीखनी होगी ऐसी बातों की घोषणा करने के पूर्व सम्मेलन के उद्देश्यों पर अवश्य ध्यान देना चाहिये और संशय-ग्रस्त अथवा विवाद-ग्रस्त विषयों पर प्रधान-कार्यालय की अनुमति प्राप्त कर लेनी चाहिये।

( शेष आगे )

चतुर्वेदी द्वारकाप्रसाद शर्मा

## स्थायी समिति का छठा अधिवेशन

स्थायी-समिति का छठा अधिवेशन रविवार भाद्रपद शुक्ला प्रतिपदा संवत् १९८१ वि० तदनुसार ता० ३१ अगस्त सन् १९२४ ई० को ४॥ बजे से सम्मेलन-कार्यालय में निम्नलिखित सदस्यों की उपस्थिति में हुआ—

१—श्री पुरुषोत्तमदास टंडन
२—श्री वियोगी हरि
३—श्री बा० केदारनाथ गुप्त
४—श्री चतुर्वेदी द्वारकाप्रसाद शर्म्मा
५—श्री प्रोफ़ेसर ब्रजराज
६—श्री पं० लक्ष्मीधर वाजपेयी
७—श्री पं० इन्द्रनारायण द्विवेदी
८—श्री पं० जगन्नाथप्रसाद शुक्ल
९—श्री पं० रामजीलाल शर्म्मा

१—सर्वसम्मति से श्री बाबू पुरुषोत्तमदासजी टंडन ने सभापति का आसन ग्रहण किया।

२—देहरादून के पंद्रहवें हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की स्वागत-कारिणी-समिति तथा स्थायीसमिति के सदस्यों द्वारा भेजी हुई निबन्ध-सूची पढ़ी गयी। विविध विषयों पर निम्नलिखित ८८ निबन्ध सर्वसम्मति से निश्चित हुए।

१—ब्रह्मदेश और हिन्दी २—बंगाल और हिन्दी ३—मदरास और हिन्दी ४—महाराष्ट्र और हिन्दी ५—गुजरात और हिन्दी ६—सिन्ध-

और हिन्दी ७—पंजाब और हिन्दी ८—खड़ीबोली की कविता ९—ब्रजभाषा की कविता १०—हिन्दी-विश्वकोष की आवश्यकता ११—हिन्दी में सुलभ साहित्य के साधन—१२—संस्कृत और हिन्दी (सम्बन्ध) १३—उर्दू और हिन्दी १४—देवनागर अक्षरों को वर्त्तमान रूप कब प्राप्त हुआ १५—सीधी और उलटी लिपि का तुलनात्मक इतिहास १६—हिन्दी का सुलभ शार्टहैंड १७—हिन्दी का इतिहास-ग्रन्थ १८—हिन्दी-उपन्यास १९—हिन्दी का व्यापारिक पत्र २०—हिन्दी के पुस्तकालय, वाचनालय, शिक्षणालय और संग्रहालय २१—वर्त्तमान स्कूल और कालेजों में हिन्दी-शिक्षा २२—हिन्दी के सम्बन्धमें वर्त्तमान सरकार की नीति २३—हिन्दी भाषाके दोष और उनके दूर करने के उपाय २४—हिन्दी-भाषा में नाटक-ग्रंथ २५—नाटक-मण्डलियों की हिन्दी और उनके द्वारा हिन्दी का प्रचार २६—हिन्दी भाषा का व्याकरण २७—हिन्दी भाषा में दर्शन ग्रन्थ २८—सम्पादन-कला २९—समालोचना और समालोचक ३०—हिन्दी में लोकोक्तियां ३१—हिन्दी में विनोद-साहित्य ३२—हिन्दी में मुद्रण व्यय को सुलभ करने का उपाय ३३—हिन्दी में वैद्यकशास्त्र ३४—हिन्दी में शकुन-विचार ३५—हिन्दी में राष्ट्रगीत ३६—सूर ३७—कबीर ३८—केशव ३९—विहारी ४०—भूषण ४१—मतिराम ४२—हिन्दी में चम्पू ४३—हिन्दी में संगीत ४४—हिन्दी में स्वर लिपि ( गायनशास्त्र की लिखित पद्धति ) ४५—स्वराज्य और स्वभाषा ४६—सभ्यता और स्वभाषा ४७—हिन्दीभाषा के उत्थान में महिलाओं का अंश ४८—हिन्दीभाषा में अर्थशास्त्र ४९—हिन्दी भाषा में शिल्प-शास्त्र ५०—हिन्दीभाषा में राजनीति ५१—हिन्दी भाषा में कूट पद्य ५२—हिन्दी भाषा में वाकोवाक्य ( प्रश्नोत्तर रूप ग्रन्थ ) ५३—हिन्दी में कवायद ( सुलभ व्यायाम-पद्धति ) ५४—भारतीय नृत्य-कला ५५—हिन्दी में सुलभ ज्योतिष-शास्त्र ५६—हिन्दी में सामुद्रिक शास्त्र ५७—महाभारत ५८—रामायण ५९—हिन्दी में हस्तलिखित ग्रन्थ ६०—हिन्दी के सिक्के ६१—हिन्दी के शिलालेख ६२—हिन्दी के ताम्रपट ६३—प्रजातंत्र व नृप-

तंत्र राज्यपद्धति (गुण-दोष-विवेचन) ६४—हिन्दुस्तान के इतिहास की सामग्री ६५—हिन्दुस्तान के इतिहास के सम्बन्ध में हिन्दी का साहित्य ६६—गुरुकुलों और ऋषिकुलों आदि शिक्षण-संस्थाओं के द्वारा हिन्दी की शिक्षा पर विशेष प्रभाव ६७—राजनीतिक आन्दोलन का हिन्दी-प्रचार से सम्बन्ध ६८—नागरी का प्रचार बौद्धों तथा अन्य विदेशियों में कैसे हो सकता है ? ६९—वर्त्तमान हिन्दी-साहित्य की आलोचना ( जिसमें इस बात पर विशेष ध्यान दिया जावे कि आजकल किन-किन विषयों पर पुस्तकें लिखे जाने की आवश्यकता है और जो पुस्तकें लिखी जा चुकी हैं उनमें किन-किन बातों की न्यूनता है ?) ७०—हिन्दी-पुस्तक-संग्रहालयों के पूर्ण करने के साधन ७१—वैष्णव धर्म और हिन्दीसाहित्य ७२—हिन्दी-नाटकों की उन्नति में विदेशी नाटकों का आदर्श और उनके विकास का इतिहास कहां तक सहायक हो सकता है ? ७३—अलङ्कारों का काव्य में स्थान (गद्य में किस अंश तक अलङ्कारों का उपयोग करना उचित है ) ७४—हिन्दी की वर्त्तमान पत्र-पत्रिकाएं ७५—ग्राम-संगठन का उपाय कौनसा सुगम है ? ७६—साहित्य-सेवा और देश-सेवा ७७—भारत की प्राचीन शिल्पकला ७८—प्राचीन भारत में अस्त्र-चिकित्सा ( चीड़-फाड़ ) ७९—सम्मेलन के आरम्भ से अबतक हिन्दी-साहित्य की गति ८०—कमाऊं प्रान्त में भड़ावली (वीर-साहित्य) ८१—राष्ट्रमिति ८२—गढ़वाली भाषा और हिन्दी का सम्बन्ध ८३—कमाऊं प्रान्त में देवता गीत ( जागर ) ८४—कमाऊं प्रान्त के हिन्दीकवि और लेखक ८५—हिन्दी-विद्यापीठ का शिक्षा क्रम ८६—राष्ट्र-निर्माण और उसका स्थायित्व ।

३—इसी सम्बन्ध में चतुर्वेदी पं० द्वारकाप्रसादजी शर्म्मा ने प्रस्ताव किया कि "हिन्दी-विद्यापीठ का शिक्षा-क्रम" इस विषय पर निबन्ध लिखाया जाय और सर्वोत्तम निबन्ध-लेखक को ५०) का नक़द पुरस्कार दिया जाय । यह निबन्ध आगामी दशहरे तक यहां (सम्मेलन-कार्यालय-प्रयाग में) आ जाय । निर्णय श्री पुरुषोत्तमदास जी टंडन, प्रोफ़ेसर ब्रजराजजी तथा बाबू गंगाप्रसादजी मिलकर

करें। पुरस्कार देहरादून-सम्मेलन में ही दिया जाय। स्थायीसमिति मंगलाप्रसाद-पारितोषिक समिति से सिफ़ारिश करती है कि वह यह पुरस्कार मंगलाप्रसाद-पारितोषिक की बचत से देने की कृपा करे। पं० रामजीलाल जी शर्मा के अनुमोदन के साथ प्रस्ताव सर्व-सम्मति से स्वीकृत हुआ।

४—पं० बनारसीदासजी चतुर्वेदी का वह पत्र उपस्थित किया गया, जिसमें उन्होंने सम्मेलन से अनुरोध किया है कि हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के संग्रहालय में "सत्यनारायण-कुटीर" नामक एक कमरा रक्खा जाय। जिसकी लागत ८००) तक चतुर्वेदीजी ने स्वयं देने का वचन भी दिया है। और सत्यनारायणजी का एक बड़ा चित्र भी अपने व्यय से बनवा कर वहाँ रखने को लिखा है। सर्व-सम्मति से चतुर्वेदीजी का प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

५—चतुर्वेदी पं० द्वारकाप्रसादजी शर्म्मा ने प्रस्ताव किया कि जिस प्रकार प्रयाग के व्यापारी-मंडल में रमचन्दी काटी जाती है उसी प्रकार सम्मेलन भी १०) और १०) के ऊपर के बिलों पर सम्मेलन के फंड के लिए )॥ प्रति रुपया काटा करे। इस पर बहु-सम्मति से निश्चय हुआ कि सहायता के रूप में, जहां तक सम्भव हो, )॥ प्रति रुपया मांगा जाय।

इसके अनन्तर उपस्थित सदस्यों की कुछ सामयिक आवश्यकताओं के कारण बैठक ता० २ सितम्बर के लिए स्थगित कर दी गई।

स्थगित बैठक ता० २ सितम्बर को ४॥ बजे से निम्नलिखित सदस्यों की उपस्थिति में हुई—

१— श्री० पुरुषोत्तमदास टंडन
२— " प्रोफ़ेसर ब्रजराज
३— " वियोगी हरि
४— " चतुर्वेदी पं० द्वारकाप्रसाद शर्म्मा
५— " पं० लक्ष्मीधर बाजपेयी
६— " पं० इन्द्रनारायण द्विवेदी
७— " पं० जगन्नाथप्रसाद शुक्ल

८—श्री० पं० रामजीलाल शर्म्मा

प्रबन्ध-परिष्कार-उपसमिति की रिपोर्ट पढ़ी गई और उस पर विचार हुआ। निश्चित हुआ कि—

६—सम्मेलन का वर्ष चैत्र शुक्ला प्रतिपदा विक्रमीय संवत् के आरम्भ से माना जाय; इसके लिए नियमावली में परिवर्त्तन करने के लिए एक प्रस्ताव आगामी सम्मेलन में उपस्थित किया जाय।

७—आय-व्यय का अनुमान-पत्र ( बजट ) इस वर्ष भाद्रपद संवत् ८१ से लेकर संवत् १९८२ के अन्त तक के लिए बनाया जाय।

८—उपसमितियाँ बजट पहले अपनी समिति में ही पास करें, फिर स्थायी-समिति से उसकी स्वीकृति लें और जिन विभागों में उपसमितियाँ नहीं हैं उनके मन्त्री स्वयं बजट तैयार करके उसकी स्वीकृति स्थायीसमिति से करावें।

९—सम्मेलन का हिसाब हर चौथे महीने स्थायी-समिति में उपस्थित होना चाहिए, और जहां तक सम्भव हो, हिसाब जाँचा हुआ होना चाहिए।

इसके बाद उपस्थित सदस्यों की कुछ सामयिक असुविधाओं के कारण यह बैठक भी अगले दिन के लिए स्थगित करदी गई।

पुनः स्थगित बैठक ता० ३ सितम्बर सन् १९२४ को २ बजे दिन से द्वितीय दिन की उपस्थिति में हुई।

१०—प्रोफ़ेसर ब्रजराजजी ने प्रस्ताव किया कि अब "प्रबन्ध-परिष्कार-उपसमिति" की रिपोर्ट पर कुछ विचार न किया जाय। यह प्रश्न एक वर्ष के लिए स्थगित किया जाय। पं० रामजीलाल शर्म्मा ने कहा कि इस पर विचार किया जाय। स्थगित रखने के पक्ष में दो सम्मतियाँ थीं और उसी समय विचार करने के पक्ष में ४। बहुमत से विचार करना निश्चित हुआ।

प्रोफ़ेसर ब्रजराजजी ने प्रस्ताव किया कि—

१—स्थायी समिति के प्रथम अधिवेशन में कार्यालय-सम्बन्धी ब्यौरेवार बँधे हुए ख़र्च की मंजूरी लेकर वर्ष भर तक उसके अनुसार मन्त्री लोग ख़र्च करें।

२—प्रत्येक तीन मास के लिए जो कुछ ख़र्च करना हो उसका विस्तृत अनुमान-पत्र बनाकर मन्त्री लोग स्थायी-समिति से उसकी स्वीकृति ले लिया करें। उसीके अनुसार तीन साल तक ख़र्च करें। यही क्रम प्रत्येक तीन मास के लिए रहेगा।

प्रथम प्रस्ताव के पक्ष में दो और विपक्ष में ५ वोट आने तथा दूसरे प्रस्ताव का समर्थन न होने के कारण दोनों प्रस्ताव गिर गये।

११—पं० जगन्नाथप्रसादजी शुक्ल ने निम्नलिखित दो प्रस्ताव किये—

१—नियत व्ययों के अतिरिक्त बजट में जो रक़में स्वीकृत हो चुकी हों उनके अन्तर्गत प्रधान मन्त्री को २००), प्रबन्ध मन्त्री को १००) तथा उपसमितियों को ५००) तक ख़र्च करने का अधिकार दिया जाय। प्रस्ताव बहुमत से गिर गया।

२—साल में एक बार सम्मेलन के वैतनिक कर्मचारियों की सूची स्थायी समिति में पेश की जायगी। यदि बीच में कोई परिवर्तन होगा तो उसकी सूचना आगामी स्थायी समिति को देनी होगी। प्रस्ताव बहुमत से गिर गया।

१२—वियोगी हरिजी ने प्रस्ताव किया कि ज़मीन का पट्टा, फ़िक्स्ड डिपाज़िट की रसीदें, प्रोमसरी नोट्स आदि सेफ़ में रक्खे जायँगे। सेफ़ की चाभी एक अर्थ-मन्त्री के पास और एक प्रधान मन्त्री के पास रहा करेगी। आवश्यकता पड़ने पर सेफ़ दोनों की उपस्थिति में खोला जायगा। जो चीज़ें उसमें रहेंगी, उनका उल्लेख एक रजिस्टर में किया जायगा, जो उसी में रक्खा रहेगा। जब कोई चीज़ निकाली जायगी या रक्खी जायगी, तब उस का भी उल्लेख एक दूसरे रजिस्टर में किया जायगा, जो सेफ़ में ही रक्खा रहेगा। प्रस्ताव बहुमत से स्वीकृत हो गया।

१३—चतुर्वेदी पं० जगन्नाथप्रसादजी तथा बाबू रामदासजी गौड़ के पत्र उपस्थित किये गए, जिन में उन्होंने स्थायी-समिति से अनुरोध किया था कि सम्मेलन को अधिक साहित्यिक बनाने की

योजना पर विचार इस बैठक में न होकर शरत्पूर्णिमा की बैठक में हो; क्योंकि कारणवश वे इस बैठक में उपस्थित नहीं हो सकते। तदनुसार इस योजना पर विचार शरत्पूर्णिमा की बैठक के लिए स्थगित कर दिया गया।

१४—श्रीमान् सैयद अमीरअली "मीर" का पत्र उपस्थित किया गया। सम्मेलन-पत्रिका के सम्बन्ध में उन्होंने जो निवेदन किया उसपर निश्चित हुआ कि सम्मेलन-पत्रिका-सम्पादक उसपर ध्यान दें। "हिन्दू-मुसलिम-ऐक्य" विषय पर सर्वोत्तम निबन्ध-लेखक को सम्मेलन की ओर से एक स्वर्णपदक देने के सम्बन्ध में निश्चय हुआ कि यह झगड़े का विषय है। सम्मेलन इस झगड़े में नहीं पड़ सकता।

१५—प्रधानमंत्री ने सूचना दी कि पंजाब-प्रान्तीय-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के प्रधानमन्त्री श्रीयुत जयचन्द्र विद्यालङ्कार को उनके लिखने पर पंजाब और सिन्ध में प्रचार-सम्बन्धी कार्य के लिए प्रधानमन्त्री ने, उपसभापति श्रीमान् टंडनजी की अनुमति से, जो २००) तीन मास के लिए उधार भेजे हैं वह स्वीकृत किये जायँ।

सर्वसम्मति से २००) उधार दिया जाना स्वीकृत हुआ।

१६—प्रधान मन्त्रीजी ने पूछा कि हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के कोकनाडा के विशेष अधिवेशन के सभापति श्रीराजेन्द्रप्रसादजी साधारण सभापति के समकक्ष ही स्वत्त्वाधिकारी माने जायँ। इस पर निश्चित हुआ कि विशेष अधिवेशन के सभापतियों का अधिकार भी साधारण अधिवेशनों के सभापतियों के समान है।

सभापति महोदय को धन्यवाद देकर सभा विसर्जित हुई।

रामजीलाल शर्मा
प्रधान मंत्री

---

देहरादून-सम्मेलन—अब के समाचार-पत्रों और हिन्दी-जगत् में देहरादून-सम्मेलन के सम्बन्ध में अच्छा आन्दोलन हो रहा है। क्या सभापति का चुनाव, क्या हिन्दी-प्रचार, क्या साहित्योन्नति क्या मंगलाप्रसाद-पारितोषिक, सभी अंगों पर हिन्दी-प्रेमियों का विशेष रूप से ध्यान गया है। क्या इस आन्दोलन पर ध्यान देने से यह प्रकट नहीं होता है कि राष्ट्रभाषा की श्रेयस्कारिणी आराधना का महान् गौरव लोगों के हृदयों में प्रतिक्षण स्थान करता जा रहा है? सम्मेलन की सफलता का ध्यान आते ही किस हिन्दी-हितैषी का हृदय प्रेम-परिपूरित और गद्गद न हो जायगा?

हम आशा करते हैं कि इस वर्ष हिन्दी-प्रेमी सज्जन आगामी अधिवेशन में अधिकाधिक संख्या में उपस्थित होकर सम्मेलन को हृदयहारी और सफल बनायँगे। इतना ही नहीं, वे वहां कोई न कोई ऐसा आदर्श उपस्थित करेंगे कि जिसके द्वारा हम राष्ट्र-जीवन-संचारिणी भगवती राष्ट्रभाषा का दिव्य दर्शन कर जातीय साहित्य के निर्म्माण में अपनी समस्त शक्ति लगा देंगे।

❦ ❦ ❦

सत्यनारायण का जीवनचरित—गताङ्क में हमने महाकवि सत्यनारायण की स्मृति के सम्बन्ध में एक टिप्पणी लिखी थी। सत्यनारायणजी के अनन्य भक्त पंडित बनारसीदासजी चतुर्वेदी ने उनकी स्मृति-रक्षा का सदुद्योग करना आरंभ कर दिया है। आपने स्वर्गीय कविरत्न की विस्तृत सर्वांग-सुन्दर जीवनी बड़े परिश्रम और खोज से तयार कर सम्मेलन को प्रकाशनार्थ प्रदान की है। भारत

भक्त एण्ड्रूज़, केशवचंद्र सेन आदि महापुरुषों के जीवनी-लेखक चतुर्वेदीजी जीवन-चरित चित्रित करने में कैसे कुशल हैं इसे कहने की आवश्यकता नहीं।

चतुर्वेदीजी ने सम्मेलन के बृहत् संग्रहालय के लिए सत्यनारायणजी का एक सुन्दर बड़ा चित्र भी भेंट किया है। आपका यह सत्कार्य सर्वथा स्तुत्य और अनुकरणीय है।

सत्यनारायणजी का जीवन-चरित शीघ्र ही प्रकाशित होगा।

❧ ❧ ❧

बाबू शिवप्रसादजी गुप्त का सद्दान—अभी हाल में काशी-निवासी उदारहृदय बाबू शिवप्रसादजी गुप्त ने काशी-विद्यापीठ को दस लाख रुपये प्रदान किये हैं। उच्च से उच्च शिक्षा हिन्दी-माध्यम द्वारा देने, विद्यार्थियों को औद्योगिक कलाओं में निपुण कराने तथा राष्ट्रीय शिक्षण-विधि का आदर्श उपस्थित करने के लिये बाबू साहब ने विद्यापीठ को यह सद्दान दिया है। आपका यह राष्ट्र-शिक्षा-प्रेम और राष्ट्र-भाषा-भक्ति देखकर किस राष्ट्र-सेवी का हृदय भाव-भरित न होगा ?

जिस प्रकार स्वनामधन्य बाबू गोकुलचंदजी ने अपने स्वर्गीय भ्राता भाई मंगलाप्रसादजी की स्मृति-रक्षा के लिए सम्मेलन को चालीस हज़ार रुपये का दान देकर 'मंगलाप्रसाद-पारितोषिक' स्थापित किया है, उसी प्रकार आपने अपने प्रिय भ्राता हरप्रसादजी के स्मरणार्थ काशी-विद्यापीठ को इतना बड़ा दान देकर अजर-अमर कर दिया है। क्या हमारे देश के अन्य धनकुबेर भी बाबू साहब का अनुसरण करने को अग्रसर होंगे ?

❧ ❧ ❧

बाबू संगमलालजी अंग्रेजी में बोले !—'परम हिंदी-हितैषी बाबू संगमलालजी काउन्सिल में हिन्दी में भाषण करने को अड़े हुए हैं" यह सुन कर हमको जितना उत्साह और आनंद होता था, उतना

ही यह सुन कर कि 'आप उस दिन काउन्सिल में अधिकारियों के कहने-सुनने पर अँग्रेजी में बोले' हमें विस्मय और दुःख हुआ है। बंगाल काउन्सिल के सदस्य प्रायः बंगला भाषा में भाषण करते हैं, बिहार और मध्यप्रान्तीय सदस्य भी हिंदी में बोलते हैं, पर हिंदी-प्रधान प्रदेश संयुक्त प्रान्त की काउन्सिल में हिंदी में बोलना पाप समझा जा रहा है! सरकार के भाषा के सम्बन्ध में इस अनुचित हस्तक्षेप की बात सुन कर किस हिंदी-हितैषी का हृदय विदीर्ण न हुआ होगा? पर यदि बाबू संगमलालजी और उनके सहयोगी हिंदी में ही बोलने पर बराबर अड़े रहते, तो सरकार को विवश हो हिन्दी में बोलने की अनुमति अवश्य देनी पड़ती। यदि सरकार ऐसा न कर आपको अंग्रेज़ी में ही बोलने को बाध्य करती तो यह उचित था कि आप काउन्सिल छोड़कर तुरंत बाहर चले आते। 'हिंदी में बोलना या बिल्कुल ही न बोलना' हिन्दी-प्रेमी सदस्य के लिये गौरवास्पद कार्य हो सकता है।

हमें यह सुन कर और भी खेद हुआ कि आप को देख कर कुछ अन्य हिंदी-हितैषी सदस्य भी अपने निश्चय से डिग गये। क्या हम अब भी काउन्सिल के हिंदी-भाषा-भाषी सदस्यों से यह आशा रखें कि वे काउन्सिल की आगामी बैठक में हिन्दी में ही बोलने का दृढ़ निश्चय कर पिछली ग़लती को ठीक करेंगे? हमारी राय में तो युक्त प्रान्तीय धारा सभा में हिंदी-भाषा-भाषी सदस्यों का हिन्दी में बोलना ही सब से बड़ी विजय है।

## मातृभाषा

जनरल बोथा जब विलायत गये और राजा के साथ बात करने का मौका आया तो उन्होंने अंगरेजी में बात करने से साफ़ इन्कार कर दिया। उन्होंने तो डच की अपभ्रष्ट भाषा 'टाल' में ही बात करने का निश्चय किया और 'टाल' के द्विभाषिया के मार्फ़त बातें कीं। यह बात नहीं कि वे अंगरेजी न जानते हों। मुझसे कहीं अच्छी अंगरेजी वे बोलते थे। पर अपनी ही भाषा में बातचीत करने में उन्होंने अपना गौरव माना। प्रेसिडेंट क्रूगर भी 'टाल' के सिवा दूसरी भाषा में बात नहीं करते थे। इसी तरह उन्होंने अपनी सत्ता क़ायम की थी। इसलिए मैं आपसे मेरे साथ हिन्दी, उर्दू और मराठी में बातें करते हुए देखने की आशा रक्खूंगा। इसमें कुछ बड़ाई नहीं कि आपको अच्छे अंगरेजी बोलनेवाले शिक्षक मिलते हों। हिन्दी अथवा मराठी द्वारा पढ़ानेवाले भिखारी, धार्मिक, सर्वस्व का त्याग करनेवाले शिक्षक यदि आपके यहां हों तो ही आपका भूषण है। विद्वत्ता भले ही औरों से कम हो।*

मोहनदास करमचंद गांधी

---

* यह अंश 'हिन्दी नवजीवन' में प्रकाशित उस वक्तृता से लिया गया है जो महात्मा गांधी ने गुजरात विद्यापीठ के विद्यार्थियों के सामने दी थी।

—संपादक

# पञ्चदश हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन

(देहरादून)

लोग चकित हैं कि अभी पिछली फरवरी में, देहली में, सम्मेलन हो चुका, अब इतनी शीघ्रता में नवम्बर के प्रथम सप्ताहमें यह पन्द्रहवाँ सम्मेलन क्यों कर हो रहा है ? प्रथम कारण तो यह है कि प्रयाग से प्रधानमन्त्री ने यह अनुरोध किया कि यदि दशहरे के दिनों में अथवा उसके आसपास सम्मेलन हो जाय तो सम्मेलन का वर्ष ठीक प्रारम्भ हो—अबतक तो आधा बजट मंजूर होता था आधा मंजूर नहीं होता था—बिना मंजूरी के ही छः मास ख़र्च चलाना पड़ता है, फिर मंजरी लेनी पड़ती है। यह दिक़्क़त तभी दूर हो सकती है जब कि आश्विन-कार्त्तिक में सम्मेलन हो और फिर भविष्य में यही क्रम रहे—सम्मेलन की इस दिक़्क़त को दूर करने की लालसा प्रथम कारण है।

दूसरा कारण यह हुआ कि फरवरी के अन्तिम सप्ताह में आर्यजगत् बराबर सात दिनतक दयानन्द-शताब्दि-महोत्सव मनायेगा। उस समय आर्यों का समस्त ध्यान उधर होगा। आर्य लोग सहस्रों की संख्या में मथुरा पहुँचेंगे। आर्यसमाज के इस कार्य में हमारा सम्मिलित होना भी परम कर्त्तव्य है, अतः इस दिक़्क़त को दूर करना द्वितीय कारण है। उस समय इधर के सब कार्यकर्त्ता उधर जाते तो यहाँ कार्य करता कौन ?

फिर हमने सोचा कि इसको होली के अवसर पर काँगड़ी गुरुकुल और महाविद्यालय ज्वालापुर के महोत्सवों के साथ किया जाय, किन्तु इसमें भी कई अड़चनें दीख पड़ीं।

फिर यह भी विचार किया गया कि ईस्टर (१९२५) की छुट्टियों में किया जाय, किन्तु यह पता चला कि उस समय हरद्वार में निखिलभारतवर्षीय आयुर्वेद महासम्मेलन होगा।

इस तरह एक बार तो हम लोग निराश हो गये और यह चाहते थे कि प्रयाग-सम्मेलन को स्पष्ट निषेध लिखकर भेज दिया

जाय जिससे अन्यत्र सम्मेलन हो—और भी अन्य अनेक कठिनाइयाँ उपस्थित हो गईं जिनकी पूर्व सम्भावना नहीं थी।

अन्त में मित्रमण्डली और अन्य हिन्दीभाषा के प्रेमियों की प्रेरणा से हमने यह निश्चय कर ही डाला कि नवम्बर ७, ८, ९, को सम्मेलन किया जाय। अवसर अच्छा है, कार्तिक शु० ११, १२, १३ पड़ती है। सम्मेलन करके प्रतिनिधिगण चतुर्दशी को हरद्वार में कार्त्तिकी स्नान का लाभ उठा सकते हैं।

हमारे मार्ग में बड़ी कठिनाइयाँ हैं—इस चतुर्मास में देव भी सो जाते हैं अथवा विश्राम करते हैं और देवोत्स्थान पर उठते हैं—किन्तु देहरादून के देव सम्मेलन के कारण वर्षा ऋतु में भागे भागे फिर रहे हैं। और रात दिन इसी चिन्ता में हैं कि सम्मेलन किस तरह सफल हो। देहरादून के देव चतुर्मास में जागेंगे और देवोत्थान पर सो जायँगे!

स्वागतकारिणी-समिति बन गई है। कार्य नियमित रूप से प्रारम्भ हो गया है। यहां के लोगोंने बड़ी-बड़ी राजनैतिक कानफरेंसें देखी हैं। वे भी चकित हैं कि यह सिर पर 'आल इण्डिया साहित्य' कहां से आ धमका। कई पूछ रहे हैं कि यह "हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन"होगा अथवा "हिन्दू-साहित्य-सम्मेलन?" हम भी मुसकरा कर कह डालते हैं कि दोनों होंगे। हमारी प्रधान कठिनाई यह है कि सम्मेलनकी तैयारी के लिये समय थोड़ा है। दूसरी कठिनाई यह है कि वर्षा के कारण हम तङ्ग हैं—उत्तराखण्ड के द्वार पर मेघों का अड्डा है—इधर से आ बरसे, उधर से आ बरसे, रात बरसे दिन बरसे! पहाड़ी नदियों का कुछ ठीक नहीं। अभी खाली हैं अभी कमर-कमर पानी जा रहा है, मार्ग बन्द हो जाते हैं। कभी घबरा जाते हैं लेकिन हमारे मित्र श्री पं० पद्मसिंह शर्माजी कहते हैं 'चढ़ जाओ, राम भलाई करेंगे।' इसलिये सम्मेलन तो अब होगा ही, किन्तु राष्ट्रभाषा-प्रेमियों से निवेदन है कि वे अधिक संख्यामें प्रतिनिधि के रूप में आवें—यही हमारी अभिलाषा है। यह उत्तराखण्ड का द्वार है, यदि साहित्य की चर्चा गंगोत्री के गोमुख

तक पहुंची है तो राष्ट्रभाषाके कवि, विद्वान्, लेखक, सम्पादक आदि महानुभावों को पधारकर पूर्ण योग देना चाहिये । हिमालय उनका हृदय से स्वागत करेगा । अबतक स्वागत-कारिणी-समिति के १२५ सदस्य बन चुके हैं। जी कड़ा करके चन्दा भी उघाया जा रहा है। सम्मेलन की स्वागत कारिणी की ओर से श्री पं० प्रभुदयालजी उपदेशक बरेली व मेरठ डिविज़न में घूम रहे हैं। बड़े बड़े नेताओं के पास निमन्त्रण जा रहे हैं। सम्मेलन के साथ साहित्य व कला की प्रदर्शनी करने का भी विचार हो रहा है। कवि सम्मेलन भी होगा। संगीत-सम्मेलन की बात भी लोग कह रहे हैं। हो सका तो स्व० बाबू हरिश्चन्द्रजी के "भारतदुर्दशा नाटक" का अभिनय भी होगा। सोचा तो बहुत कुछ है। समय पर जब होगा और जो भी होगा वही ठीक है।

श्री नरदेव शास्त्री वेदतीर्थ

---

## नवलकिशोर प्रेस के पत्र पर विचार

क्षेपक के सम्बन्ध में नवलकिशोर प्रेसवालों का वक्तव्य युक्ति-युक्त नहीं है। इन युक्तियों से उन का उत्तरदायित्व नहीं जाता है। यह युक्ति तो बड़ी ही पोच है कि "यदि पण्डित और टीकाकार अथवा कथावाचक महोदयगण यह साहित्य का बड़ा अपकार करना त्याग दें तो प्रकाशक लोग कभी इस अनुचित कार्य को न करें।" यह बात तो वैसी ही हुई, जैसे कोकिन बेचनेवाला कहे कि लोग कोकिन खाना छोड़ दें तो हम कोकिन न बेचेंगे। भला जब तक कोकिन मिलती रहेगी उसे खानेवाले क्यों छोड़ने लगे?

प्रकाशकों का काम पाठकों की रुचि बनाना है, बिगाड़ना नहीं।

रामायण के क्षेपकरहित शुद्ध संस्करण के लिए उद्योग करना धर्म में हस्तक्षेप करना कदापि नहीं है। इसलिए सम्मेलन अधि-कार-सीमा से बाहर नहीं है। पंडितों और कथा-वाचकों के लाभ

के लिए नवलकिशोर प्रेस चाहे तो अलग एक पुस्तक क्षेपकों की छाप सकता है, पर रामायण को भ्रष्ट करने का उसे कोई अधिकार नहीं है। यह कहकर तो उसने अपना पक्ष और भी कमज़ोर कर दिया है कि, वेद भगवान् में भी निरे क्षेपक भरे पड़े हैं। अगर इसे मान भी लें तो यह कदापि सिद्ध नहीं हो सकता कि बुरी बात पुरानी होने के कारण ही त्यागने योग्य नहीं है। नवलकिशोर प्रेस की नयी रामायण अगर ठीक वैसी ही छपी जैसी उस के पत्र में लिखी है तो सचमुच बड़ा सन्तोष होगा। ऐसे बड़े-बड़े प्रकाशकों से हम लोग ऐसी ही विशुद्ध वस्तुओं की आशा रखते हैं। यह तो टुटपूँजिये प्रकाशकों का काम है कि उचित-अनुचित का विचार न कर टके के लिए जो मन में आया छाप दिया।

जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी

---

## मद्रास-हिन्दी-प्रचारक-विद्यालय-वाग्वर्द्धिनी-सभा

उपर्युक्त सभा की स्थापना गत रविवार को (भा. कृ. १०) सायं समय पाँच बजे हुई। उसमें निम्नलिखित नियम स्वीकृत हुए—

(१) सभा का नाम 'वाग्वर्द्धिनी-सभा' रखा जाय।

(२) इसके मन्त्री का चुनाव प्रति मास हुआ करे।

(३) मन्त्री का कर्तव्य होगा कि वह हर बैठक की कार्रवाई रखे।

(४) इसकी कार्रवाई 'हिन्दी-प्रचारक' पत्र को भेजी जाय।

इसके पश्चात् "स्त्री-शिक्षा की आवश्यकता" पर वाद-विवाद हुआ। स्त्रियों को शिक्षा देने के पक्ष में ७ और विपक्ष में ६ थे।

अन्त में यह प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकृत हुआ—

'यह सभा यह प्रस्ताव करती है कि आजकल की जो स्त्री-शिक्षा है वह इतनी खराब है कि उससे ज्ञान प्राप्त करना तो दूर रहा, उलटे अवगुण बढ़ते हैं। अतः देशवासियों से प्रार्थना की जाय कि

वे जल्दी ही स्त्री-शिक्षा का प्रबन्ध करें, जिससे दया-दानादि गुणों की प्राप्ति होवे।'

पिंगलि लजपति राव, मन्त्री

---

# हिन्दी के धुरंधर लेखकों के जीवन-चरित

पाठकों को यह सुनकर हर्ष होगा कि हिन्दी के धुरंधर लेखकों के जीवनचरित का मसाला संग्रह करने और जीवनी लिखने का कार्य्य अब नियमित रूप से हाथ में ले लिया गया है।

इस माला का प्रथम पुष्प सत्यनारायण कविरत्न का जीवन-चरित तयार हो चुका है, जो शीघ्र ही प्रकाशित होनेवाला है। इसी जीवनी की लेखन-शैली पर मैं हिन्दी-साहित्य के विधायक एवं उन्नायक लेखकों के जीवनचरित लिखना चाहता हूँ।

अभी इस माला में निम्नलिखित सुरभिमय पुष्प गूँथे जावेंगे—

(१) राजा लक्ष्मणसिंह
(२) भारतेन्दु हरिश्चन्द्र
(३) बालकृष्ण भट्ट
(४) जगमोहन सिंह
(५) बदरी नारायण चौधरी 'प्रेमघन'
(६) गोविन्द नारायण मिश्र
(७) प्रताप नारायण मिश्र
(८) अम्बिकादत्त व्यास
(९) सम्पादकाचार्य्य रुद्रदत्त
(१०) माधवप्रसाद मिश्र
(११) बालमुकुन्द गुप्त
(१२) राय देवीप्रसाद 'पूर्ण'
(१३) राधाचरण गोस्वामी
(१४) श्रीधर पाठक

जीवनी के लिये जो मसाला इकट्ठा किया जावेगा वह हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के वृहत् संग्रहालय की सम्पत्ति होगा। संग्रहालय का मुख्य भवन उपर्युक्त महानुभावों के चित्रों से अलंकृत किया जावेगा।

यह बतलाने की आवश्यकता नहीं कि ऐसे महत् कार्य्य का सुसम्पन्न होना अनेक सज्जनों की सहायता और समय के अधीन है।

मुझे पूर्ण आशा है कि हिन्दी-साहित्य-प्रेमी इस पुण्य कार्य्य में अवश्य ही मेरे सहायक बनेंगे।

सत्याग्रह—आश्रम
साबरमती ( अहमदाबाद ) } विनीत
बनारसीदास चतुर्वेदी

---

## उपाधियाँ

सम्मेलन की परीक्षाओं में सफलता देखकर हिन्दी की बहुत सी परीक्षाएं खुल गई हैं। परीक्षाओं द्वारा यदि साहित्य के पठन-पाठन की परिपाटी जागृत हो तो हम अवश्य प्रसन्न होंगे। किन्तु कुछ स्वार्थी लोग भी इस अवसर से लाभ उठाने की चेष्टा कर रहे हैं, इस का हमें खेद है—उदाहरणार्थ, 'साहित्यरत्न' परीक्षा को लीजिए। १० वर्ष में ६ ही सज्जन इस उपाधि को प्राप्त कर सके हैं उस में हिन्दी-साहित्य लेकर केवल दो ही। मेरे सामने कुछ ऐसे नमूने हैं जो बिना प्रयास के साहित्यशास्त्री, साहित्याचार्य, साहित्य-शिरोमणि, यहां तक कि हमारे यहां तो 'साहित्यरत्न' ही दो-चार कठिनता से बन पाये, पर यार लोग 'साहित्य-रत्नाकर' हो गये! हम जनसाधारण को ऐसे उपाधिधारियों और उन उपाधिओं के उपजानेवालों को सावधान कर देना चाहते हैं और आशा करते हैं कि पत्र-सम्पादक बन्धु किसी अपने लेखदाता को अप्रामाणिक उपाधियों से अलंकृत करने का कष्ट न उठावेंगे। पत्रों में, हम जानते हैं, वे ही उपाधियां छापी जाती हैं जिन को लेखदाता

चाहता हैं अथवा जो प्रसिद्ध उपाधिधारी हैं, किन्तु पत्रों में छप जाने से पत्र के पाठकों को भ्रम होने लगता है। पत्र के सम्पादक अपने पाठकों को भ्रम से दूर रखने की चेष्टा करते हैं, अतएव हम चाहते हैं कि उपाधि के सम्बन्ध में भी वे उसी नीति से काम लें।

रामरत्न

परीक्षामंत्री

---

## बृन्दावन में प्रतिनिधि-निर्वाचन-सभा

तारीख १७-९-२४ को, सायंकाल ६॥ बजे, बृन्दावन में देहरादून-अधिवेशन के लिए सभापति के निर्वाचन पर सम्मति प्रकट करने तथा प्रतिनिधि-निर्वाचनार्थ सभा की गयी। सभापति का आसन श्रीयुत किशोरीलालजी गोस्वामी ने सुशोभित किया था। निम्न-लिखित प्रस्ताव स्वीकृत हुए—

(१) बृन्दावन-निवासी हिंदी-साहित्य-प्रेमियों की यह सभा हार्दिक उल्लास के साथ पंद्रहवें हिंदी-साहित्य सम्मेलन के लिए, सभापति के आसन के लिए, गोस्वामी श्रीराधाचरणजी महाराज के लिए अपनी सम्मति प्रकट करती है।

(२) बृन्दावन-निवासी हिन्दी-साहित्य-प्रेमियों की यह सभा पंद्रहवें हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के लिए बृन्दावन से निम्नलिखित सज्जनों को प्रतिनिधि निर्वाचित करती है—

श्री पं० किशोरीलाल गोस्वामी, श्री आनंद भिक्षु, श्री पं० छबीले लाल गोस्वामी, श्री पं० हित रूपलाल गोस्वामी, श्री पं० कृष्णचैतन्य गोस्वामी, श्रीभगवानदास केला, श्रीदेवीप्रसाद साहित्यालंकार, श्री पं० गोस्वामी सुखलाल शास्त्री व्याकरणाचार्य, श्री पं० दामोदराचार्य गोस्वामी, श्री पं० दानविहारीलाल शर्मा, श्री गौरांगदास कपूर इत्यादि।

(३) बृन्दावन के साहित्य-प्रेमियों की यह सभा हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के आगामी सोलहवें अधिवेशन के लिए बृन्दावन से

सादर एवं सानुरोध निमंत्रण देती है और आशा करती है कि उसका स्वागत सम्मेलन स्वीकार करेगा।

---

## हिन्दी-साहित्य-सभा

२१ सितम्बर को श्रीयुत पण्डित बैजनाथजी चौबे के सभापतित्व में कलकत्ते के हिन्दी-प्रेमियों की एक सभा हुई। प्रायः सभी हिन्दी-प्रेमी उपस्थित थे। आरम्भ में श्रीयुत पं० नन्दकुमार देव शर्मा ने हिन्दी के लिये कुछ काम करनेवाली संस्था के सङ्गठन की आवश्यकता उपस्थित की। तदनंतर श्रीयुत पुरुषोत्तमरायजी ने प्रस्ताव किया कि कलकत्ता-नागरी-प्रचारिणी सभा और हिन्दी-साहित्य-परिषद् दोनों मिला दी जायं और एक नवीन संस्था स्थापित करके बङ्गाल में राष्ट्रभाषा हिन्दी के प्रचार की सुव्यवस्था की जाय। निश्चय हुआ कि एक नवीन संस्था को जन्म दिया जाना चाहिये और पीछे से नागरी-प्रचारिणी सभा और हिन्दी-साहित्य-परिषद् से प्रार्थना की जानी चाहिये कि वे उसमें सम्मिलित हो जाने की कृपा करें।

इसके अनन्तर सात सदस्यों की एक 'संयोजक-समिति' बनाने का विचार हुआ। पदाधिकारियों और कार्य-कारिणी-समिति के सदस्यों का चुनाव इस प्रकार हुआ—

सभापति पं० बैजनाथजी चौबे; उपसभापति (१) पण्डित अमृतलालजी चक्रवर्ती (२) पण्डित जगन्नाथप्रसादजी चतुर्वेदी (३) राय जतीन्द्रनाथजी चौधरी (४) पण्डित सकलनारायणजी शर्मा (५) पण्डित अम्बिकाप्रसादजी बाजपेयी (६) बाबू हरिकृष्णजी जौहर (७) बाबू दुर्गाप्रसादजी खेतान; प्रधानमन्त्री पं० लक्ष्मणनारायणजी गर्दे; मन्त्री (१) पंडित मदनगोपालजी जोशी (२) पण्डित महादेवसिंहजी शर्म्मा (३) पण्डित बाबूराम मिश्र; कोषाध्यक्ष—बाबू दामोदरदासजी; आयव्यय-परीक्षक (१) बाबू यशोदानन्दनजी अखौरी (२) बाबू हरगोविन्ददासजी गुप्त।

कार्य-कारिणी-समिति के लिये ३९ हिन्दी-प्रेमी सज्जन सदस्य चुने गये।

सभापति को धन्यवाद देकर सभा विसर्जित हुई।

---

## साहित्य-कला-प्रदर्शिनी

ता० ७—८—९ नवम्बर को होनेवाले हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के अवसर पर एक प्रदर्शिनी होगी, जिसके दो विभाग होंगे (१) कला, (२) साहित्य। साहित्य विभाग में समाचारपत्र, ग्रन्थ आदि रहेंगे। कला-विभाग में हाथ की कारीगरी की वस्तुएं रखी जायंगी। इसलिये निवेदन है कि इस कलाविभाग को सफल बनाने के लिये सब कला निपुण सज्जन मदद करें और अपनी-अपनी वस्तुएं भेजें। प्रदर्शिनी हो जाने पर वस्तुएं लौटा दी जायंगी। स्कूलों तथा कालेजों के हेड-मास्टरों से निवेदन है कि वे अपने-अपने स्कूलों तथा कालेजों के लड़कों के निकाले हुए सुन्दर चित्र, ड्राइङ्ग ( आलेख्य ), सुन्दर स्वच्छ लेख, नक़शे आदि प्रदर्शिनी में रखने के लिये भेजें। इससे हमको बहुत सहायता मिलेगी।

इस विषय में समस्त पत्र-व्यवहार श्री० आनन्दस्वरूप सिन्हा एम० ए०, एल० टी, श्री० बदरीनाथ छिब्बर बी० ए० एल० टी० मन्त्री, प्रदर्शिनी कला-विभाग, १५ वां हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन देहरादून के साथ किया जावे।

टिप्पणी—सब वस्तुएं ता० ३१ अक्तूबर तक कार्यालय में पहुंच जानी चाहियें।

निवेदक :—

प्रधान मन्त्री, स्वागत समिति

---

# देहरादून में कवि-सम्मेलन

ता० ७-८-९ नवम्बर को होनेवाले अखिल भारतवर्षीय पञ्चदश हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के साथ कवि-सम्मेलन भी होगा, जिसके सभापति स्वनामधन्य श्रीमान् पंडित श्रीधरजी पाठक होंगे। अतः इस अवसर पर पधार कर कवि-सम्मेलन की शोभा को बढ़ाना आप का परम कर्त्तव्य है, और उसका गौरव तभी हो सकता है, जब आप अपनी अनुपम कविताओं को उस अवसर पर सुनावें। इसलिये निम्नलिखित समस्याओं की पूर्त्ति करके लाइये। बड़ी कृपा होगी। अपने आगमन की सूचना दीजिये जिससे जनता में उत्साह सञ्चारित किया जाय।

श्री पं० श्रीधरजी पाठक की समस्याएँ :—

(१) गी, (२) जीवन, (३) बल है, (४) भ्रम में, (५) करिये, (६) गति है, (७) क्या है।

श्री पं० द्वारिकानाथजी रैना की समस्याएँ :—

(१) घर में बैठे हुए फेंका करो पत्थर बाहर।

टिप्पणी—'पत्थर' क़ाफ़िया और 'बाहर' 'रदीफ़' है। १५ शेरों से अधिक न हों। शब्द हिन्दी अथवा उर्दू के हों; संस्कृत, अरबी, फ़ारसी के न हों।

(२) कोई रूप में रूप नहीं अपनो,
तुम रूप अनूप बखानत हौ॥

टिप्पणी—'बखानत' क़ाफ़िया और 'हौ' रदीफ़ है, शेष-वही बातें जो ऊपर लिखी हैं।

श्री पं० नाथूराम "शङ्कर" जी की समस्याएँ :—

खड़ीबोली—

(१) कुशासन पै बैठे कुशासन करेंगे कुशासन हटा के
(२) होगया प्रकाश का प्रवेश अन्धकार में
(३) हिन्द के निवासी हिन्दू हिन्दी बोलते रहें
(४) देख देहरा दून लगालो

ब्रजभाषा—

(१) अबला अबलौं अवलोकति हैं

(२) सारो जग जीत लियो हीजड़ा के जाये ने

(३) करकी करको करका करके

(४) नरदेव बनो अमरेश बनो

उर्दू—

(१) सम खावेंगे पर तेरी कसम हम न खायेंगे

(२) है जब से दस्तेयार में सागर शराब का

(३) बुलबुल को आरजू है न गुल की न चमन की

मन्त्री, कवि-सम्मेलन

---

# षष्ठ बिहार-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन

बिहार प्रान्तीय सम्मेलन का षष्ठ अधिवेशन कार्तिक शुक्ल ५ और ६ (संवत् १९८१) तदनुसार १ और २ नवम्बर (१९२४) शनिवार और रविवार को, मुजफ़्फ़रपुर में, होना निश्चित हुआ है।

बनैली के राजा श्रीमान् कीर्त्यानंदसिंहजी सम्मेलन के सभापति चने गये हैं। सम्मेलन के साथ ही कवि-सम्मेलन भी होगा, जिसके सभापति श्री पं० जगन्नाथप्रसादजी चतुर्वेदी होंगे।

स्वागत-समिति ने स्थायीसमिति की सम्मति से निम्नलिखित लेख-सूची स्वीकृत की है :—

१—हिन्दी के नवीन साहित्य एवं पत्र-पत्रिकाओं में हास्यरस।

२—तुलसी एवं वाल्मीकीय रामायण में चरित्र-चित्रण (तुलनात्मक)।

३—वर्तमान गद्य-साहित्य में प्रान्तिकता का प्रयोग तथा औचित्यानौचित्य।

४—विद्यापति के बाद बिहार का सर्वश्रेष्ठ कवि।

५—बङ्गला-साहित्य का हिन्दी पर प्रभाव।

६—अन्य प्रान्तों में प्रवासी विहारियों की हिन्दी-सेवा।

७—हलधरदास और उनकी कविता।

८—विहार के हिन्दी-कवि और उनकी कविता।

९—गोप्यअली के जीवन और रचनाओं पर प्रकाश।

१०—मुज़फ्फरपुर की साहित्य-सेवा।

११—बिहार के खनिज पदार्थ।

१२—लिच्छवी वंश का शासन।

१३—हिन्दी-कविता की बदलती हुई शैली, उसकी उपादेयता और अनुपादेयता।

**गयाप्रसाद बी. एल.**
प्रधानमंत्री, स्वागत-समिति

---

# भक्ति-रहस्य

"भक्ति" की महिमा अगाध है, अनन्त है। उसका सर्वव्यापकत्व स्वतःसिद्ध है। जीवमात्र में, किसी न किसी अंश में, उसका विकास हुआ करता है। ज्ञान की अपरोक्षानुभूति और कर्म की क्षमता बिना भक्ति के दुर्लभ है। सुखमय और श्रेयस्कर जीवन का साफल्य एवं अनन्त करुणाब्धि भगवान् का सामीप्य भक्ति के ही द्वारा संभव है। संसार के प्रत्येक संप्रदाय में, प्रत्येक धर्म में, प्रत्येक जाति में इसकी दिव्य महिमा अनुभवी भक्तों और संत-महात्माओं ने गायी है। क्या वैष्णव क्या शैव, क्या यहूदी क्या ईसाई, क्या मुसल्मान क्या सूफी, सभी भक्तियोग के क़ायल हैं, सभी ने इसे अपना-अपना हृदयहार बनाया है, सभी ने अपनी-अपनी अन्तरात्मा इस पीयूष-प्रवाह में परिप्लुत की है। भारतीय भक्ति-साहित्य का तो पूछना ही क्या है?

मेरा बहुत दिनों से विचार है कि "भक्तियोग" पर एक बृहद् ग्रन्थ लिखूँ। यों तो हमारे यहां का संस्कृत एवं भाषा-साहित्य भक्ति रस से लबालब भरा पड़ा है, पर एक ऐसे ग्रन्थ की आवश्यकता प्रतीत होती है, जिसमें भक्ति के साधारण सिद्धान्तों का सम्यक् प्रकार से निरूपण किया जाय, भिन्न-भिन्न सम्प्रदायों के भक्ति-भावों का संगति रीत्या एक स्थान पर समावेश हो और प्रसंगवश संस्कृत भाषा, फ़ारसी, उर्दू, बङ्गला, गुजराती, मराठी, अङ्गरेज़ी आदि भाषाओं के भक्तिविषयक सुललित पद्यों का सन्निवेश किया जाय। ऐसे "भक्ति-रहस्य" ग्रन्थ के लिखने का दुस्साहस मैंने किया है। "जिमि बावन चह छुवन अकासा" की तरह ही मेरी यह अनधिकार चेष्टा है। पर अघटित-घटना पटीयसी भगवत्कृपा मेरे इस महान् उद्योग को सफल करेगी, ऐसा मुझे विश्वास है।

इस ग्रन्थ-लेखन के विषय में कुछ सामग्री मैंने इधर-उधर से जुटाई है, पर वह अभी कुछ भी न होने के बराबर है। इस सम्बन्ध में मुझे अपने पूज्यवरों, हितैषियों और माननीय मित्रों की सहायता और सत्परामर्श की विशेष अपेक्षा है। जो सज्जन मुझे "भक्ति-रहस्य" के विषय में निम्नोक्त प्रकार की सहायता देंगे, उनका मैं बड़ा ही कृतज्ञ हूँगा—

१—भक्तिविषयक संस्कृत, हिन्दी, बंगाली, गुजराती, उर्दू, अंगरेज़ी आदि भाषाओं के अप्राप्य एवं अप्रकाशित ग्रन्थ। [देखकर प्रेषक महोदयों के पास उनके ग्रन्थ सधन्यवाद लौटा दिये जायंगे]

२—प्राप्य एवं प्रकाशित ग्रन्थों की पते सहित सूची।

३—भक्तिसम्बन्धी मौखिक आख्यान, पद्य और अनूठी बातें।

४—प्रत्येक संप्रदाय, पंथ, मत आदि का सारस्वरूप निचोड़।

इसके अतिरिक्त इस विषय में जो सज्जन जिस प्रकार की सहायता करेंगे, उसके लिए उनका मैं जीवन भर आभारी रहूँगा।

**वियोगी हरि**

हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग

# कार्य विवरण तथा लेखमालाएँ

| लेखमाला | | कार्य विवरण | |
|---|---|---|---|
| प्रथम सम्मेलन की लेखमाला | ॥।) | प्रथम वर्ष का कार्य विवरण | ।) |
| द्वितीय (मध्यमा में स्वीकृत) | (प्रेस में) | द्वितीय " " | (अप्राप्य) |
| तृतीय सम्मेलन की लेखमाला | ।॥) | तृतीय " " | ।=) |
| चतुर्थ " " | ॥।) | चतुर्थ " " | ॥) |
| पंचम " " | ॥) | पंचम " " | ॥।) |
| षष्ठ " " | ॥।) | षष्ठ " " | ।) |
| सप्तम " " | ॥=) | सप्तम " " | ।=) |
| अष्टम " " | १) | अष्टम " " | ।) |
| नवम " " | १॥) | नवम " " | ।=) |
| दशम " " | ।≡) | दशम " " | ॥) |
| द्वादश " " | १) | | |
| त्रयोदश " " | १) | | |

# सम्मेलन द्वारा प्रकाशित उत्तमोत्तम पुस्तकें

| | |
|---|---|
| अकबर की राज्य-व्यवस्था ... ... ... | १) |
| सूर्य सिद्धान्त ... ... ... ... | १।) |
| इतिहास ( चिपलूणकर ) ... ... ... | ≡) |
| हिन्दी-भाषा-सार ... ... ... ... | ॥।) |
| प्रथमालंकार-निरूपण ... ... ... ... | =) |
| द्वितीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के सभापति का भाषण ... | ।) |
| तृतीय " " " " ... | ।) |
| मद्रास प्रान्त में हिन्दी-प्रचार का विवरण ... ... | -) |
| हिन्दी-विद्यापीठ ... ... ... ... | -)॥ |
| नागरी अंक और अक्षर ... ... ... | ≡) |
| हिन्दी का सन्देश ... ... ... ... | -) |
| वृत्तचन्द्रिका ... ... ... ... | =) |
| तेरहवें हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के सभापति का भाषण ... | =) |

**पता—मंत्री, हिन्दी-साहित्य सम्मेलन, प्रयाग।**

स्थायीसमिति के सदस्यों, सम्बद्ध संस्थाओं और समस्त हिन्दी-प्रेमियों की सेवा में—

# एक आवश्यक निवेदन

यह तो आप को विदित ही होगा कि इधर कई वर्ष से सम्मेलन के वार्षिक अधिवेशनों पर धन के लिए अपील नहीं हुई। पाँच-छः वर्ष से सम्मेलन के अधिवेशन धनागम की दृष्टि से कोरे ही रहे हैं।

सम्मेलन के कार्यों की वृद्धि बराबर जारी है। मद्रास में हिन्दी-प्रचार के लिए २०००) के लगभग मासिक खर्च होते हैं। दो तीन महीने से आसाम में भी हिन्दी-प्रचार का काम जारी हो गया है। पंजाब और सिंध के राष्ट्रभाषा-प्रेमी अपने यहाँ हिन्दी-प्रचार के लिए व्याकुल हो रहे हैं। संग्रहालय-भवन की नींव शीघ्र ही पड़नेवाली है। पुस्तकों की खोज का काम धनाभाव के कारण रुका सा पड़ा है। हिन्दी-विद्यापीठ के लिए भूमि ले ली है। उसके संचालन के लिए भी प्रचुर धन की आवश्यकता है।

सम्मेलन के कार्यालय का खर्च भी ३०००) वार्षिक से कम नहीं है। प्राचीन साहित्य के प्रकाशन और नवीन साहित्य के प्रणयन का कार्य भी सम्मेलन की दृष्टि में है; परन्तु पर्याप्त धन के अभाव से इस ओर भी यथेष्ट उद्योग नहीं हो पाता।

सम्मेलन के आरम्भ किये हुए और सोचे हुए कार्यों की पूर्ति के लिए ५ लाख रुपयों की शीघ्र ही आवश्यकता है।

आपकी सेवा में मेरा यह नम्र निवेदन है कि सम्मेलन के विविध कार्यों के सम्पादन के लिए धन के संग्रह का जो एक सुलभ उपाय सोचा गया है, उसकी सिद्धि में आप भी यथाशक्ति सहायता दीजिए।

सम्मेलन ने एक-एक रुपये की रसीदें छपाई हैं और पचीस-पचीस रसीदों की एक-एक रसीद-बही तैयार की गई है।

आप जैसे प्रभावशाली हिन्दी-प्रेमी के लिए यह बहुत ही सुगम होगा कि कम-से-कम एक रसीद-बही सम्मेलन से मँगाकर अपने मित्रों से एक-एक रुपया सहायतार्थ लेकर सम्मेलन के पास भेज देने की कृपा करें। आपके ऐसा करने से सम्मेलन को पर्याप्त आर्थिक सहायता मिल जायगी।

रामजीलाल शर्म्मा
प्रधान मंत्री

---

हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग द्वारा प्रकाशित।
सूरजप्रसाद खन्ना के प्रबन्ध से हिन्दी-साहित्य प्रेस प्रयाग में मुद्रित

तार का पता—"सम्मेलन" प्रयाग रजिस्टर्ड नं० ए. ६२६.

भाग १२ अङ्क ३; कार्तिक १९८१

संपादक

**वियोगी हरि**

प्रकाशक

**हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग**

वार्षिक मूल्य २) प्रत्यंक ≡)

# विषय-सूची



---

# सम्मेलन-पत्रिका के नियम

१—'पत्रिका' प्रत्येक मास की पूर्णिमा को प्रकाशित हो जाती है। यदि किसी मास को कृष्णा १० तक उस मास की पत्रिका न मिले, तो पत्र द्वारा सूचना देनी चाहिये।

२—'पत्रिका' का वर्ष भाद्रपद से प्रारम्भ होता है। वर्ष के बीच में, किसी भी मास में, ग्राहक होने पर उस वर्ष के पूर्व मासों के अंक अवश्य लेने पड़ते हैं। डाक-व्यय-सहित पत्रिका का वार्षिक मूल्य २=) है। २) मनीआर्डर द्वारा भेजनें से अधिक सुभीता होता है।

३—यदि दो-एक मास के लिए पता बदलवाना हो तो डाकखाने से प्रबन्ध कर लेना चाहिए, और यदि बहुत दिनों के लिए बदलवाना हो, तो हमें उसकी सूचना देनी चाहिए, अन्यथा 'पत्रिका' न मिलने के लिए हम उत्तरदायी न होंगे।

४—लेख, कविता, समालोचना के लिये पुस्तकें—"सम्पादक सम्मेलन पत्रिका, पोस्ट बाक्स नं० ११ प्रयाग" के पते से वा प्रबन्ध सम्बन्धी पत्र—"प्रचार-मन्त्री हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, पोस्ट बाक्स नं० ११ प्रयाग" के पते से और पत्रिका का मूल्य, विज्ञापन की छपाई आदि का द्रव्य "अर्थमंत्री, हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन पोस्ट बाक्स नं० ११ प्रयाग" के पते से आना चाहिए।

५—प्राप्त कविता और लेखों के घटाने, बढ़ाने एवं प्रकाश करने वा न करने का पूर्ण अधिकार सम्पादक को है।

---

## सम्मेलन-पत्रिका में
## विज्ञापन की दर

| | १ मास | ६ मास | एक वर्ष |
|---|---|---|---|
| एक पृष्ठ | ५) | २५) | ४५) |
| आधा पृष्ठ | ३) | १५) | २८) |

## आवश्यक सूचना

६—सम्मेलन द्वारा प्रकाशित पुस्तकों की बिक्री पर कमीशन की दर निम्नलिखित अनुसार होगी।

( क ) १०) से नीचे की पुस्तकों पर कुछ भी कमीशन न दिया जायगा।

( ख ) १०) से २५) तक की पुस्तकों पर दो आना रुपया कमीशन दिया जायगा।

( ग ) २५) से ऊपर १००) तक २०) रुपया सैकड़ा।

( घ ) १००) से ऊपर, २५) सैकड़ा।

( ङ ) ५००) या अधिक की पुस्तकें लेने पर तृतीयांश कमीशन अर्थात् ३३।-)४ दिया जायगा।

(नोट) सम्मेलन से सिर्फ़ सम्मेलन द्वारा प्रकाशित पुस्तकें बेची जाती हैं। अतः सर्वसाधारण को चाहिए कि वे सम्मेलन से केवल सम्मेलन द्वारा प्रकाशित ही पुस्तकें मगावें। अन्य प्रकाशकों की पुस्तकें हमारे यहाँ नहीं मिलतीं।

## सुलभ-साहित्य-माला

इस माला का उद्देश्य यह है कि हिन्दी में उत्तमोत्तम ग्रन्थों के सुन्दर और सस्ते संस्करण इस ढंग से निकाले जायँ कि जिससे हिन्दी-प्रेमी इन ग्रन्थ-रत्नों को सुलभता से पा सकें। यह माला प्राचीन साहित्य का विशेष रूप से उद्धार करने की चेष्टा कर रही है। इसमें प्राचीन साहित्यक, दार्शनिक, सामाजिक, राष्ट्रीय आदि उत्तमोत्तम ग्रन्थ सिद्धहस्त लेखकों को उचित पुरस्कार देकर लिखाये और प्रकाशित किये जाते हैं। अब तक इस माला में निम्नलिखित पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं—

पुस्तकें मिलने का पता—हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, पोस्ट बाक्स नं० ११ प्रयाग।

## १—भूषण-ग्रन्थावली ( सटिप्पण )

भूषण कवि हिन्दी में वीर रस के एक मात्र कवि हैं। इनकी कविता में भाव हैं, ओज है और प्राण है। परन्तु अधिकांश में वह इतनी क्लिष्ट है कि उसका समझना कठिन हो जाता है। इस कठिनाई को दूर करने के लिए हिन्दी के सुपरिचित विद्वान् पं० रामनरेशजी त्रिपाठी ने क्लिष्ट स्थानों पर टिप्पणी दे दी हैं और कठिन शब्दों का अर्थ लिख दिया है। कविता में सूत्र रूप से वर्णित ऐतिहासिक घटनाओं का भी यथास्थान स्पष्ट उल्लेख कर दिया गया है।

यदि भारतीय वीरता का पता चलाना हो, यदि जातीय ज्योति को जगमगाना हो, यदि साहित्यक आनन्द लूटना हो, तो इस ग्रन्थावली को एक बार अवश्य पढ़ जाइए। इसमें अलङ्कार शास्त्र का अनुपम ग्रन्थ शिवराजभूषण, शिवा-बावनी, छत्रसाल-दशक तथा भूषण कवि के फुटकर कवित्तों का संग्रह किया गया है। यह ग्रन्थावली साहित्य-सम्मेलन की मध्यमा परीक्षा में भी स्वीकृत है। पृष्ठ-संख्या १८४, मूल्य ॥-)

## २—हिन्दी-साहित्य का संक्षिप्त इतिहास

लेखक—श्री० मिश्रबन्धु

हिन्दी भाषा और साहित्य का क्रमशः विकास कैसे हुआ, उसने कौन-कौन से रूप पकड़े, किन-किन बाधाओं एवं साधनों का उसे सामना करना पड़ा, वर्त्तमान परिस्थिति क्या है आदि गम्भीर विषयों का पता इस पुस्तक से भली भाँति चलता है। अपने ढंग की यह पहली पुस्तक है। "मिश्रबन्धु-विनोद" रूपी महासागर से मथन कर यह इतिहासामृत निकाला गया है। यह भी हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की मध्यमा परीक्षा में स्वीकृत है। पृष्ठसंख्या १८८, मूल्य ।=)

**पुस्तकें मिलने का पता—हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन,**
**पोस्ट बाक्स नं० ११ प्रयाग।**

## ३—भारतगीत

लेखक—पं० श्रीधर पाठक

पाठकजी की रसमयी-रचना से किस सहृदय साहित्य रसिक का हृदय रसप्लावित न होता होगा? आपकी गणना वर्त्तमान हिन्दी-साहित्य के महारथियों में है। आपकी राष्ट्रीय कविता नवयुवकों में जातीय जीवन सञ्चार करनेवाली है। प्रस्तुत पुस्तक पाठकजी के उन गीतों का संग्रह है, जिन्हें उन्होंने समय-समय पर स्वदेश-भक्ति की उमंग में आकर लिखा है। इसकी प्रस्तावना साहित्य-मर्मज्ञ बाबू पुरुषोत्तमदासजी टंडन ने लिखी है। यह पुस्तक राष्ट्रीय विद्यालयों के बड़े काम की है। पृष्ठसंख्या ६४, मूल्य ≡)

## ४—भारतवर्ष का इतिहास

### ( प्रथम खण्ड )

लेखक—श्री मिश्रबन्धु

यह इतिहास प्राचीन और अर्वाचीन काल से सम्बन्ध रखता है। इसमें पूर्व वैदिक काल से सूत्र काल तक अथवा ६०० संवत् पूर्व से ५० संवत् पूर्व तक की घटनाओं का उल्लेख है। अब तक हिन्दी में भारतवर्ष का सच्चा इतिहास एक भी नहीं था। विदेशियों के लिखे हुए अपूर्ण और पक्षपातयुक्त इतिहासों के पढ़ने से यहां के नवयुवकों को अपने देश के प्रति अश्रद्धा उत्पन्न हो जाती है। ऐसे समय में हिन्दी के सुप्रसिद्ध लेखक मिश्रबन्धुओं ने बड़ा काम किया है। मध्यमा परीक्षा के इतिहास विषय में यह पुस्तक निर्दिष्ट है। जिल्दवाली पुस्तक, जिसकी पृष्ठसंख्या ४०६ है, मूल्य केवल १॥)

---

पुस्तकें मिलने का पता—हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, पोस्ट बाक्स नं० ११ प्रयाग।

## ५—राष्ट्रभाषा

संपादक—श्री 'भारतीय हृदय'

कुछ समय हुआ, महात्मा गांधी ने यह प्रश्न किया था कि, क्या हिन्दी राष्ट्र-भाषा हो सकती है? इसके उत्तर में भारत के प्रत्येक प्रान्त के बड़े-बड़े विद्वानों और नेताओं ने पक्षपातरहित सम्मतियाँ दी थीं, कि निःसन्देह हिन्दी ही राष्ट्रभाषा होने योग्य है। उन्हीं सब अमूल्य सम्मतियों का संग्रह इस पुस्तक में किया गया है। इसके विरोधियों का भी यथेष्ट खण्डन हुआ है। इस विषय के व्याख्यानों का भी इसमें सङ्कलन कर दिया गया है। हिन्दीभाषा के प्रेमियों के लिए यह पुस्तक प्राणस्थानीय नहीं तो क्या है? पृष्ठसंख्या २००, मूल्य ॥)

## ६—शिवा-बावनी

महाकवि भूषण के वीररस सम्बन्धी ५२ कवित्तों का उत्तम संग्रह। इन कवित्तों के टक्कर के छन्द शायद ही वीररस के साहित्य में अन्यत्र कहीं मिलें। महाराष्ट्रपति शिवाजी की देशभक्ति और सच्ची वीरता का यदि चित्र देखना हो, तो एक बार इस छोटी सी पोथी का पाठ अवश्य कर जाइए। शब्द एवं भाव-काठिन्य दूर करने के लिये कवित्तों की सुबोधिनी टीका, टिप्पणी और अलङ्कार आदि साहित्य से सम्बन्ध रखनेवाली आवश्यक बातों का इसमें उल्लेख कर दिया गया है। साहित्य-सम्मेलन की प्रथमा परीक्षा में यह पुस्तक रखी गयी है। पृष्ठसंख्या ५४, मूल्य ≡)

## ७—सरल पिङ्गल

ले० — श्री पुत्तनलाल विद्यार्थी
श्री लक्ष्मीधर शुक्ल, विशारद

इस पुस्तक में पिङ्गलशास्त्र के गूढ़ रहस्यों को सरल और सुन्दर भाषा में समझने का प्रयत्न किया गया है। छन्दों के उत्तम उदाहि-

रण भी दिये गये हैं। अन्त में संस्कृत छन्दों का भी संक्षेप में दिग्दर्शन करा दिया गया है। पृष्ठ संख्या ५८, मूल्य ।)

## ८—सूरपदावली

(सटिप्पण)

श्री सूरदासजी के १०० अत्युत्तम पदों का अपूर्व संग्रह, जो हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की परीक्षा में स्वीकृत भी है। मूल्य ।)

## ९—भारतवर्ष का इतिहास

(द्वितीय खण्ड)

लेखक—श्री मिश्रबन्धु

इसमें ५०० संवत् पूर्व से १२५० संवत् तक की घटनाओं का वर्णन किया गया है। भारतवर्ष के उत्थान-पतन के क्रम का पता इस पुस्तक से जैसा कुछ चलता है, यह पढ़ने से ही मालूम होगा। हिन्दु-समाज की उन्नति और अवनति, इस देश में स्वदेशी और विदेशी भावों का आविर्भाव तथा धार्मिक जीवन की महत्ता आदि जानने योग्य आवश्यक विषयों का ज्ञान इससे पूर्णतः हो सकता है। सुन्दर छपाई, कपड़े की जिल्द, पृष्ठसंख्या ४४८, मूल्य २)

## १०—पद्य-संग्रह

संपादक { श्री ब्रजराज एम. ए., बी, एस, सी., एल. एल. बी.
श्री गोपालस्वरूप भार्गव एम. एस. सी.

आधुनिक खड़ी बोली के प्रसिद्ध-प्रसिद्ध कवियों की कविताओं का सुन्दर संग्रह। ये कविताएँ विद्यार्थियों के बड़े काम की हैं। संग्रह सामयिक और उपादेय है। यह पुस्तक हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की प्रथमा परीक्षा के साहित्य में स्वीकृत है। पृष्ठ संख्या १२८ मूल्य ।≡)

पुस्तकें मिलने का पता—हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, पोस्ट बाक्स नं० ११ प्रयाग।

## ११—संक्षिप्त सूरसागर

संम्पादक—श्री वियोगी हरि

सूरदासजी रचित सूर-सागर से ५०० पद-रत्न चुन कर इसमें एकत्र किये गये हैं। जहाँ तक हो सका है, कई प्रतियों से पदों का पाठ शुद्ध किया गया है। प्रत्येक पद की पाद-टिप्पणी भी लगा दी गयी है। इसकी प्रस्तावना हिन्दी-साहित्य के महारथी सुप्रसिद्ध विद्वान्

**श्री राधाचरणजी गोस्वामी**

ने लिखी है। सागर की थाह लेना सहज नहीं है। उसे पार कौन कर सकता है? तथापि बिना शोभा देखे रहा नहीं जाता। अब तक सब के अनुशीलन करने योग्य सूरसागर का सुन्दर और सुलभ संस्करण नहीं निकला था। लोग इसके रसास्वादन के लिये लालायित हो रहे थे। सम्मेलन ने इस अभाव को दूर कर हिन्दी-साहित्य-रसिकों की पिपासा शान्त करने की यथाशक्ति चेष्टा की है। पुस्तक के अन्त में लगभग १०० पृष्ठ की सूरदासजी की जीवनी तथा काव्य-परिचय जोड़ा गया है। उनकी जीवनी की मुख्य-मुख्य घटनाओं का पूरा-पूरा उल्लेख आगया है। कविता की सुन्दरता भी पर्याप्त रूप से दिखला दी गई है। पदों में आई हुई अन्तर्कथाएँ भी लिखी गयी हैं। यह पुस्तक हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की उत्तमा परीक्षा में स्वीकृत है। एण्टिक काग़ज़ का जिल्ददार संस्करण, पृष्ठसंख्या ४२५, मूल्य २)

## १२—विहारी-संग्रह

सम्पादक—श्री वियोगी हरि

कविवर विहारीलाल की सतसई से प्रथमा परीक्षा के विद्यार्थियों के लिए यह छोटा सा संग्रह तैयार किया गया है। जहाँ तक सम्भव हुआ है, इसमें शृंगार रस के दोहों का समावेश नहीं किया गया है, किन्तु ऐसे दोहों का संग्रह किया गया है, जो बिना

**पुस्तकें मिलने का पता—हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, पोस्ट बाक्स नं० ११ प्रयाग।**

किसी सङ्कोच के हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की प्रथमा परीक्षा के परीक्षार्थियों को पढ़ाए जा सकते हैं। पृष्ठसंख्या ६४, मूल्य ≡)

## १५—ब्रज-माधुरी-सार

सम्पादक—श्री वियोगी हरि—इस पुस्तक का विषय इसके नाम ही से प्रकट होता है। इसमें ब्रजभाषा की कविता का सार सङ्कलन किया गया है। इस संग्रह में चार विशेषताएँ हैं :—

( १ ) इसमें सूरदासजी से लेकर आधुनिक काल के स्वर्गीय सत्यनारायणजी तक की भावपूर्ण कविताओं का संग्रह किया गया है।

( २ ) इसमें कुछ ऐसे कवियों की रचनाओं का रसास्वादन भी कराया गया है जो अभी तक कहीं प्रकाशित नहीं हुई थीं।

( ३ ) इस ग्रन्थ में यथेष्ट पादटिप्पणियां लगा दी गयी हैं, जिनकी सहायता से साधारण पाठक भी लाभ उठा सकते हैं।

( ४ ) इसके प्रारम्भ में प्रत्येक कवि का संक्षिप्त जीवनचरित और उसकी कविता की संक्षिप्त आलोचना भी की गई है।

पृष्ठसंख्या ६३२, मूल्य जिल्दवाले संस्करण का केवल २)

## १६—पद्मावत ( पूर्वार्द्ध )

सम्पादक—श्री लाला भगवानदीन

यह हिन्दी के सुप्रसिद्ध कवि मलिक मुहम्मद जायसी कृत पद्मावत का पूर्वार्द्ध है। इस भाग में पहले खण्ड से लेकर ३४वें खण्ड तक समावेश हुआ है। सम्पादक महोदय ने इस ग्रन्थ में इतनी यथेष्ट पादटिप्पणी लगा दी है कि अब इस प्राचीन काव्य का रसास्वादन करना प्रत्येक कविता-प्रेमी के लिए सुलभ हो गया है। अन्त में एक संक्षिप्त शब्दकोश भी जोड़ दिया गया है। पृष्ठसंख्या लगभग २००; मूल्य साधारण जिल्द का १) और जिल्दवाली का १।)

पुस्तकें मिलने का पता—हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन
पोस्ट बाक्स नं० ११ प्रयाग।

भाग १२ } कार्तिक, संवत् १९८१ { अङ्क ३

# दैन्य-प्रलाप

## पद

देखहु निज करनी की ओर।  
लखहु न करनी जीवन की कछु एहो नंदकिसोर॥  
अपनाए की लाज करहु प्रभु लखहु न जनके दोस।  
निज बाने को बिरद निबाहौ तजहु हीन पर रोस॥  
दीनानाथ दयाल जगतपति पतित-उधारन नाथ।  
सब विधि हीन अधम हरिचंदहिं देहु आपुनो हाथ॥

—भारतेन्दु हरिश्चन्द्र

## मंजु माधुरी

अरे मस्त महबूब नन्द के जिस द्रुम नजर करेगा,
दे उछाह दिलदार यार दिल आनँद अंग भरेगा।
मैं मुशताक हुआ तेरे पर तू तन बिपत हरेगा।
आशिक ये "नवनीत" यार कह किसके ढार ढरेगा॥

बेंदी भाल लाल अलकावलि असित स्याम मन मोहै।
भौंह कमान बान नैनन सर मारत मैन मनो है॥
गोल कपोल उरोजन की छबि आब गुलाब न सोहै।
"नीत" आप तन चितै चन्द फिर कहै चन्द ये को है॥

कविरत्न नवनीत चतुर्वेदी

---

## तिल-वर्णन

देखि मुख अंबुज अनूप ओप कारो तिल
बात नेकु आई ना समझ में अजान की।
फेरि कै कियो जो गौर पेखि कै निकाई नीकी
भाई चतुराई चतुरानन सुजान की॥
कलित बनाय कै मुखारबिन्द बिन्दु दीनों,
भाल पै करी है मानों छाप बनिजान[१] की।
कोइ कौशिक[२] जो आवै जग दूसरो बसावै,
माल मेरे को न पावै गति ऐसी अनुमान की॥

(२)

केते कहैं काम धरि लघुरूप कीनों बास,
भाव भरि जान लूटै गाहक अजान की।

१. ट्रेड मार्क। २ विश्वामित्र; उल्लू।

केते कहैं अमल कपोल में दिखाई देत,
नीलिमा लवंग रंग खाए मुख पान की ॥
होति है रतौंधी दूजें बुद्धि ह्वै है औंधी, ताते
बात ना सुझात मेरे प्रेम के प्रमान की ।
बूड्यो रूप-सागर में मेरो यह कारो मन,
बात परमान मानो सपथ सुजान की ॥

—साहित्यरत्न गुरुप्रसाद पांडेय बी. ए.

---

# अनुराग-वाटिका

## दंडक

अजहुँ मन मूढ़ ! अनुराग-अंबुधिहिं अवगाहि
हरु शोक-संताप-तापं ।
प्रेम-पीयूष करु पान आकंठ नित,
शमय दुखदाप-परिताप-पापं ॥ १ ॥
सरस-रस-रासि जहँ भरित अति अमल जल,
करुण-कल्लोल लहि लहर लहरै ।
प्रानपति पीउ पूरन कलानिधि निरखि
नित्य उर उमँगि छवि-छटा छहरै ॥ २ ॥
परम आसक्त मन-मीन लवलीन जहँ,
ललित लावन्य सोइ ग्राह ग्राही ।
सुदृढ़-संकल्प-सुचि-कमठ दुर्द्धर्ष अति
ज्ञान-विज्ञान-गिरि मेरु-वाही ॥ ३ ॥
मंजु माधुर्य मुक्तावली चुगत जहँ
हंस स्वच्छन्द निर्द्वन्द्व नेही ।
अश्रु कंपादि-वर-विहँग विलसत सदा
देखि हुलसत हृदय दिव्य देही ॥ ४ ॥

सुरत-कल-कमल रसबलित मुकुलित जहाँ
मुखर-मृदु-मधुप-गुंजार न्यारी।
बहत नित मंद मकरंदमय मलययुत
मरुत सुख-शान्ति-सौभाग्य-कारी ॥ ५ ॥
विलसि उल्लासिनी भाव-भागीरथी
मिलति भरि अंक आनंदरासी।
अहह ! धनि धन्य स्वर्गीय संगम यहै
करत जहँ केलि गोलोक-वासी ॥ ६ ॥
धारि या पंथ पै पाउँ रणबाँकुरे !
जनम किन सहज ही सफल कीजै।
प्रकृति अरु काल को जाल विकराल
तेहि काटि कैवल्य-निधि लूटि लीजै ॥ ७ ॥
अगम, अव्यक्त, मन बचन की गति नहीं
वेद ह्व मौन ह्वै करत नाहीं।
लेत तहँ पीउ मुखचंद-रसकंद हरि
बिहरि अनुराग-रस-सिंधु माहीं ॥ ८ ॥

---

## पद

जोपै या रस सों रति नाहीं।
तौ त्रिवर्ग अपवर्ग स्वर्ग सुख सबै बिफल जगमाहीं ॥
छांड़ि विषय-विष-बेलि मन-मधुप हरि-पद-पदुम बसावै।
प्रीतम-मुख-ससि-किरिन-जाल मधि मानस-मीन फँसावै ॥
रूप-रँगीली प्रेम-जोगिनी ह्वै हिय-बसन रँगावै।
माँगि मधुकरी नेह-नगर में दरसन-अलख जगावै ॥
बिधि-निषेध को फंद काटि कै सुख-दुख सम करि राखै।
स्यामलतन-घन चित-चातक करि या रसकों कोउ चाखै ॥
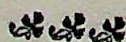
पुरानी परी प्रेम-पहिचानि ।
कितै गये वै दिन रस-रँग के, कितै गई रसखानि ॥
जिन नैननि बिच राखि साँवरो दीन्हें पलक-कपाट ।
तिनमें झाईं परी आज सखि हेरत-हेरत बाट ॥
जिन श्रवननि पिय-बैन सरस नित झरत रहे जिमि फूल ।
तिनमें प्रेमकथा अब सजनी सालति जैसे सूल ॥
जा रसना सों टेढ़ेमेढ़े कहे स्याम सों बैन ।
तामें छाले परे सँदेसो कहत-कहत दिन-रैन ॥
कहा फिरैंगे वे दिन कबहूं लखिहौं जब रसधाम ।
तपनि दृगन की तबै सिरैहै बरसै जब घनस्याम ॥

❦❦❦
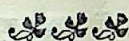
गुमानी ! काहे तू इतरात ।
घोरत बिष रस माहिं बिसासी, करत न सूधे बात ॥
जौलौं सधति न साध तिहारी सौ-सौ सौंहैं खात ।
फेरि बोलाये हू नहिं बोलत टेढ़ो-टेढ़ो जात ॥
इन आंसुन को मोल न जानत, नहिं पर पीर पिरात ।
नैसुक दया न तोहि निरदई, चूकत नहिँ निज घात ॥
वैसेहि हम छबि-छाक-छके नित छिनछिन सुरत हिरात ।
अब छकाय तोहि कहा मिलैगो जो एतो इठलात ॥

---

( क्रमशः )
वि० ह०

# हित-सिद्धान्त
## अथवा
## श्री हित हरिवंशजी के फुटकर पदों की टीका

गोस्वामी श्रीहित हरिवंशजी महाराज वैष्णव-संसार और ब्रजभाषा साहित्य में सुप्रख्यात हैं। उनकी रचना-माधुरी का आस्वादन विरले ही मधुव्रतों ने किया है। गोस्वामीजी की हित-चतुरासी ( चौरासी ) के अमृतरस में डूबे हुए पदों का पारायण कर किस के हृदय में अपूर्व आनंद का आविर्भाव न हुआ होगा ? भगवद्विमुख-

नास्तिक जनों की बात छोड़िये। चतुरासी के अतिरिक्त गोस्वामीजी महाराज ने साधारण बद्ध जीवों के मुक्त करने के लिए सिद्धान्त-नौका का भी निर्माण किया है। सिद्धान्त-संबंधी आप के २८ पद प्राप्य हैं। कुछ दोहे भी हैं। यह पद बड़े ही क्लिष्ट हैं। इन का भावार्थ समझ लेना हँसी-खेल नहीं है। इन पदों पर हितकुलाश्रित भागवत जनों ने कई टीकाएँ रची हैं। आज हम एक सुन्दर टीका की झलक दिखाने का प्रयत्न करते हैं। टीकाकार हैं श्रीप्रियादासजी। यहाँ नाभाकृत भक्तमाल के टीकाकार प्रियादास से तात्पर्य नहीं है। यह प्रियादास उन प्रियादास से बहुत पीछे हुए हैं। यह संस्कृत के अच्छे विद्वान् थे। इन्होंने सांप्रदायिक ग्रन्थों का भी खूब मंथन किया था। भाषा प्रौढ़ और सरस लिखते थे। शैली भी विस्तृत और चित्ताकर्षिणी होती थी। इन्होंने कुछ कविता भी की है। यह टीका पटना में प्रारंभ होकर वृन्दावन में समाप्त हुई थी, जैसा कि लिखा है—

> प्रारंभ पटना में कियो गुरुपद सीस नवाय।
> श्री वृन्दावनधाम में यह पूर्यौ सुखदाय॥

नीचे इस टीका का कुछ अंश उद्धृत किया जाता है—

"सकल वेद छिपाइ छिपाइ कैं जाकौ बरनन करै हैं अरु जहां समस्त अवतारन के मूल श्रीराधावल्लभजी श्रीवृन्दावन-निकुंज में सदा विहार करत रहत हैं। तहां ब्रह्मादिकनि कौ हू प्रवेश नाहीं। आन जीवन की कहा। तहां सहचरी जन केवल रहत हैं। तब श्री ललिताजी ने बिनती करी कि जामें संसारी जीवन कों हू यहां को सुष अनुभव होय। तब बंशी सहित एक रूप करि श्रीव्यास मिश्र के ग्रह श्रीहित हरिवंशजी आचार्यवर्य प्रगटे सो वा गुप्त रसकों श्रीराधासुधानिधि ग्रन्थ में प्रगट बरनन कियौ। फिर बिचार्यौ कि व्याकरण जाकौ पढ्यौ नाहीं है वे याकौ अर्थ कैसें जानैंगे काहे कि संस्कृत ग्रन्थ है तातैं भाषा में श्रीमच्चौरासी पदन करिकैं वा रसकों बरनन कियौ। फिर बिचार्यौ कि या रसकों जीव कैसें पावै काहे कि इनकों महा भ्रम अनादि अविद्या करि है रह्यो है तातैं भटकत डोलैं हैं तौ सिद्धान्त उपदेश करि कैं प्रथम भ्रम छुड़ाइ दैनो पाछे रस उपदेश करनो उचित है। तातैं स्फुट

पदन में पहिलें द्वादस चन्द्र इत्यादिक पदसों सिद्धान्त उपदेश कियौ पाछे रसकौ पद दिषायो।"

× × × × × ×

"केते कहत हैं कि भाषा वचन तौ प्रमाण नाहीं सो यह कहनो मूर्षता है काहे कि न्याय शास्त्र में गौतम मुनि कौ सूत्र है आप्तोपदेशः शब्द इति याकौ अर्थ यह है कि आप्त नाम सांचे कौ है तिन कौ कह्यो शब्द प्रमाण है और ये ही बात सांख्य पातंजल मीमांसा वेदादिक समस्त शास्त्र में कह्यो है। तातें सांचे कौ कह्यो संस्कृत अथवा भाषा सब ही प्रमाण है और झूठे को कह्यो संस्कृत अथवा भाषा कछू हू प्रमाण नाहीं।"

× × × × × ×

"दोइ सवैया करिकें नवग्रहादिक तें दुष सुष कछू होत नाहीं तातें अन्य सर्वानकौ आराधन छांड़ि कें एक श्रीकृष्ण ही कों भजनो यह सूचन कियो। तहां फेर कोऊ कहै कि श्रीकृष्ण कौ भजन कर्तव्य सिद्धान्त है। परन्तु दोइ मार्ग वेद में निरूपन किये हैं। एक व्यवहार और एक परमार्थ। ताकी व्यवस्था यह है कि आयुष्य कौ प्रमाण शत वर्ष कौ तामें चार भाग करनो। प्रथम पच्चीस वर्ष ताईं विद्याभ्यास करनों। अरु द्वितीय पच्चीस वर्ष ताईं धनादिक कौ संग्रह करनों। ऐसे पच्चीस वर्ष ताईं गार्हस्थ्य कौ समस्त व्यवहार करनों ता पाछे वानप्रस्थ आश्रम करिकें तपस्या करनी। तदनंतर संन्यास आश्रम लैकें परमार्थ बिचारनों यह क्रम है। अभी तौ हम सबन कौ व्यवहार ही कर्त्तव्य है। जब परमार्थ बिचारिबे कौ समय आवैगो तब श्रीकृष्ण कों भज लेंगे। यहां शंका दूर करिबे कों श्री हितजी छुप्पै कहत हैं।"

× × × × × ×

श्रीहितजी कहत हैं कंत अनंत करौ जो कोऊ इति अनंत नाम असंख्य कंत नाम जार करौ तौ करिबा करौ हम कहा कहैं। परन्तु अपनी साँची वात कहौं सो सब लोग सुनि यह जिय जाय भले सिर ऊपर हौंव प्रगट ह्वै नाची। यह जिय जाय तौ भले जाय वौ मेरे सिर

ऊपर है। जैसे कोऊ माननीय बात होय तौ लोग कहत हैं कि यह बात मेरे सिर ऊपर है तैसे यहां हू कह्यो।"

कहीं-कहीं पर इस टीका का विस्तार बहुत बढ़ गया है। किन्तु शैथिल्य कहीं भी नहीं आने पाया है। यदि इस टीका का शुद्ध संस्करण प्रकाशित हो जाय तो लोगों का बड़ा उपकार हो। हमें यह अलभ्य ग्रन्थ वृन्दावन-निवासी श्रीहितकुञ्जाश्रित बाबा परमानंददासजी से प्राप्त हुआ है। बाबाजी की इस कृपा के लिये हम उनके आभारी हैं। इसकी प्रतिलिपि सम्मेलन के वृहत्संग्रहालय में प्रस्तुत है।

---

# श्रीमान् पंडित राधाचरण गोस्वामी

महाप्रभु श्रीकृष्ण चैतन्य देव के एक शिष्य श्री गोपाल भट्ट गोस्वामी थे। भट्टजी के शिष्य दामोदरदास गोस्वामी और उनके शिष्य गोपीनाथ दास गोस्वामी हुए। हमारे चरितनायक की वंश-परंपरा इन्हीं गोपीनाथदासजी से चलती है। यह प्रतिष्ठित वंश गौड़ ब्राह्मण है। गोस्वामी राधाचरणजी के पिता पंडित गल्लूजी महाराज (गुणमंजरीदास) वृन्दावन में एक महापुरुष हो गये हैं। इनकी दूसरी स्त्री सूर्या देवीजी के गर्भ से, फाल्गुन कृष्ण ५, संवत् १९१५ को, गोस्वामी राधाचरणजी का जन्म हुआ था। गोस्वामीजी को आठ ही वर्ष के बाद मातृ-चरणों का वियोग सहना पड़ा। यों तो घर पर कुछ-न-कुछ पिताजी से आप पढ़ते ही थे, पर नियमित रूप से आप का अध्ययन संवत् १९२७ में आरम्भ हुआ। व्याकरण, काव्य और सांप्रदायिक ग्रन्थों का आप ने तीन-चार वर्ष में यत्किंचित् ज्ञान प्राप्त कर लिया। इसके बाद अँगरेज़ी पढ़ने का शौक लगा, पर शिष्य-मण्डली के हलचल के मारे आप को यह विचार मुल्तवी कर देना पड़ा। फिर भी आप ने संस्कृत-हिन्दी के अतिरिक्त बंगला, उर्दू, गुजराती आदि भाषाओं में योग्यता प्राप्त कर ली। अंगरेज़ी भी काम चलाने भर की सीख ली।

बाबू हरिश्चन्द्रजी के लेख पढ़ कर देश-सेवा की ओर इनकी प्रवृत्ति हुई। सं० १६३२ में आपने 'कविकुल-कौमुदी' नाम की, वृन्दावन में, एक सभा स्थापित की। इसी समय आप की पत्नी का देहान्त हो गया। पर आप अपने संकल्प-पथ पर ज्यों के त्यों डटे रहे। मित्रों के बहुत कहने-सुनने पर आप को अपना दूसरा विवाह करना पड़ा। उधर विचार-स्वातंत्र्य भी दिन पर दिन बढ़ने लगा। ब्राह्मसमाज के पक्ष के आप लेख लिखने लगे। पर बाबू हरिश्चन्द्र के एक गुप्त प्रेरित के प्रभाव से समाज से इन्होंने अपना सम्बन्ध तोड़ दिया। स्वामी दयानन्दजी से भी आप ने भेंट की थी। स्वामीजी को आप श्रद्धा की दृष्टि से देखते थे।

संवत् १६३४ से गोस्वामीजी ने साहित्य-क्षेत्र में विशेष रूप से भाग लेना आरम्भ किया। आप के लेख प्रायः प्रत्येक हिन्दी-पत्र में छपने लगे। लेख बड़े ही गम्भीर, चुटीले और प्रभावकारी होते थे। सब मिला कर आपने दो-ढाई सौ लेख लिखे होंगे। संवत् १६३६ में, जब भारतवर्ष में शिक्षा-कमीशन बैठा और उर्दू के हिमायती हिन्दी को हटाने के लिए तुल गये, तब गोस्वामीजी ने हिन्दी का पक्ष लेकर २१००० लोगों के हस्ताक्षर कराके शिक्षा-कमीशन के पास एक मेमोरियल भेजा था।

संवत् १६४० में आपने 'भारतेन्दु' नामक एक मासिक पत्र निकाला। यह उच्च कोटि का पत्र था। बाबू बालमुकुंद गुप्त ने इस पत्र की बड़ी प्रशंसा की थी। इस में प्रकाशित परिहास सचमुच ही देखने योग्य हैं। दुर्भाग्यवश, यह पत्र शीघ्र ही अस्तंगत हो गया।

संवत् १६४२ में गोस्वामीजी को नवद्वीप की पंडित-मंडली ने 'विद्या-वागीश' की उपाधि से विभूषित किया। संवत् १६४३ में आप मथुरा से प्रतिनिधि होकर कलकत्ते की कांग्रेस में सम्मिलित हुए। २० वर्ष तक आप बराबर राष्ट्रीय महासभा में भाग लेते रहे। संवत् १६४२ में आप वृन्दावन से म्यूनिसिपल कमिश्नर चुने गये, जिस पद पर आप कई साल रहे। वृन्दावन के आप आनरेरी मजिस्ट्रेट भी रह चुके हैं। वृद्धावस्था में आप को एक महादारुण दृश्य देखना

पड़ा। लगभग आठ वर्ष हुए, आपके दो होनहार पुत्र-रत्नों का गोलोक वास हो गया ! इस मर्माघात के कारण आप एक प्रकार से साहित्यिक एवं सामाजिक कार्यों से अलग-से होगये हैं। आजकल आप भगवद्भजन में ही लीन रहते हैं।

गोस्वामीजी बड़े ही मिष्टभाषी, स्पष्टवादी और मिलनसार हैं। आपके पास बैठ कर उठने को जी नहीं चाहता। आपके साथ वार्तालाप करने में सचमुच ही एक अनूठा आनंद आता है। गोस्वामीजी के सदृश सरसहृदय, भगवद्भक्त, साहित्यमर्मज्ञ और स्पष्टवादी हिन्दी-संसार में विरले ही पुरुष हैं।

गोस्वामीजी भारतेन्दुजी के खास अंतरंग मित्रों में से हैं। उन्हें आप बड़ी ही श्रद्धा की दृष्टि से देखते थे। साहित्य-कला में तो आप उन्हें अपना 'उस्ताद' मानते थे। आपने गद्य और पद्य दोनों में ही रचना की है। कविता में आपका उपनाम 'मंजु' है। व्रजभाषा-साहित्य के आप दिग्गज विद्वान् हैं। परिहास बेजोड़ लिखते हैं। मिस्टर बूट, भंग तरंग, बूढ़े मुँह मुहांसे, नापित स्तोत्र रेलवे स्तोत्र आदि प्रहसन पढ़कर आज भी लोगों के पेट में बल पड़ते हैं। नव भक्तमाल, निपट नादान, श्रृंगारतिलक आदि आप की पद्यात्मक पुस्तकें पठनीय हैं। श्रीचैतन्य-चरितामृत के कुछ अंश का आपने समादर अनुवाद किया है। कुछ उपन्यास भी आपने लिखे हैं। साहित्यके अतिरिक्त समाज-सुधार पर भी आपने दो-तीन पुस्तकें लिखी हैं। 'विदेश-यात्रा-विचार' और 'विधवा-विवाह-विवरण' नामक पुस्तकों में गोस्वामीजी ने बड़े ज़ोरों के साथ सामाजिक शिथिलता के दूर करने के उपाय मार्मिक शब्दों में लिखे हैं। इन स्वतन्त्र उद्गारों पर आपको लोकनिंदा रूपी पुरस्कार भी पर्याप्त मिला, पर आप अपने अटल मार्ग पर से ज़रा भी विचलित नहीं हुए। गोस्वामीजी की लेखनी में गज़ब का ज़ोर है। सुदर्शन-संपादक स्वर्गीय पंडित माधवप्रसादजी मिश्र ने आपको हिन्दी का 'बाण भट्ट' कहा था। स्वर्गीय पंडित बालकृष्णभट्ट भी आप की लेखन-चातुरी

पर मुग्ध थे। भारतेन्दुजी भी इन्हें अपना सहकारी कहकर प्रसन्न हुआ करते थे। इस वर्ष हिन्दी-संसार ने इस वयोवृद्ध व्रज-भाषास्तंभ और साहित्य के उद्भट आचार्य को सम्मेलन के सभापति-पद पर समासीन कर वास्तव में बहुत ही उपयुक्त और श्लाघ्य कार्य किया है।

गोस्वामीजी के रचे दो उत्तम पद्य उद्धृत करके यह लेख समाप्त किया जाता है।

कीरति-दुलारी सुकमारी बनवारी संग,
अमल अटारी बैठि बिज्जु जलधरसा।
सोभा लखै सघन घनन की बनन माहिं,
वाहिं मेलि केलि करै सौरभ से सरसा॥
रूप रमनीय घटा बरसै निकुंज 'मंजु',
पुंज अलबेलिन के होय रहे हरसा।
बेलिन बढ़ायबे कों मानगढ़ ढायबे कों,
कोक के पढ़ायबे कों आई फेरि बरसा॥

एरी चलु वेग ही जमुनतट मेरी बीर,
बहत समीर धीर सोहै बंसीबट राज।
करत कलोल बोल बोल मोर कीरादिक,
डोल डोल भरत चहूंधा चारु छबि छाज॥
पहिरि दुकूल अनुकूल त्यों लहरदार,
भुजमूल मंजु कंचुकी औ अभरन साज॥
नयन सफल काज लाज त्याज याही जाम,
झूलि रहे स्यामा स्याम सरस हिंडोरे आज॥

---

# छतरपूर के पान

( शेषांश )

पारी के लिये भूमि पथरीली पसन्द की जाती है। बुन्देलखंड में भूमि मुख्यतया दो प्रकार की होती है, अर्थात् लाल और काली। काली पृथ्वी का रवा मोटा होता है और इसी से ऐसी भूमि मोटे की ज़मीन कहलाती है। उसमें पानी जल्दी नहीं सोकता और वर्षा में वह कीचड़दार तथा रपटीली हो जाती है। गर्मियों में यह ज़मीन फट जाती है और इसमें गढ़े तथा दरारें बन जाती हैं। लाल ज़मीन पानी को जल्द सोकती है तथा पुष्ट होती है। उसकी कच्ची सड़क पक्की सड़क के कुछ-कुछ समान होती है। मोटे में कपास, गेहूँ, चना, अलसी, जुवार, अरहर आदि की अच्छी उपज होती है। उपज के लिये वह बहुत अच्छी है। वह पानी कम चाहती है और शीत बहुत दिन तक रखती है। मोटे की औवल ज़मीन मार कहलाती है तथा दोम काबर। मोटा तीसरे दर्जे में है। लाल ज़मीन औवल पडुवा है और दोम रांकड़। पान के लिये दोम पडुवा या औवल रांकड़ चाहिये। बरेजा सिंचाई खूब मांगता है, सो तालाब के जितना ही निकट हो उतना ही अच्छा होता है। पहाड़ की ढलवां भूमि इसके लिये बहुत अच्छी होती है, क्योंकि माही पुश्त करने के लिये उसमें अधिक परिश्रम की आवश्यकता नहीं पड़ती। जो भारी तालाब पन्द्रह-सोलह सौ बीघों का किसी रांकड़ भूमि पर ढलवां पहाड़ के निकट हो, वह बरेजों के लिये प्राण है। पहले ज़मीन के पेड़ काट कर तथा कुल भूमि को प्रायः एक हाथ गहरे तक खोद कर उसकी जरियां तथा पत्थर निकाल डालते हैं। फिर करीब छः इञ्ची गहरी लाल मिट्टी उसमें पूरी जाती है। यदि पहले ही से अच्छी लाल मिट्टी हो तोभी पास की भूमि से ऊँचा करने को चार इञ्ची लाल मिट्टी अवश्य डालेंगे। मिट्टी डाल कर तथा ढेले आदि फोड़ कर खेत की भूमि माही पुश्त (मछली की-सी पीठ) बनाते

हैं। कुवार-कातिक में खेत खुद कर और अगहन तक मिट्टी आदि पड़ कर माही पुश्त हो जाता है। खोदने तथा मिट्टी डालने का काम एक ही बार होता है। जब एक बार बरेजा बन कर तीसरी साल गिरता है और उस वर्ष उसमें साधारण धान्य बोया जाता है तब बरेजे के लिये तैयार होने में फिर से खोदने की आवश्यकता नहीं पड़ती वरन् केवल कुछ मिट्टी डाल कर बराबर कर देते हैं। अगहन से फाल्गुन तक कोरवा गड़ कर टट्टी आदि तैयार हो जाती हैं। कोरवा गाड़ने में पंडित से सुदिन पूछ कर जिसके नाम पहली थून गाड़ने का शकुन उठता है उसी के हाथ से वह गाड़ा जाता है। कोरो को ही थून भी कहते हैं। पहली थून गाड़ने में सब को गावँ में बोलौवा दिया जाता है तथा बड़े गाजे-बाजे के साथ कोरो में पताका लगा कर थोकदार ले जाता है। फिर जिसके नाम शकुन उठा हो वह खेत में झंडीवाला कोरो गाड़ता है। वह झंडी जब तक आप-से-आप गिर न पड़े तब तक लगो रहती है। फिर ५) से १०) तक के गुड़ का प्रसाद बँटता है। यह खर्चा सरकार से दिया जाता है। ऐसे खर्चों के लिये एक फंड कायम रहता है। जिसे मलवा कहते हैं। उसी से ये व्यय किये जाते हैं। माघ या फाल्गुन में पान बोया जाता है। कोरवा गड़ते ही सिँचाई शुरू हो जाती है। गरमी में प्रतिदिन दो या तीन बार प्रत्येक पारी की सिँचाई होती है। वर्षा में खाद डाली जाती है। जाड़े में, हर पारी में, प्रतिदिन एक बार सिँचाई होती है और वर्षा में जैसी आवश्यकता हुई वैसी होती है। मतलब यह रहता है कि लता बिलकुल कुम्हलाने न पावै। सींचने के लिये मज़दूर रहते हैं। जो आँथर तालाब से दूर हुए उन के लिये प्रायः २० पारियों में एक कुइयां (छोटा सा कुवाँ) चाहिये। रस्सी डाल कर कुएँ से पानी नहीं निकालते, वरन् नीचे तक जाने को बावड़ी की भाँति कच्ची सीढ़ियां रहती हैं जिन में जाकर लोग लोटियाँ भर कर कन्धे पर ले आते हैं। लोटिया मिट्टी का गोल भारी घड़ा होता है। जिस में मोहँगड़ इतना कम रहता है कि मालूम होता ही नहीं। एक लोटिया में पाँच-छह गैलन पानी आता है। उसी

को कन्धे पर लिये हुए मज़दूर हाथ लगाये हुए लता की जड़ में पानी छिरकते हैं। गरमी में १) में ८० से १०० लोटियाँ पानी मज़दूर छिरकते हैं, तथा जाड़ों में १) में १२५ से १५० तक। एक मज़दूर दिन भर में करीब १) कमा लेता है। लोटिया ढोने में जिन के कन्धे पक्के नहीं पड़ चुके हैं, वे छः-छः इंच तक फूल आते हैं तथा गर्दन पर गाँठ पड़ जाती है। यदि कन्धा आने में लोटिया ढोना छोड़ देवें तो और भी कष्ट हो, किन्तु लोटिया ढोना न छोड़ै तो करीब एक महीने में कन्धा ठीक हो जाता है। जो लोग ऐसे में लोटिया ढोना छोड़ देते हैं वे बहुत बीमार होकर कभी-कभी मर भी जाते हैं। उमर भर में एक ही बार कन्धा आता है। सब जातियों के मनुष्य लोटिया ढोते हैं। आज कल कुछ लोग तरसे ( मोट ) से भी पानी खींचने लगे हैं। पहले यह विचार था कि चमड़े के पानी से नागबेलि बिगड़ जाती है, किन्तु ऐसा हुआ नहीं। अब यह रीति बढ़ती जाती है, जिस से सिँचाई का व्यय बहुत कम हो जावैगा। कुछ लोग 'वाटर पम्प' भी लगानेवाले हैं। तालाब निकट होने पर भी बेड़ी नहीं लगाते और लोटिया से ही पानी जाता है। उस के दाम पानी की दूरी के अनुसार होते हैं। जो लोग अपनी पारी किसी साल न उठा सकें वे दूसरों को १०) से ५) तक पारी के हिसाब से प्रति त्रैवार्षिक के लिये दे देते हैं, जिसे बेचना कहते हैं। यह उठावन भी कहलाता है।

पान खुँट कर जब घर आते हैं तब दो सै। से तीन सौ पानों तक की एक ढोली बनती है। जो लोग ढोली बनाते हैं वे साजने वाले कहलाते हैं। उन की यह तारीफ़ है कि छोटे-बड़े पान इस प्रकार साजें कि थोड़ी जगह में बहुत पान आजावैं और गठिया में कसते समय एक भी पान टूटने न पावै। ये लोग १) से २) तक रोज़ाना मज़दूरी लेते हैं। ढोली बना कर पान गठिया में रक्खे जाते हैं। एक गठिया में १०० से १२५ तक ढोलियां आती हैं। फिर उनके ऊपर मामूली रद्दी कपड़ा लपेट कर पानी में तर करके ऊपर-नीचे घास डालकर तराज़ू का-सा एक बांस का पल्ला नीचे व एक ऊपर

रक्खा जाता है। बगल के वास्ते गोल-गोल बरतन-सा बांसों का होता है। उसी के ऊपर नीचे पल्ले और बीच में पान रख कर खूब कस देते हैं। फिर उसे रस्सियों से बांध देते हैं। इसी को गठिया कहते हैं। एक गठिया ३ या ३½ मन वज़नी होती है। एक गठिया वर्षा में ४०) या ५०) की, गरमी में १५०) तक की तथा जाड़े में ८०) या ६०) की बिकती है। प्रति गठिया निकास तथा चौधर में १-)॥ सरकारी महसूल लगता है। मलहरा महराजपूर में साधारण मज़दूर ।॥) रोज़ पैदा कर लेता है तथा एक औरत ।=) से ॥) तक नित्य कमा लेती है। इस प्रकार पानों का रोज़गार बरई लोगों को लाभकर होने के अतिरिक्त मज़दूरों को कलकत्ते का मज़ा देता है तथा सरकार को भी इससे अच्छा लाभ है। गठिया में रक्खा हुआ पान यदि पानी से तर रक्खा जावै तो पन्द्रह-बीस दिनों तक न सड़े। महोबे के पान आगरे, दिल्ली, मेरठ, मुरादाबाद, फ़र्रुखाबाद आदि को प्रायः जाते हैं। वहां से अन्य स्थानों को जाते या वहीं बिकते हैं।

बरेजों का काम अब केवल बरई ही नहीं करते, वरन् सभी जाति के लोग करने लगे हैं। जिस के २०० बरेजे हों वह ७५००) सालाना पैदा करता है। यहां के कर्तबी रोज़गारी देखते-देखते लखपती हो जाते हैं। हर बरेजे के सामने बरुवा बाबा का चबूतरा तथा हर मौज़े में नाना देवी का एक मन्दिर होता है। इन दोनों को हर बरेजे का मालिक अवश्य पूजता है—चाहे हिन्दू हो या मुसलमान। ये पानों के रोज़गारियों के देवता हैं। इन से पानों की रक्षा होती है। कोई बरई दूसरे की पारी में कभी पान की चोरी नहीं करता। बरेजों के अन्दर बदचलनी हो भी जाती है, किन्तु चोरी कभी नहीं होती। चाहे कितनी भी शत्रुता हो, किन्तु कोई बरई दूसरे के बरेजों को न तो आग लगावैगा, न हानि पहुँचावैगा। शत्रुता अन्य बातों में रहती है किन्तु बरेजे को हानि पहुँचाना बहुत ही अशुभ माना जाता है। कभी इस प्रकार की हानि पहुँचाने का कोई मामला नहीं पड़ा। नागपंचमी को हर एक बरई एक ही स्थान पर एकत्र होता है और सब मिल कर किसी ठेकेदार या थोकदार

के बरेजे में नागबेलि का पूजन करते हैं। उस पर बहुत सामान चढ़ता है। फिर ठेकेदार के यहां सब बरई एक-एक अधेले की कौड़ियां थोकदारों के द्वारा भेजते हैं। जिसकी कौड़ियां मंजूर हो गईं वह जाति में रहा और जिसकी नामंजूर हुईं वह कुजाति हो गया। फिर ठेकेदार तथा थोकदारों की सलाह से उससे उचित धन दण्ड में लेकर वह जाति में मिला लिया जाता है। इसके पीछे ठेकेदार के यहां उसी दिन सब की दावत होती है। ब्याह-काज में ठेकेदार या थोकदार पहले जिनिस छू लेवै तब रसोईं चढ़ सकती है। जब तक ठेकेदार प्रसन्न न हो तबतक, चाहै जो हो किन्तु, ब्याह तक नहीं होसकता। इतना प्रभाव होने पर भी ठेकेदार लोग गड़बड़ नहीं करते हैं। करीब आठ लाख रुपयों का पान केवल महाराजपूर की १०००० पारियों से हर साल बाहर जाता है। इसी प्रकार अन्य गांवों का निकास पारियों के अनुसार समझ लिया जा सकता है। पारियों के भीतर जाने में यदि कोई मनुष्य जल्दी से सीधा चला जावै तो लताएं टूट जावें। उनके भीतर आड़ा चलना होता है। अन्दर से देखने में पारी बहुत सुन्दर जान पड़ती है। उनके अन्दर ऐसी अच्छी सफ़ाई रक्खी जाती है कि साँप आदि नहीं आते हैं। यदि सेही अन्दर निकल जावै तो उस पारी की सब लताएँ कुम्हला जावैं। सुअर लताओं की जड़ें खोद डालता है। इन सब जन्तुओं से बचने का अच्छा प्रबन्ध रहता है। महाराजपूर तथा मलहरा के बरइयों को इतनी हिम्मत है कि १०००० नई पारियाँ उठाने को प्रस्तुत हैं। नये-नये तालाब रियासत से बनते जाते हैं और नई पारियाँ उठती जाती हैं। आबादी दिनों दिन बढ़ती जाती है। एक नया स्थान बसाने के लिये सं० १९७३ या ७४ में बताया गया था। अब वहाँ प्रायः २५० घर मौजूद हैं। इसीभाँति कई नये मोहल्ले बस चुके हैं। पान का व्यापार बड़ा ही लाभप्रद तथा लोक-हितकारी है।

"मिश्र बन्धु"

---

# मदरास-केन्द्र-कार्यालय के निरीक्षण का विवरण

( गतांक की पूर्ति )

## प्रचार-समिति

प्रधान-कार्यालय द्वारा भेजी गयी नियमावली के अनुसार यहाँ एक प्रचार-समिति भी है। यह नियमावली दोष-पूर्ण बतलायी जाती है और इसी के कारण यहाँ के प्रचारकों में बहुत दिनों से असन्तोष फैला हुआ है। सिद्धान्ततः भी इसमें त्रुटियाँ हैं। इसके अनुसार सङ्गठित प्रचार-समिति यहाँ के वैतनिक प्रचारकों की एक समिति मात्र है, जिसके नौ सदस्यों में से श्रीयुत के० भाष्यम् को छोड़ शेष सब-के-सब हमारे वैतनिक कर्मचारी हैं। हमारे अनुभव में यह बात आयी है कि यहाँ के कर्मचारियों में तथा व्यवस्थापक में जो सद्भाव का अभाव, प्रचारकों में असीम स्वातन्त्र्य-उपभोग की लालसा एवं समानता की कामना तथा कार्य-सम्बन्धी जो उच्छृङ्खलता है, वह नियमावली की त्रुटियों ही के कारण है। अतः नियमावली का संशोधन परमावश्यक है। त्रुटियों के अतिरिक्त वर्त्तमान परिस्थिति को ध्यान में रखते हुए भी नियमों में संशोधन की अत्यन्त आवश्यकता है। नियम के अनुसार समिति की बैठकें २२।४।२३ से ३।८।२४ तक सोलह मास में सोलह होनी चाहिये थीं; किन्तु हुईं केवल आठ! इस कार्य की ओर यहां के लोगों की रुचि बढ़ाने के लिये आवश्यक है कि प्रचार-समिति के सदस्यों में स्थानीय जनता के विशिष्टजन सम्मिलित किये जांय और समिति के अधिवेशन मासिक होते रहें। इन मासिक अधिवेशनों में मासिक हिसाब उपस्थित किया जाय और प्रत्येक प्रचारक एवं सञ्चालक के कार्य की आलोचना हुआ करे तथा प्रचार-कार्य को अग्रसर करने के लिये उपाय निश्चित कर उनके अनुसार कार्य-क्रम बनाया जाय।

## हिन्दी-प्रचारक

इसकी प्रतिमास ५०० प्रतियाँ छापी जाती हैं। किन्तु मूल्य देनेवाले ग्राहकों की संख्या केवल २३१ ही है। गतवर्ष इस खाते में ११८९॥-)॥ ख़र्च में पड़े और ७७८-)॥ की आमदनी हुई। इस हिसाब से एक वर्ष में ४१०॥) का घाटा रहा। यह निश्चय है कि जितना परिश्रम पत्र की तैयारी के लिये किया जाता है, उसका शतांश भी अभी तक इसका प्रचार बढ़ाने के लिए नहीं किया गया। यदि किया गया होता, तो यह कभी सम्भव न था कि इसमें घाटा होता। पत्र-सम्पादन का कार्य पं० हृषीकेश शर्मा करते हैं और उनका यह कार्य सन्तोष-जनक है। प्रचारक-वेतन के अतिरिक्त शर्माजी को ५) मासिक अतिरिक्त-पारिश्रमिक सम्पादन-कार्य के लिये दिया जाता है, जो अभी तक प्रचारक-वेतन-खाते ही में डाला जाता रहा है। यदि यह रक़म पत्र-खाते में डाली जाय, तो पत्र के घाटे की रक़म बढ़कर ४७०) हो जायगी। हमने स्वयं सम्पादकजी को पत्र सम्पादन के सम्बन्ध में सम्मेलन की नीति समझा दी है। प्रचारक में उस प्रान्त के प्रचारकों के कार्यों की रिपोर्टें, हिन्दी-प्रचार-आन्दोलन-सम्बन्धी लेख, प्रचार के उपायों पर विचारात्मक लेख, प्रान्त के दर्शनीय स्थानों का यदा-कदा वर्णन और उस प्रान्त के हिन्दी-हितैषियों तथा अन्य गण्यमान्य महानुभावों के संक्षिप्त परिचय छपने चाहिये। जहाँ तक हो, दक्षिण भारतीय जनों ही के लेख प्रचारक में छापे जायं। पुरस्कार-लेखों की संख्या बढ़ायी जाय। प्रचारक के लिये विज्ञापन भी संगृहीत किये जायं।

## परीक्षाएं

इस प्रान्त में यहाँवालों की योग्यता के विचार से चार प्रकार की परीक्षाएं गत दो वर्ष से प्रचलित हैं। प्रथम परीक्षाएं जो संवत् १९७८ में हुई थीं, उनमें लगभग ४०० परीक्षार्थी बैठे थे। इनमें १० १२ देवियां भी थीं। दूसरी बार सं० १९८० में सब मिलाकर ५९८ परीक्षार्थी थे; जिनमें ३४६ उत्तीर्ण हुए। इन परीक्षाओं के शुल्क से

७४६।) की आमदनी हुई और ३३५॥≡)॥। ख़र्च में डाले गये। अतः इसमें ४११) की बचत हुई। परीक्षा-मंत्री का काम पं० हृषीकेश शर्मा करते हैं। परीक्षाओं के प्रचार का अधिक श्रेय शर्माजी को ही मिलना चाहिये। परीक्षाओं की पाठ्य पुस्तकों के निर्वाचन में किञ्चित् अधिक सावधानी की आवश्यकता जान पड़ती है।

## कार्यालय

केन्द्र-कार्यालय का प्रबन्ध सन्तोष-जनक नहीं कहा जा सकता। हिसाब जैसे रखना चाहिये, वैसे नहीं रखा गया। इसका मुख्य कारण यह जान पड़ा कि हिसाब रखने का ढंग जाननेवाला अर्थ-लेखक यहाँ कोई रहा ही नहीं और जो रहा, उसने इस ओर अपेक्षित ध्यान नहीं दिया। कार्यालय का स्थान स्वतंत्र होना चाहिये और कार्यालय में पत्र-व्यवहार के लिये एक क्लर्क और हिसाब रखनेवाला एक अर्थ-लेखक अवश्य रखा जाय, जो कार्यालय को सुव्यवस्थित रखने के लिये उत्तरदायी रहें। कार्यालय में जिन रजिस्टरों का रखना आवश्यक है तथा जिस प्रकार वे रखे जाने चाहिये, ये सब बातें व्यवस्थापकजी को भलीभाँति समझा दी गयी हैं। अभी कार्यालय, प्रेस और व्यवस्थापक एवं सम्पादक एक ही घर में रहते हैं। कई विचारों से यह वाञ्छनीय नहीं। प्रेस और कार्यालय एक घर में और व्यवस्थापक के रहने का तथा समागत जनों के ठहरने के लिये पृथक् स्थान होना चाहिये। यत्न तो ऐसा हो कि केन्द्र-कार्यालय वहाँ की कारपोरेशन से भवन बनवाने के लिये स्थान प्राप्त करे।

## उपसंहार

अन्त में हम यह भी प्रकट करना आवश्यक समझते हैं कि हिसाब दिखाने में अथवा ज्ञातव्य विषयों की अभिज्ञता प्राप्त कराने में केन्द्र कार्यालय से हमें पूर्ण सहायता मिली। कोई बात हमसे छिपाने का प्रयत्न नहीं किया गया और न हिसाब की त्रुटियों के समर्थन के लिए हमारे साथ वाद-विवाद ही किया गया। हिसाब की त्रुटियों के दूर करने का उपाय हमने व्यवस्थापकजी को समझा

दिया है। हमारी समझ में प्रधान कार्यालय को प्रतिवर्ष एक निरीक्षक यहाँ भेजना चाहिये। इस वर्ष यहाँ के कार्य के निरीक्षण में जितना परिश्रम उठाया गया है, अगले वर्ष यह देखने की आवश्यकता है कि यह सफल हुआ या नहीं। यदि निरीक्षक भेजना निश्चित हो, तो हिसाब की प्रतिलिपि के साथ मदरास से जो वौचर प्रधान-कार्यालय को भेजे जाते हैं, वे न भेजे जाने चाहिये। हिसाब-नकल में केवल वौचर-नंबर रहने चाहिये।

इस रिपोर्ट को समाप्त करने के पूर्व हम यहाँ के वर्तमान व्यवस्थापक के सम्बन्ध में अपना मत प्रकट करना आवश्यक समझते हैं। पं० हरिहर शर्मा लगभग ४ वर्ष से व्यवस्थापक के पद पर नियुक्त हैं। यह गम्भीर प्रकृति के एक विचारवान् युवक हैं। मदरास के प्रसिद्ध एवं प्रतिष्ठित जनों में इनकी पैठ है, और उन लोगों का इन पर विश्वास भी है। महात्मा गाँधीजी भी इन पर विश्वास करते हैं। इनकी रहन-सहन सादी है और हिन्दी, गुजराती, तैलगू, तामिल, कनाड़ी, मराठी आदि कई भाषाओं में सरलता से बातचीत कर लेते हैं। संस्था के लाभ पर इनकी दृष्टि है और यथा सम्भव हानि से बचने के लिये सदा यत्नवान् रहते हैं। अधीनस्थ कर्मचारियों के गुण-दोषों से भलीभाँति परिचित हैं। अपने वेतन से प्रचार-फंड में १०) मासिक जमा करते हैं। हमारी समझ में यह जिस कार्य पर हैं उसके लिये उपयुक्त हैं। मदरास आने के पूर्व यहाँ के पत्रों को पढ़ हमारी धारणा थी कि यह किसी स्वार्थविशेष-वश यहां के कार्य को सम्मेलन से पृथक्कर स्वतंत्र होने को उत्सुक हैं। अतः हमने कई प्रकार से इनके विचारों को टटोला; किन्तु प्रधान-कार्यालय द्वारा पत्रोत्तर पाने में बिलम्ब के कारण हतोत्साह तो यह अवश्य पाये गये, परन्तु अन्य किसी प्रकार की अनुचित कामना का पता हमें न लग सका। यह यहां के कार्य को सुव्यस्थित रीत्या चलाने को प्रधान कार्यालय से पूर्ण सहयोग प्राप्त करने के लिये प्रार्थी हैं। अतः प्रधान कार्यालय को भी इस बात की ओर अपेक्षित ध्यान देने की आवश्यकता है।

हमारी समझ में इनकी वेतन-वृद्धि कई कारणों से परमावश्यक है। केन्द्र-कार्यालय में व्यवस्थापक का पद सर्वोच्च है, अतः इस पद का वेतन भी सर्वाधिक होना चाहिये। इस समय इन्हें ७५) मासिक वेतन दिया जाता है। प्रेस-निरीक्षक ७५) से कम में नहीं मिल रहा है। अतः ७५) मासिक पर प्रेस-निरीक्षक रखना परमावश्यक है। इस दशा में व्यवस्थापक का वेतन ८०) मासिक तुरन्त कर दिया जाय।

हिन्दी-प्रचार के कार्य में प्रजा और सरकार दोनों के सहयोग की आवश्यकता है। प्रजा का सहयोग बहुत-कुछ सम्पादन किया जा चुका है। सरकार का सहयोग अभी तक प्राप्त नहीं हो पाया। इसके लिये मद्रास प्रान्त के शिक्षा-विभाग के उच्च पदाधिकारियों के पास डेपूटेशन जाना नितान्त आवश्यक है, जो वहां के पदाधिकारियों से मिलकर उस प्रान्त में हिन्दी-प्रचार करने का अपना मुख्य उद्देश्य उनके मन पर अङ्कित कर दे। इस प्रान्त के कितने ही स्कूलों के प्रधानाध्यापक एवं प्रबन्धकगण हिन्दी-प्रचार-कार्य में पूर्ण सहायता देने को उत्सुक हैं; किन्तु वे शिक्षा-विभाग के सङ्केत की प्रतीक्षा में हैं। अतः इस वर्ष व्यवस्थापकजी के कार्य-क्रम में यह विषय प्रथम होना चाहिये। हम यह भी यहां प्रकट कर देना चाहते हैं कि मद्रास-हाईकोर्ट के भूतपूर्व जज जस्टिस शेषगिरि अय्यर के आधिपत्य में वहां के विशिष्ट जनों का एक डेपूटेशन शीघ्र ही डाइरेक्टर-आव-पब्लिक-इंस्ट्रक्शन से मिलनेवाला है।

हमारी समझ में साहित्य-सम्मेलन की ओर से दक्षिण-भारत में हिन्दी-प्रचार के सम्बन्ध में अभी तक जितना कार्य हुआ है, वह सर्वथा सन्तोषजनक है। प्रधानकार्यालय के भूतपूर्व पदाधिकारियों को हम इस सफलता के लिये बधाई देते हैं। हम इस अवसर पर उत्तर एवं दक्षिण-भारतीय हिन्दी-प्रचारकों के कार्यों का भी कृतज्ञता-पूर्वक स्मरण कर इस रिपोर्ट को समाप्त करते हैं।

**चतुर्वेदी द्वारकाप्रसाद शर्मा**
प्रबन्ध-मंत्री,
हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन

स्थायी समिति का ७वाँ अधिवेशन आश्विन कृ० ८ रविवार संवत् १९८१ वि०, तदनुसार ता० २१ सितम्बर सन् १९२४ ई०, को ३॥ बजे दिन से सम्मेलन-कार्यालय में निम्नलिखित-सदस्यों की उपस्थिति में हुआ—

श्री बा० पुरुषोत्तमदास टंडन
" प्रो० रामदास गौड़
" प्रो० ब्रजराज
" वियोगी हरि
" अध्यापक पं० रामरत्न
" चतुर्वेदी पं० द्वारकाप्रसाद शर्मा
" पं० रामजीलाल शर्मा

१—सर्वसम्मति से श्री पुरुषोत्तमदासजी टंडन ने सभापति का आसन ग्रहण किया।

२—देहरादून-सम्मेलन के लिए स्थायी-समिति की ओर से निम्न-लिखित कार्यक्रम तथा प्रस्तावों की पाण्डुलिपि निश्चित हुई।

हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, देहरादून का प्रस्तावित कार्यक्रम

## प्रथम दिवस

शुक्रवार कार्त्तिक शुक्ला ११ सं० १९८१ वि०, तदनुसार ता० ७ नवम्बर सन् १९२४ ई०

( १२ बजे मध्याह्नकाल से ५ बजे तक )

१—मङ्गलाचरण

२—स्वागतगान
३—स्वागताध्यक्ष की वक्तृता तथा सभापति के लिए प्रस्ताव
४—सभापति का आसन ग्रहण करना
५—सभापति का भाषण
६—कविता और गान
७—विषय-निर्धारिणी समिति का संगठन

रात्रि में ७ बजे से विषय-निर्धारिणी-समिति की बैठक

## द्वितीय दिवस

शनिवार कार्त्तिक शुक्ला १२ सं० १९८१ वि० तदनुसार ता० ८ नवम्बर सन् १९२४ ई०

(७ बजे प्रातःकाल से ११ बजे तक)

## साहित्य-चर्चा

१—प्रतिनिधियों का परस्पर परिचय
२—निबन्ध-वाचन

३—नाटकों की उत्पत्ति, प्राचीन काल से लेकर आधुनिक काल तक नाटकों का विकास, प्राचीन और अर्वाचीन नाटकों में अन्तर, वर्त्तमान नाटकों की त्रुटियाँ आदि विषयों पर चर्चा—

## मध्याह्न काल

(१२ बजे से ५ बजे तक)

१—मङ्गलाचरण
२—कविता-पाठ और सङ्गीत
३—प्रस्ताव
४—सं० ८०-८१ की स्थायी-समिति का कार्यविवरण
५—मङ्गलाप्रसाद-पारितोषिक-प्रदान
६—निबन्ध-वाचन और व्याख्यान
७—सम्मेलन-कोष के लिए अपील
८—सङ्गीत

रात्रि को ७ बजे से विषय-निर्धारिणी समिति की बैठक
( यदि आवश्यकता हो )

## तृतीय दिवस

रविवार कार्त्तिक शुक्ला १३ सं० १९८१ वि० तदनुसार ता० ९
नवम्बर सन् १९२४ ई०
( प्रातःकाल ७ बजे से ११ बजे तक )

१—स्थायी समिति का निर्वाचन ( केवल प्रतिनिधियों के सम्मेलन में )
२—निबन्ध-वाचन

### मध्याह्न काल, १ बजे से

१—मङ्गलाचरण
२—सङ्गीत
३—निबन्ध-वाचन
४—कवि-सम्मेलन
५—व्याख्यान
६—आगामी वार्षिक अधिवेशन का निश्चय
७—सभापति का अन्तिम भाषण
८—सभापति को धन्यवाद
९—विसर्जन

देहरादून-सम्मेलन में उपस्थित होनेवाले प्रस्तावों का प्रस्तावित रूप

१—हिन्दी के प्रसिद्ध विद्वान् और परमहितैषी कविनायक पं० विनायकराव, पं० रामस्वरूप शर्मा, मुंशी पन्नालाल, "प्रेमपुञ्ज" तथा बाबू जगन्मोहन वर्मा की मृत्यु पर यह सम्मेलन हार्दिक शोक और उनके परिवार के साथ समवेदना प्रकट करता है।

२—यह सम्मेलन व्यवस्थापिका सभाओं और डिस्ट्रिक्ट और म्युनिसिपलबोर्डों के हिन्दी-भाषा-भाषी सदस्यों से अनुरोध करता है कि वे समस्त जनता की सुविधा का ध्यान रखकर इन संस्थाओं की कार्यवाही हिन्दी-भाषा में कराने का विशेष प्रयत्न करें।

तदनन्तर सभापतिजी कार्यवश चले गये और गौड़जी ने स्थानापन्न सभापति का आसन ग्रहण किया।

३—पं० जगन्नाथप्रसादजी चतुर्वेदी के पत्र-द्वारा आये हुए निम्नलिखित दो प्रस्ताव उपस्थित हुए—

१—मङ्गलाप्रसाद-पारितोषिक पानेवाले सज्जन सम्मेलन की उत्तमा-परीक्षा में उत्तीर्ण समझे जायँ और जिस विषय का पारितोषिक उन्हें मिले, उसी विषय के 'रत्न' की उपाधि उन्हें मिला करे। इसी वर्ष से यह प्रस्ताव काम में लाया जाय और जो गतवर्षों में पारितोषिक पा चुके हैं, वे भी अपने-अपने विषय के 'रत्न' समझे जायँ।

२—सम्मेलन के सभापति 'साहित्य-सुधानिधि' की उपाधि से विभूषित किये जायँ और इस वर्ष से ही यह प्रस्ताव काम में लाया जाय। सम्मेलन अनुरोध करता है कि भूतपूर्व सभापति भी अपने अपने नाम के साथ इस उपाधि का व्यवहार करें।

इस पर सर्वसम्मति से निश्चय हुआ कि प्रथम प्रस्ताव परीक्षा-समिति में विचारार्थ भेज दिया जाय। परीक्षा-समिति इसपर निर्णय करके शीघ्र भेज दे ताकि प्रस्ताव शरत्पूर्णिमा को होनेवाले स्थायी-समिति के आगामी अधिवेशन में उपस्थित हो सके।

दूसरे प्रस्ताव के सम्बन्ध में निश्चय हुआ कि यह प्रस्ताव भी उसी अधिवेशन में उपस्थित हो।

४—चतुर्वेदी पं० द्वारकाप्रसादजी शर्मा का, सम्मेलन के नियमों में परिवर्तन-सम्बन्धी, प्रस्ताव उपस्थित हुआ—

निश्चित हुआ कि हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की नियमावली में इस प्रकार संशोधन आवश्यक है—

१—नियम ४ अनावश्यक है, काट दिया जाय।

२—नियम ४४ के अन्त में यह और जोड़ दिया जाय—

"किन्तु अधिवेशन-समाप्ति के पीछे ३ मास के भीतर लेखमाला तथा कार्यविवरण छपवा कर हिसाब अवश्य साफ़ कर देना होगा।"

३—नियम ५० का अन्तिम भाग "यही सज्जन......करेंगे" निकाल दिया जाय।

४—नियम ५२ में "सम्मेलन के विशारद-उपाधिधारी" के स्थान पर "सम्मेलन के उपाधिधारी" होना चाहिए।

५—नियम ७७ में शुल्क इस प्रकार होना चाहिए—

प्रथमा २)
मध्यमा ५॥)
उत्तमा ११)

उपस्थित सदस्यों की कुछ सामयिक अवश्यकताओं के कारण अधिवेशन दूसरे दिन ४ बजे के लिए स्थगित किया गया।

दूसरे दिन स्थगित बैठक ४॥ बजे से निम्नलिखित उपस्थिति में हुई—

श्री शालिग्राम वर्मा
" प्रो० ब्रजराज
" वियोगी हरि
" पं० इन्द्रनारायण द्विवेदी
" बा० पुरुषोत्तमदास टंडन
" चतुर्वेदी पं० द्वारकाप्रसाद शर्मा
" अध्यापक पं० रामरत्न
" पं० लक्ष्मीनारायण नागर
" पं० रामजीलाल शर्मा

सर्वसम्मति से श्री शालिग्रामजी वर्मा ने सभापति का आसन ग्रहण किया।

५—श्री साँवलिया विहारीलालजी का, सम्मेलन के नियमों पर परिवर्त्तन-सम्बन्धी, पत्र उपस्थित किया गया। निश्चित हुआ कि नियमानुसार २ मास पूर्व न आने पर यह प्रस्ताव स्थायी समिति में उपस्थित नहीं हो सकता।

६—श्री राजमणिजी त्रिपाठी का इस आशय का एक प्रस्ताव उपस्थित हुआ कि बौद्धधर्मावलम्बियों में, विशेषतः विदेशियों में

सामान्यतः नागरी-अक्षरों के प्रचारार्थ बौद्ध ग्रन्थों का हिन्दी गद्य-पद्य-अनुवाद, विदेशी लिपियों के साथ नागरी-लिपि-सहित लिपि-बोध-सम्बन्धी ग्रन्थों का प्रकाशन तथा देवनागर सरीखे किसी पत्र के प्रकाशन का आयोजन किया जाय।

सर्वसम्मति से निश्चय हुआ कि यह प्रस्ताव पुस्तक-प्रकाशन-समिति तथा प्रचार-समिति में विचारार्थ भेज दिया जाय। दोनों समितियाँ अपना निर्णय शीघ्र भेज दें, ताकि प्रस्ताव स्थायी-समिति के किसी आगामी अधिवेशन में उपस्थित हो सके।

७—पं० इन्द्रनारायणजी द्विवेदी का निम्नलिखित प्रस्ताव उपस्थित हुआ—

बाबू संगमलालजी ने जो टेक कौंसिल में हिन्दी में बोलने के सम्बन्ध में की थी, उसपर समयानुसार इस समिति ने हर्ष प्रकट किया था, किन्तु अब उसे इस बात पर दुःख है कि बाबू साहब तथा उनके अन्य सहकारियों ने भी कौंसिल में अंग्रेज़ी भाषा में बोलना आरम्भ कर दिया और इस प्रकार हिन्दी-सम्बन्धी अपने सिद्धान्त को ढीला कर दिया।

यह समिति स्थायी समिति के अधिवेशन के मन्तव्य ८ के प्रथम अंश की डेपुटेशनवाली सूची में ठाकुर हरप्रसादसिंहजी बाँदा तथा चतुर्वेदी पं० द्वारकाप्रसादजी शर्मा का नाम और जोड़ती है और चतुर्वेदीजी को डेपुटेशन का संयोजक नियत करती है।

प्रस्ताव सर्वसम्मति से स्वीकृत हुआ।

८—आगामी वर्ष के लिए साधारण और स्थायी सदस्यों में से स्थायी-समिति के लिये चुने जानेवाले सदस्यों की सूची उपस्थित हुई। बहुसम्मति से निम्नलिखित ४ सदस्य निर्णीत हुए—

१—श्री बा० रामदास गौड़
२—श्री सेठ जमनालाल बजाज
३—श्री सेठ जुगुलकिशोर बिड़ला
४—श्री राजकुमार रणञ्जयसिंह वर्मा

६—चतुर्वेदी पं० द्वारकाप्रसादजी शर्मा द्वारा लिखित मद्रास-केन्द्र-कार्यालय का निरीक्षण तथा उस पर प्रचार-समिति द्वारा निश्चित मन्तव्यों पर विचार हुआ। निम्नलिखित मन्तव्य निश्चित हुए :—

१—यह समिति मदरास हिन्दी-प्रचार-कार्यालय के व्यवस्थापक पं० हरिहर शर्मा तथा उनके सहकारी कार्यकर्त्ताओं को उनके कार्य की सफलता पर बधाई देती है।

२—निश्चित हुआ कि मद्रास-केन्द्र-कार्यालय के खाते में जो रक़में इंडियन बैंक के चालू खाते में अभी वहाँ के व्यवस्थापक पं० हरिहर शर्मा के नाम से जमा हैं, वे हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के नाम से जमा कराई जाँय। इस खाते में साधारण रीति से अधिक से अधिक ३०००) जमा रहेगा। शेष रुपये इस हिसाब से त्रैमासिक या मासिक अथवा वार्षिक फ़िक्स्ड डिपाज़िट में रक्खा जाय जिस से काम में कठिनता न होने पावे और साथ ही कुछ ब्याज की भी आय हो जाय। सब फ़िक्स्ड डिपाज़िट की रक़में भी हिन्दी साहित्य-सम्मेलन के नाम से जमा हों, उन के निकालने का अधिकार केन्द्र-व्यवस्थापक पं० हरिहर शर्मा तथा सम्मेलन के अर्थ मन्त्री पं० लक्ष्मीनारायण नागर के संयुक्त हस्ताक्षर से होगा।

३—निश्चित हुआ कि मदरास-केन्द्र-कार्यालय के व्यवस्थापक से साग्रह अनुरोध किया जाय कि वे आगे किसी को पेशगी रुपये न दें। ७६५।-)। की जो रक़म वहाँ के कर्मचारियों के नाम पेशगी खाते में पड़ी है, वह यथासम्भव शीघ्र वसूल कर जमा करवा ली जाय और यह खाता ही उठा दिया जाय।

४—निश्चित हुआ कि व्यवस्थापकजी प्रान्तीय संचालकों से नियमित रूप से प्रान्तों के आय-व्यय का हिसाब प्रति मास ले लिया करें, जिस से हिसाब-तलब खाते में बड़ी-बड़ी रक़में न पड़ी रहने पावें।

५—निश्चित हुआ कि भाई रामजी कल्याणजी के पास सम्मेलन के जो ५४५॥=)। बहुत दिनों से जमा है, वे यथासम्भव शीघ्र

उन से वसूल कर इंडियन बैंक में, सम्मेलन-खाते में, जमा करवा दिये जायँ।

६—मद्रास-कार्यालय की रसीदें, जो कार्यालय से दाताओं की सेवा में भेजी गईं, उन की प्रतिलिपियों का कार्यालय में रहना परमावश्यक था। निश्चित हुआ कि भविष्य में इन रसीदों की प्रति लिपियाँ कार्यालय में अवश्य रक्खी जाँय।

७—रिपोर्ट से विदित हुआ कि आन्ध्रप्रान्त का हिन्दी-प्रचार-कार्य इस स्थितिपर पहुँच चुका है कि वहाँ वह स्वतन्त्र रूप से चल सकता है। अतः यह समिति निश्चय करती है कि आगामी फाल्गुन मास से आन्ध्रप्रान्त मद्रास-केन्द्र कार्यालय से स्वतंत्र कर दिया जाय। आन्ध्र-प्रान्तीय हिन्दी-प्रचार-कार्यालय के स्वतन्त्र होने पर भी यह उचित होगा कि आन्ध्रप्रान्त में जो भी संस्था हिन्दी-प्रचार के लिए स्थापित हो, वह हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की नियमावली के नियम २८ (क) के अनुसार अपना सीधा सम्बन्ध सम्मेलन के प्रधान कार्यालय से स्थापित कर ले।

८—निश्चित हुआ कि मद्रास-केन्द्र-कार्यालय के हिन्दी-प्रचार-प्रेस के लिये एक पर्यवेक्षक ( सुपिरिंटेंडेंट ) ७५) मासिक वेतन पर नियुक्त किया जाय। वेतन-वृद्धि प्रेस की आर्थिक दशा अच्छी होने पर ५) वार्षिक के हिसाब से १००) मासिक तक हो सकेगी।

९—निश्चित हुआ कि पुस्तकालय में हिन्दी के उच्चकोटि के साहित्य की उत्तमोत्तम पुस्तकें रखने के लिये २००) प्रतिवर्ष बजट में स्वीकृत किये जायँ। पुस्तकालय में पुस्तकें कम हैं, इसलिए वहाँ के लोगों का यह ख़याल हो गया है कि हिन्दी में कुछ भी साहित्य नहीं है। पुस्तकालय की श्रीवृद्धि करके उन लोगों का यह भ्रम दूर करना परमावश्यक है

१०—प्रचार-समिति के ९ वें प्रस्ताव के सम्बन्ध में प्रबन्ध-मन्त्री जी से पूछने पर ज्ञात हुआ कि उन्होंने जो कार्यवाही की, वह उचित है।

११—रिपोर्ट से विदित हुआ कि नियमावली में कुछ ऐसी त्रुटियाँ हैं, जिनके संशोधन की बड़ी आवश्यकता है, अतः निश्चित हुआ कि नियमावली के संशोधनों पर विचार किया जाय।

१२—कार्यालय में पत्रव्यवहार करने तथा नियमित रूप से सम्पूर्ण हिसाब रखने के लिए दो लेखकों की बड़ी आवश्यकता है। निश्चित हुआ कि केन्द्र कार्यालय के पत्रव्यवहार के लिए एक क्लर्क ३०) पर तथा एक अर्थ लेखक ४०) से ५०) मासिक वेतन पर रख लिया जाय।

१३—निश्चित हुआ कि केन्द्र कार्यालय के कार्य का निरीक्षण करने के लिए हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन से एक निरीक्षक प्रतिवर्ष भेजा जाय।

१४—निश्चित हुआ कि व्यवस्थापक पं० हरिहर शर्मा का मासिक वेतन भाद्र कृष्ण १ सं० १६८१ वि० से ७५) के स्थान पर ८५) कर दिया जाय।

१५—मदरास-प्रचार का कार्य-निरीक्षण करने और वहाँ की यथोचित सम्मति-सूचक रिपोर्ट तैयार करने में प्रबन्धमन्त्री चतुर्वेदी पं० द्वारकाप्रसाद शर्मा ने जो परिश्रम किया है, उसके लिए यह समिति उन्हें धन्यवाद देती है।

इसके पश्चात् यह बैठक भी २३। ६। २४ को ३ बजे के लिये स्थगित की गई। ता० २३। ६। २४ को निम्नलिखित सदस्य उपस्थित हुए—

श्री पं० इन्द्रनारायण द्विवेदी
" चतुर्वेदी पं० द्वारकाप्रसाद शर्मा
" प्रो० व्रजराज
" अध्यापक पं० रामरत्न
" पं० रामजीलाल शर्मा

कोरम पूरा न होने के कारण बैठक ता० २६ को ५ बजे के लिए पुनः स्थगित की गयी। ता० २६-६-२४ को ५ बजे से बैठक निम्नलिखित सदस्यों की उपस्थिति में हुई—

श्री प्रोफ़ेसर ब्रजराज
" वियोगी हरि
" लक्ष्मीनारायण नागर
" पं० इन्द्रनारायण द्विवेदी
" अध्यापक पं० रामरत्न
" चतुर्वेदी पं० द्वारकाप्रसाद शर्मा
" पं० रामजीलाल शर्मा

सर्वसम्मति से प्रो० ब्रजराजजी ने सभापति का आसन ग्रहण किया और नियमावली का संशोधन किया गया। कार्य समाप्त न होने के कारण ता० २८ के लिए बैठक पुनः स्थगित कर दी गई।

स्थगित बैठक ता० २८ को ४ बजे से निम्नलिखित सदस्यों की उपस्थिति में हुई—

श्री प्रो० ब्रजराज
" चतुर्वेदी पं० द्वारकाप्रसाद शर्मा
" अध्यापक पं० रामरत्न
" पं० रामजीलाल शर्मा

कोरम पूरा न होने से कुछ कार्यवाही न हुई। ता० ३० के लिए बैठक पुनः स्थगित की गयी।

तदनन्तर ता० ३० सितम्बर तथा ता० २, ३, ४ अक्तूबर को क्रमानुसार उपर्युक्त सदस्यों की उपस्थिति में स्थगित बैठकें हुईं और नियमावली निम्नलिखित रूप में स्वीकृत हुई—

## मदरास में हिन्दी-प्रचार के लिए उपनियम

### नाम

१—दक्षिण भारत में हिन्दी-भाषा और देवनागरी लिपि के प्रचार करने के लिए हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन का एक कार्यालय होगा जिसका नाम "हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन-प्रचार-कार्यालय" होगा।

२—इस कार्यालय के संचालन के लिए एक समिति होगी, जिसका नाम "मद्रास-हिन्दी-प्रचार-समिति" होगा।

३—यह समिति प्रधान कार्यालय की निर्धारित नीति के अनुसार कार्य करेगी। इस समिति का कर्त्तव्य होगा कि वह विशेषतः निम्नलिखित कर्त्तव्यों पर ध्यान दे—

(क) आन्ध्र, तामिल, केरल तथा कर्नाटक में राष्ट्रभाषा हिन्दी का प्रचार करना।

(ख) पाठशालाओं, कालिजों, विश्वविद्यालयों तथा राष्ट्रीय संस्थाओं में हिन्दी भाषा के प्रचार का उद्योग करना।

(ग) हिन्दी-प्रचार के लिए एक मासिकपत्र निकालना एवं आवश्यक पुस्तकें प्रकाशित करना।

(घ) मद्रास-प्रान्तीय हिन्दी-परीक्षाओं की सुव्यवस्था करना।

(ङ) स्थान-स्थान पर हिन्दी-पाठशालाएँ, समितियाँ तथा पुस्तकालय स्थापित करने का उद्योग करना और इस प्रकार की वर्त्तमान संस्थाओं को सहायता देना।

(४) हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन-प्रचार-कार्यालय का केन्द्र स्थान मद्रास होगा। इस केन्द्र कार्यालय के मुख्य कार्यकर्त्ता व्यवस्थापक कहलायेंगे। वे हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग द्वारा नियत किये जायँगे।

(५) मद्रास-हिन्दी-प्रचार-समिति में, मंत्री को छोड़कर, १० सदस्य होंगे। केन्द्र कार्यालय के व्यवस्थापक इसके मंत्री होंगे। शेष सदस्यों का चुनाव इस प्रकार होगा—

क—प्रधान कार्यालय द्वारा मद्रास नगर की मनोनीत जनता से २

ख—प्रान्तीय कार्यालयों के संचालक ४

ग—प्रान्तीय प्रबन्ध-कारिणी-समितियों के द्वारा चुने हुए एक एक सदस्य, इस प्रकार ४

(६) यह समिति अपनी पहली बैठक में अपने किसी सदस्य को समिति का सभापति चुन लेगी। यही वर्ष भर समिति के सभापति रहेंगे। यदि किसी अधिवेशन में सभापति उपस्थित न

हों तो समिति उपस्थित सदस्यों में से उस अधिवेशन के लिए सभापति निर्वाचित कर लेगी।

(७) यदि समिति के किसी पदाधिकारी या सदस्य का स्थान रिक्त हो जाय, तो वर्ष के आरम्भ में जिस प्रकार वह निर्वाचित या मनोनीत किया गया होगा, उसी प्रकार पुनः निर्वाचित या मनोनीत किया जावेगा।

(८) साधारणतः समिति की बैठक दो मास में एक बार हुआ करेगी। उसकी सूचना मन्त्री सदस्यों को कम से कम ७ दिन पहले दिया करेंगे। कम से कम मन्त्री-सहित ३ सदस्यों की उपस्थिति के बिना बैठक न हो सकेगी। अनुपस्थित सदस्यों की लिखित सम्मति समिति में पढ़ दी जायगी; मत-ग्रहण के समय उपस्थित सदस्यों का ही मत गिना जायगा; किन्तु उपर्युक्त नियम ६ के अनुसार सभापति के निर्वाचन के समय लिखित सम्मति की भी गणना होगी। आवश्यकता पड़ने पर समिति के ३ सदस्यों को अधिकार होगा कि किसी विशेष तिथि पर समिति का अधिवेशन करने के लिए मन्त्री को लिखें। ऐसा लेख आने पर मंत्री को अधिवेशन करना आवश्यक होगा।

(९) समिति के कर्त्तव्य

(क) समिति का यह साधारण कर्त्तव्य होगा कि वह प्रचार-कार्य को सुचारु रूप से चलाने के लिए आवश्यकतानुसार ऐसे नियम बनाले जो इन उपनियमों के विरुद्ध न हों और उनपर प्रधान कार्यालय की स्वीकृति लेकर उनके अनुसार कार्य करे।

(ख) केन्द्र कार्यालय के हिसाब की जांच करती रहे और अपने नियुक्त किये हुए किसी आय-व्यय-परीक्षक द्वारा जाँचा हुआ आय-व्यय अपने अधिवेशनों में स्वीकृत करे।

(ग) वर्षभर का कार्य-विवरण और परीक्षित आय-व्यय का हिसाब (समिति-द्वारा नियुक्त किसी परीक्षक द्वारा मासिक जाँचा हुआ) वर्ष समाप्त होने के एक मास भीतर प्रधान कार्यालय को भेजे

और प्रधान कार्यालय द्वारा स्वीकृत होने पर उसको समाचारपत्रों में दो मास के भीतर प्रकाशित करे।

(घ) आगामी-वर्ष के लिए आय-व्यय का अनुमान-पत्र वर्ष-समाप्ति के एक मास पहले प्रधानकार्यालय में स्वीकृति के लिए भेजे, और स्वीकृत अनुमान-पत्र के अनुसार कार्य करे।

(१०) सभापति के कर्त्तव्य

समिति के अधिवेशनों का संचालन, मताधिक्य तथा नियम के अनुसार करना।

(११) मन्त्री के कर्त्तव्य

(क) समिति में स्वीकृत मन्तव्यों के अनुसार कार्य करने की व्यवस्था करना।

(ख) समिति के अधिवेशनों का विवरण अधिवेशनों में उपस्थित करना और मासिक आय-व्यय का हिसाब रखना तथा वर्ष के अन्त में समिति का वार्षिक-विवरण, वार्षिक आय-व्यय का चिट्ठा और आगामी वर्ष के लिए अनुमान-पत्र, समिति से स्वीकृत कराके, प्रधान कार्यालय को भेजना।

(ग) समिति के प्रत्येक अधिवेशन का विवरण प्रधान कार्यालय को भेजना तथा उसकी स्वीकृति आ जाने पर "प्रचारक" में प्रकाशित करना।

(घ) प्रान्तीय कार्यालयों का वार्षिक विवरण तैयार कराके समिति के वार्षिक अधिवेशन में उपस्थित करना।

(ङ) सम्मेलन के उद्देश्यों की पूर्त्ति और उनके प्रतिरोधक कारणों के निराकरण का उचित प्रबन्ध करना।

(च) समिति के अधिवेशनों में कार्यालय के पिछले मासों का आय-व्यय का विवरण उपस्थित करना और उसे स्वीकृत कराना।

(छ) वर्ष की समाप्ति पर प्रत्येक प्रचारक के कार्य की समालोचनायुक्त एक रिपोर्ट (अप्रकाश्य) प्रधान कार्यालय को देना।

## केन्द्र कार्यालय

### ( १२ ) व्यवस्थापक के कर्त्तव्य

(क) मद्रास-हिन्दी-प्रचार-समिति के मन्तव्यानुसार और प्रधान कार्यालय के आज्ञानुसार केन्द्र तथा प्रान्तीय कार्यालयों का संचालन करना।

(ख) समय-समय पर प्रान्तीय कार्यालयों और उनके अन्तर्गत प्रचारकों के कार्य का निरीक्षण करना तथा उसका विवरण प्रधान कार्यालय को भेजना।

(ग) समिति के मुखपत्र "हिन्दी-प्रचारक" का समुचित प्रबन्ध करना। परीक्षा-विभाग के संचालन में परीक्षा-मन्त्री को सहायता देना और पुस्तक-प्रकाशन-विभाग का यथेष्ट प्रबन्ध करना।

(घ) समिति के कर्त्तव्यों की पूर्ति के लिए यथाशक्ति धन संग्रह करने का उद्योग करना।

(ङ) प्रत्येक अमावास्या तक गत मास का मासिक प्रचार-विवरण तथा आयव्यय का ब्यौरा प्रधान कार्यालय को भेजना।

(च) प्रधान कार्यालय द्वारा कार्यालय की वार्षिक रिपोर्ट स्वीकृत हो जाने पर समाचार-पत्रों तथा हिन्दी एवं प्रान्तीय भाषाओं में प्रकाशित करना।

(छ) आवश्यकतानुसार कार्यकर्त्ताओं और प्रचारकों को उनके कार्य में सहायता देना एवं किसी विशेष परिस्थिति के उत्पन्न होने पर तुरन्त उसकी सूचना प्रधान कार्यालय के प्रधानमंत्री को देना और उनकी सम्मति के अनुसार कार्य करना।

(ज) कार्यालय के आय-व्यय का यथावत् हिसाब रखना।

(झ) यदि व्यवस्थापक ने अत्यन्त आवश्यकता होने पर, अपने उत्तरदायित्व से या समिति की आज्ञा से, विशेष परिस्थिति में अनुमान-पत्र के अतिरिक्त कुछ व्यय किया हो तो प्रधान कार्यालय से उसकी स्वीकृति लेना। किन्तु ऐसा व्यय ५०) से अधिक न होना चाहिये।

( ञ ) स्वीकृत आय-व्यय के अनुमान-पत्र के अनुसार तथा समिति की अनुमति से रुपया ख़र्च करना।

( ट ) पुस्तक-भंडार का रजिस्टर रखना और हर तीसरे महीने उसको जाँचना, और जाँचने की रिपोर्ट प्रधान कार्यालय को भेजना।

( ठ ) प्रत्येक प्रान्त के प्रचारकों की एक सूची हर तीसरे महीने प्रधान कार्यालय को भेजना।

( ड ) आवश्यकतानुसार एक प्रान्त के प्रचारक को दूसरे प्रान्त में बदलना।

## प्रान्तीय कार्यालय

१३—दक्षिण भारत में हिन्दी-प्रचार को सुचारु रूप से संगठित करने के लिए मद्रास-हिन्दी-प्रचार-समिति के आदेशानुसार भिन्न-भिन्न प्रान्तों में प्रान्तीय कार्यालय होंगे। प्रान्तीय कार्यालय के प्रबन्धक "संचालक" कहलायँगे और वे प्रचारकों में से, समिति की सम्मति से, प्रधान कार्यालय द्वारा नियुक्त किये जायँगे।

१४—प्रान्तीय कार्यालय के संचालन के लिए एक प्रबन्ध-कारिणी-समिति होगी, जिसमें संचालक के अतिरिक्त अधिक से अधिक ७ सदस्य होंगे।

ये मद्रास-हिन्दी-प्रचार-समिति द्वारा निर्वाचित किये जावेंगे।

१५—प्रबन्ध-कारिणी-समिति के अधिवेशनों के कार्यविवरण रखने, और मंत्री और सभापति के कर्त्तव्य आदि के सम्बन्ध में उन्हीं नियमों का बर्ताव होगा जो मद्रास-समिति के लिए पूर्व लिखे गये हैं।

१६—प्रान्तीय-कार्यालय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन-प्रचार-कार्यालय द्वारा प्रधान कार्यालय से पत्रव्यवहार कर सकेंगे।

१७—संचालक के कर्त्तव्य

(क) आवश्यकतानुसार व्यवस्थापक के परामर्श से अपने प्रान्त में प्रचारकों को एक स्थान से दूसरे स्थान को बदलना और उसकी सूचना कार्यालय को देना।

(ख) यदि किसी प्रचारक का कोई कार्य प्रचार-कार्य में हानिकर जान पड़े तो उसकी रिपोर्ट समिति को देना और समिति के परामर्श से उसकी उचित व्यवस्था करना।

(ग) वर्ष में कम से कम दो बार अपने प्रान्त के प्रत्येक प्रचारक के कार्य का निरीक्षण करना और उसका विवरण-केन्द्र कार्यालय को भेजना।

(घ) मास समाप्त होने के दस दिन के भीतर अपने प्रान्त के गत मास का कार्यविवरण तथा आय-व्यय का लेखा केन्द्र कार्यालय को भेजना। इसी प्रकार वर्ष के अन्त में वार्षिक-विवरण भेजना।

(ङ) यथाशक्ति प्रचारकों को सहायता देना, तथा उनके निवास-स्थान आदि का, स्थानीय लोगों से लिखा-पढ़ी करके, प्रबन्ध कराने का उद्योग करना।

(च) अपने प्रान्त की प्रबन्ध-कारिणी समिति के अधिवेशनों का विवरण केन्द्र कार्यालय को भेजना।

१८—प्रचारकों के कर्त्तव्य

(क) अपने प्रान्त के संचालक की आज्ञा के अनुसार कार्य करना।

(ख) स्थानीय शिक्षा-संस्थाओं में जाकर विद्यार्थियों में हिन्दी के प्रति अनुराग उत्पन्न करना और वहाँ के अधिकारियों से मिल कर हिन्दी पढ़ाने का प्रबन्ध करना।

(ग) जनता की ओर से हिन्दी-प्रचार के लिए जो कुछ सहायता मिले, तुरन्त उसकी सूचना प्रान्तीय कार्यालय को देना। दाता को केन्द्र कार्यालय की छपी हुई रसीद देना।

(घ) प्रतिमास के अन्त म अपने कार्यों का विवरण और अपने वेतन की रसीद प्रान्तीय कार्यालय को भेजना।

(ङ) वर्ग में विद्यार्थियों को मद्रास-प्रचार-समिति द्वारा निर्दिष्ट पुस्तकें पढ़ाना।

(च) यदि अपना केन्द्र छोड़कर बाहर जाना हो तो उसकी स्वीकृति प्रान्तीय कार्यालय से लेना।

(छ) अपने-अपने केन्द्र में एक हिन्दी-पुस्तकालय और वाचनालय खोलने का उद्योग करना।

(ज) विद्यार्थियों के लिए उपस्थिति-पत्र, और अपनी दिनचर्या रखना।

(झ) 'हिन्दी-प्रचारक' और 'सम्मेलन-पत्रिका' के प्रचार का यथाशक्ति उद्योग करना।

१९—प्रचारकों की नियुक्ति इस प्रकार होगी—

दक्षिण भारत में दोनों—उत्तरभारतीय और दक्षिणभारतीय—प्रचारक नियुक्त किये जायँगे। जब तक कोई विशेष स्थिति उपस्थित न हो, तब तक उत्तरभारतीय प्रचारकों की संख्या कुल प्रचारकों की संख्या की एक चौथाई से कम न होगी।

२०—प्रचारकों में निम्नलिखित योग्यताएँ आवश्यक होंगी:—

(क) शुद्ध हिन्दी लिखने और बोलने की योग्यता।

(ख) उत्तर भारतीय प्रचारकों के लिए अंग्रेज़ी द्वारा हिन्दी पढ़ा सकने की योग्यता तथा दक्षिण भारतीय प्रचारकों के लिए अंग्रेज़ी का साधारण ज्ञान।

(ग) नियुक्ति के समय प्रचारक की अवस्था २१ वर्ष से कम न होनी चाहिए।

(घ) प्रचारकों को मिलनसार, सदाचारी और कष्टसहिष्णु होना चाहिए।

२१—वेतन

(क) साधारणतः उत्तरभारतीय प्रचारकों को प्रथम तीन मास तक ३०) मासिक वेतन दिया जावेगा। इस अवधि में उन्हें किसी एक दक्षिणभारतीय भाषा का साधारण ज्ञान प्राप्त कर लेना होगा। इसके बाद ३५) मासिक वेतन दिया जावेगा और काम संतोषजनक होने पर ३) वार्षिक के हिसाब से ५०) तक वृद्धि होगी। ५०) से आगे वृद्धि के लिए सम्मेलन की विशारद-परीक्षा में उत्तीर्ण

होना आवश्यक होगा। ५०) के बाद ५) वार्षिक के हिसाब से काम संतोषजनक होने पर ७५) मासिक तक वृद्धि हो सकेगी।

(ख) दक्षिण भारतीय प्रचारकों की नियुक्ति ३०) पर, तीन मास तक, परीक्षार्थ होगी और काम संतोषजनक होने पर ३) वार्षिक के हिसाब से ५०) तक वार्षिक वृद्धि होगी। ५०) के ऊपर वृद्धि के लिए उपर्युक्त नियम (सं. २१ क) लागू होगा।

(ग) जो प्रचारक विशारद-परीक्षा पास होंगे, या विशेष योग्यता रखते होंगे, उनका वेतन उनकी योग्यता देखकर निश्चित किया जावेगा।

(घ) प्रान्तीय कार्यालय के संचालकों को उपर्युक्त नियमों द्वारा निश्चित प्रचारकों के वेतन से ५) मासिक अधिक दिया जावेगा।

(ङ) केन्द्र-कार्यालय से व्यवस्थापक तथा "हिन्दी-प्रचारक" के सम्पादक का वेतन प्रधान कार्यालय निश्चित करेगा।

२२—उपर्युक्त कर्मचारियों के अतिरिक्त यदि अन्य कर्मचारियों के रखने की आवश्यकता समझी जायगी तो उनकी भी नियुक्ति और उनके वेतन का निर्णय, मद्रास-प्रचार-समिति से परामर्श लेकर, प्रधान कार्यालय करेगा।

२३—प्रत्येक कार्यकर्त्ता और प्रचारक की वार्षिक वेतन-वृद्धि, व्यवस्थापक और मद्रास-प्रचार-समिति के परामर्श से, प्रधान कार्यालय द्वारा हुआ करेगी।

२४—छुट्टियां

(क)—प्रत्येक कर्मचारी को वर्ष भर में १० दिन की आकस्मिक और वर्ष के अन्त में एक मास की सवेतन छुट्टी पाने का अधिकार होगा।

[नोट—आकस्मिक छुट्टी वार्षिक छुट्टी के साथ नहीं जोड़ी जायगी। वार्षिक छुट्टी पर घर जाने-आने के लिए १० दिन का समय (उत्तरभारतीय प्रचारकों के लिए) छुट्टी के अतिरिक्त सवेतन माना जायगा।]

(ख) प्रति दो वर्ष में प्रत्येक प्रचारक को एक बार घर आने-जाने के लिए तीसरे दर्जे का केवल रेलभाड़ा दिया जायगा। इसमें केवल गाड़ी-भाड़ा सम्मिलित होगा।

(ग) यदि कोई प्रचारक वार्षिक छुट्टी न ले, तो तीन वर्षतक पिछली वार्षिक छुट्टी जुड़ती जायगी। यदि कोई कर्मचारी तीन वर्ष के अन्त में भी छुट्टी न लेना चाहे, तो वह छुट्टी के आधे दिनों के वेतन पाने का अधिकारी होगा।

[नोट—इसमें आकस्मिक छुट्टी नहीं जोड़ी जायगी।]

(घ) जो प्रचारक सपत्नीक रह कर काम करना चाहें, उनको तीन वर्ष तक दक्षिण भारत में रहकर काम करना होगा। उनको आने-जाने का, तीसरे दर्जे का, रेल-किराया दिया जायगा। तीन वर्ष के अन्त में तीन महीने की जो छुट्टी दी जायगी, वह इस अधिकार में से काट ली जायगी।

(ङ) कर्मचारी अपने अधिकारानुसार छुट्टी ले चुकने पर दो मास की अवैतनिक छुट्टी ले सकेगा।

( च ) छुट्टी की स्वीकृति-अस्वीकृति कार्य की सुविधा-असुविधा के ऊपर निर्भर रहेगी।

( २५ ) जो प्रचारक सपत्नीक कार्य करने जावेंगे, उनको कार्यालय निवासस्थान देने का प्रबन्ध करेगा। यदि ऐसा न हो सका तो मदरास शहर में उन की नियुक्ति होने पर उन को १०) तक मकान किराया, वेतन के अतिरिक्त, दिया जावेगा। मदरास शहर के बाहर ६) तक उत्तरभारतीय प्रचारकों को ही वास्तविक किराया दिया जावेगा।

२६—व्यवस्थापक तथा संचालक को यथासम्भव कार्यालय ही में स्थान दिया जावेगा, अथवा १०) और ६) तक किराया एवं विद्यालयों के प्रधान अध्यापक को विद्यालय में रहने का स्थान दिया जावेगा।

२७—मदरास शहर में वही प्रचारक रक्खे जाँयगे, जिन का वेतन ४०) से कम न होगा।

विद्यालय

२८—मद्रास एवं आवश्यकतानुसार प्रान्तीय कार्यालय के केन्द्र स्थानों में प्रधान कार्यालय की स्वीकृति पर हिन्दी-प्रचारक तैयार करने के लिए हिन्दी-प्रचारक-विद्यालय खोले जाँयगे।

२९—विद्यालय के संचालन के लिए तीन सदस्यों की एक समिति रहेगी, जिसका निर्वाचन प्रतिवर्ष मद्रास-प्रचार-समिति द्वारा होगा। यही उपसमिति प्रचारक-विद्यालय के लिए पाठ्यक्रम तथा उपनियम आदि बनाकर मद्रास-प्रचार-समिति से स्वीकृत करा लेगी।

हिन्दी-प्रचारक

३०—दक्षिण भारत में राष्ट्र-भाषा हिन्दी के प्रचार के लिए हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन-प्रचार-कार्यालय का मासिक मुखपत्र प्रकाशित हुआ करेगा, जिस का नाम "हिन्दी-प्रचारक" होगा। इस के सम्पादक मद्रास-प्रचार-समिति की सम्मति लेकर प्रधान कार्यालय द्वारा नियुक्त किये जाँयगे। इस का उद्देश्य केवल राष्ट्रभाषा हिन्दी का प्रचार होगा।

३१—पुस्तक-प्रकाशन-विभाग

समय-समय पर हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन-प्रचार-कार्यालय मद्रास द्वारा मद्रास-प्रचार-समिति प्रधान कार्यालय की स्वीकृति लेकर पुस्तकें प्रकाशित करा सकेगी। समिति जब कोई पुस्तक प्रकाशित करने का प्रस्ताव करेगी तब उस में इन बातों का भी उल्लेख रहेगा कि कितनी प्रतियाँ और किस प्रकार के कागज़ पर छपाई जायँगी और अनुमान से कुल लागत क्या होगी। एक हस्तलिखित पुस्तक भी साथ आनी चाहिए।

३२—पुस्तक-प्रकाशन के लिए एक उपसमिति रहेगी, जो प्रस्तावित पुस्तक की हस्तलिखित प्रति प्रयाग भेजने के पूर्व देखकर अपनी सम्मति के साथ मद्रास-प्रचार-समिति में उपस्थित करेगी।

इस उपसमिति में तीन सदस्य होंगे, जिन को मद्रास-प्रचार-समिति प्रतिवर्ष निर्वाचित करेगी।

३३—प्रचार-पुस्तकालय

केन्द्र कार्यालय में एक वृहत्पुस्तकालय रखने का प्रबन्ध किया जायगा, जिस में हिंदी के सभी विषयों के प्रसिद्ध-प्रसिद्ध ग्रन्थ संग्रहीत किये जावेंगे। आधुनिक हिन्दी-समाचार-पत्र तथा मासिक पत्र भी रखे जावेंगे।

३४—परीक्षा

दक्षिण भारत में मद्रास-प्रचार-समिति के द्वारा प्रतिवर्ष दो बार निम्नलिखित परीक्षाएं ली जायँगी—

१—प्राथमिक २—प्रवेशिका
३—राष्ट्रभाषा ४—प्रचारक

३५—इन परीक्षाओं का संचालन समिति के मन्तव्यानुसार परीक्षामन्त्री करेंगे, जिनकी नियुक्ति मद्रास-प्रचार-समिति की सम्मति से प्रधान कार्यालय द्वारा होगी।

३६—परीक्षाओं का शुल्क इस प्रकार होगा—

१—प्राथमिक ।) २—प्रवेशिका ॥)
३—राष्ट्रभाषा १) ४—प्रचारक २)

स्त्रियों से शुल्क नहीं लिया जायगा।

३७—प्राथमिक तथा प्रवेशिका परीक्षा में उत्तीर्ण विद्यार्थियों को एक प्रमाण-पत्र दिया जायगा, जिस पर मद्रास-केन्द्र-कार्यालय के परीक्षामंत्री और व्यवस्थापक के हस्ताक्षर होंगे। राष्ट्रभाषा और प्रचारक-परीक्षाओं में उत्तीर्ण होनेवाले परिक्षार्थियों को जो प्रमाण-पत्र दिया जायगा, उसपर प्रधान-कार्यालय के प्रधानमन्त्री और प्रचार-मन्त्री के भी हस्ताक्षर होंगे।

३८—मद्रास-प्रचार-समिति इन परीक्षाओं का पाठ्यक्रम तथा अन्य आवश्यक उपनियम बनाने के लिए एक उपसमिति प्रतिवर्ष बनावेगी और इन कामों के लिये प्रधान कार्यालय की स्वीकृति लेनी आवश्यक होगी।

### ३६—परीक्षा-मन्त्री के कर्त्तव्य

(क) पाठ्यक्रम स्वीकृत हो जाने पर प्रकाशित करना।

(ख) परीक्षा-तिथि नियत करना और उसकी सूचना समाचार-पत्रों तथा हिन्दी-प्रचारक में प्रकाशित करना।

(ग) समाचार-पत्रों द्वारा तथा प्रचारकों की सहायता से परीक्षार्थी तैयार कराने का उद्योग करना।

(घ) व्यवस्थापक के परामर्श से परीक्षक नियत करना और स्थान-स्थान पर परीक्षा-केन्द्र खुलवाना।

(ङ) शुल्क-सम्बन्धी आय-व्यय का हिसाब रखना।

(च) परीक्षा-समिति से दो मास के भीतर परीक्षा फल प्रकाशित कराना।

(छ) परीक्षा-सम्बन्धी समस्त कार्यों का प्रबन्ध करना और उसका वार्षिक विवरण व्यवस्थापक को देना।

(ज) आवश्यकतानुसार परीक्षा-संचालन के लिए व्यवस्थापक से परामर्श और सहायता लेना।

४०—उपर्युक्त उपसमिति प्रश्न-पत्रों को देखकर आवश्यक संशोधन के बाद उन्हें छपवाने की आज्ञा देगी।

### ४१—कार्यालय का वर्ष

कार्यालय का वर्ष प्रधान कार्यालय के वर्ष के अनुसार माना जायगा।

४२—प्रचारक तथा कर्मचारियों के लिए संरक्षण-कोष भी रहेगा, जिसके नियम व उपनियम प्रधान कार्यालय के जैसे रहेंगे।

४३—इस नियमावली में परिवर्त्तन के लिए प्रस्ताव करने का अधिकार मद्रास-प्रचार-समिति को होगा। परिवर्त्तन प्रधान कार्यालय करेगा।

रामजीलाल शर्मा
प्रधान मन्त्री

# स्थायी समिति का आठवाँ अधिवेशन

स्थायी समिति का आठवाँ अधिवेशन रविवार मि० आश्विन शु० १५ सं० ८१ तदनुसार ता० १२-१०-२४ को मध्यान्होत्तर ४ बजे निम्नलिखित सदस्यों की उपस्थिति में सम्मेलन-कार्य्यालय में हुआ।

श्री पुरुषोत्तमदास टंडन
" पं० जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी, कलकत्ता
" बा० शालग्राम वर्म्मा
" पं० रघुबरदयालु मिश्र, काशी
" प्रो० व्रजराज
" वियोगी हरि
" पं० द्वारकाप्रसाद चतुर्वेदी
" पं० जगन्नाथप्रसाद शुक्ल
" पं० लक्ष्मीधर वाजपेयी
" पं० रामजीलाल शर्म्मा

१—सर्व-सम्मति से श्री पुरुषोत्तमदासजी टंडन ने सभापति का आसन ग्रहण किया।

२—देहरादून-सम्मेलन के सभापति-पद के लिए आयी हुई सम्मतियों का संकलन किया गया और उपस्थित सदस्यों की सम्मतियों को भी सम्मिलित करके गणना की गयी। तदनुसार जिन पांच सज्जनों के लिए सर्व्वाधिक सम्मतियाँ आयीं उनके नाम ये हैं:—

श्री पं० राधाचरणजी गोस्वामी
" पं० रा० ब० गौरीशंकर हीराचंदजी ओझा
" पं० अमृतलालजी चक्रवर्ती
" पं० माधवरावजी सप्रे
" पं० पद्मसिंहजी शर्म्मा

३—सम्मेलन के अधिवेशनों को अधिक साहित्यिक और उपयोगी बनाने की योजना पढ़ी गयी और वादविवाद के पश्चात् इस प्रकार निश्चय हुआ—

(क) योजना की पाँचवीं धारा के सम्बन्ध में यह निश्चय हुआ कि, सभापति के भाषण का समय निर्धारित न किया जाय।

(ख) बहुसम्मति से निश्चय हुआ कि प्रस्तावों की संख्या नियत कर दी जाय। शोकसूचक, स्थायी समिति के चुनाव का और नियमों में परिवर्तन-सम्बन्धी—इन तीन प्रस्तावों के अतिरिक्त चार प्रस्ताव और होने चाहिए। इस प्रकार कुल ७ प्रस्ताव परिमित कर दिये जायँ।

(ग) योजना की धारा ५ के सम्बन्ध में निश्चय हुआ कि सभापति एक ही हों।

इतना कार्य्य होने के पश्चात् समिति का कार्य अगले दिन के लिए स्थगित कर दिया गया। समिति के निश्चयानुसार पुनः अगले दिन प्रातःकाल ७ बजे से निम्नलिखित सदस्यों की उपस्थिति में कार्य्य आरम्भ हुआ—

श्री पुरुषोत्तमदास टण्डन
" पं० जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी
" पं० रघुवरदयालु मिश्र
" प्रो० ब्रजराज
" पं० द्वारकाप्रसाद चतुर्वेदी
" पं० लक्ष्मीधर बाजपेयी
" वियोगीहरि
" रामजीलाल शर्मा

(घ) योजना की धारा ३ के सम्बन्ध में बहुपक्षानुसार निश्चय हुआ कि सम्मेलन के साथ अध्यापक-सम्मेलन भी हुआ करे।

(ङ) योजना की धारा ४ के सम्बन्ध में निश्चय हुआ कि प्रबन्ध मंत्री ज्यों के त्यों रहें। एक पृथक् साहित्य-मंत्री नियुक्त हों, जिनके अधीन सम्मेलन का समस्त प्रकाशन, साहित्यिक कार्य्य, सम्मेलन पत्रिका का सम्पादन और संग्रहालय का कार्य्य हो।

फिर सम्मेलन के कार्य्यक्रम पर विचार हुआ कि साधारण रीति से कार्य क्रम इस प्रकार होगा—

## पहला दिन

(मध्यान्ह के १२ बजे से ५ बजे तक)

१ मंगलाचरण
२ स्वागतगान
३ स्वागताध्यक्ष का भाषण
४ सभापति का निर्वाचन
५ सभापति का भाषण
६ आये हुए तार और पत्रों का सुनाना
७ समय हो तो गान
८ सम्मेलन का वार्षिक विवरण
९ विषय-निर्वाचिनी समिति का निर्वाचन

(रात्रि में ७ बजे से १० बजे तक)

विषय-निर्वाचिनी समिति का अधिवेशन

## दूसरा दिन

(प्रातः काल ७ से १० बजे तक)

अध्यापक-सम्मेलन

(मध्यान्हकाल १२ से ५ बजे तक)

१ मंगलाचरण १५ मिनट
२ प्रस्ताव २। घंटा
३ प्रमाणपत्र, पदक, पारितोषिक और उपाधिप्रदान १॥ घंटा
४ आर्थिक अपील १ घंटा
५ गान-वाद्य

(रात्रि में ८ से ११ बजे तक)

१—विषय निर्वाचिनी समितिका अधिवेशन (यदि कार्य शेष हो)
२—हिन्दी-दर्बार ( इसमें निबन्ध, कविता, व्याख्यान, अभिनय और परस्पर परिचय होगा )

## तीसरा दिन

(प्रातः ७ से ९ बजे तक)

१—साहित्यचर्चा

(९ से १० बजे तक)

प्रतिनिधि-सम्मेलन में स्थायी समितिका निर्वाचन।

(मध्यान्ह १ से ५ बजे तक)

१—मङ्गलाचरण
२—प्रस्ताव यदि शेष हों।
३—निबन्ध अथवा साहित्यिक व्याख्यान
४—कवि-सम्मेलन
५—संगीत
६—सभापति का अन्तिम भाषण
७—विसर्जन

यदि सम्भव हो तो रात्रि में अभिनय भी हो।

४—श्री० पं० जगन्नाथप्रसादजी चतुर्वेदी का वह प्रस्ताव उपस्थित हुआ जिसके सम्बन्ध में परीक्षासमिति ने यह निश्चय किया था कि स्थायीसमिति को यह सूचना दी जाय कि यह समिति श्री मंगलाप्रसाद-पारितोषिक-प्राप्त विद्वानों को उपाधि देने के पक्ष में तो है, पर यह निश्चित नहीं करती कि क्या उपाधि दी जाय। उपाधि का निश्चय स्थायी समिति करे।

उपाधि के सम्बन्ध में विचार होने के पश्चात् सर्वसम्मति से निश्चय हुआ कि यह स्थायी समिति सिफ़ारिश करती है कि श्री मंगलाप्रसाद-पारितोषिक पानेवालों को उपाधि दी जाय और यह भी निश्चय हुआ कि जिस विषय का पारितोषिक दिया जाय उसी विषय के 'रत्न' की उपाधि दी जाय। यथा—साहित्य-रत्न, इतिहास-रत्न, दर्शन-रत्न, विज्ञान-रत्न।

५—श्री० पं० जगन्नाथप्रसादजी चतुर्वेदी का वह प्रस्ताव उपस्थित हुआ जिस में उन्होंने सम्मेलन के सभापति को "साहित्य-सुधा-निधि" की उपाधि दिये जाने का उल्लेख किया है। निश्चय हुआ कि यह विषय समिति के आगामी अधिवेशन में उपस्थित किया जाय।

सभापति को धन्यवाद देकर सभा विसर्जित हुई।

रामजीलाल शर्मा, प्रधान-मन्त्री

सभापति का निर्वाचन—इस वर्ष सम्मेलन का साभापत्य विद्या-वयोवृद्ध लब्धप्रतिष्ठ साहित्य-महारथी श्रीमान् पंडित राधाचरणजी गोस्वामी को सादर समर्पित किया गया है। स्वागत-समिति का यह निर्वाचन-कार्य सर्वथा उपयुक्त और श्लाघ्य है। प्रायः समग्र हिन्दी-संसार एक स्वर से पूज्य गोस्वामीजी के ही निर्वाचन के लिए समुत्सुक था। सो उसकी मनस्कामना पूरी हुई। हमें विश्वास है कि श्रद्धेय गोस्वामीजी महाराज का सभापतित्व साहित्य-जगत् के लिए कल्प-वृक्ष का काम देगा। हम गोस्वामीजी सदृश अनुभवी पथ-प्रदर्शक द्वारा जितना अधिक ज्ञान प्राप्त करें थोड़ा है।

कवि-सम्मेलन के सभापति—देहरादून में सम्मेलन के साथ एक कवि-सम्मेलन भी होगा। जिसके सभापति हिन्दी-साहित्य के प्रसिद्ध विद्वान् काश्मीर-सुषमा-सुरसिक, एकान्तवासी मनोविनोदी श्रीमान् पंडित श्रीधर पाठक निर्वाचित हुए हैं। 'देहरादून' कविता के प्रणेता का देहरादून में कवि-मण्डल का अध्यक्ष होना सर्वथा समुपयुक्त और सार्थक है। पाठकजी उन इने-गिने साहित्याचार्यों में से हैं, जिन्होंने भगवती वीणापाणि का अहर्निश आराधन करते हुए लोक और परलोक दोनों को अपने अक्षय यशःसौरभ से सुरभित कर दिया है। हमें आशा है कि मान्यवर पाठकजी के सभा-

पतित्व में देहरादून के कवि-सम्मेलन में अवश्य ही कोई ऐसा अनूठा आदर्श उपस्थित होगा, जो वर्तमान कवि-जगत् में संजीवन-शक्ति का संचार करेगा।

❧❧❧
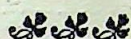
सहयोगियों में सम्मेलन-प्रेम—इस वर्ष हमारे सहयोगी पत्रों में सम्मेलन-सम्बन्धी समाचारों की खूब धूम रही है। क्या सभापति का निर्वाचन, क्या मंगलाप्रसाद-परितोषिक, क्या संग्रहालय, क्या राष्ट्रभाषा-प्रचार सभी विषयों पर उन्होंने दृष्टिपात किया है। प्रत्येक पत्र-पत्रिका ने अपने पृष्ठों को सम्मेलन की चर्चा से अंकित किया है। उनका यह हिन्दी-प्रेम देखकर किस हिन्दी-हितैषी का हृदय कल्लोल-तरंगों से उद्वेलित न होगा? किसी भी सार्वजनिक संस्था का उत्थान व पतन लोक-प्रतिनिधि समाचार-पत्रों पर ही निर्भर रहता है। यदि समाचार-पत्रों में निष्पक्ष और स्वतन्त्र रीति से भाव प्रकाशित करने की शक्ति हो तो वह सोने में सुगंध का काम देती है। हमारे सहयोगियों ने निष्पक्षपात और मंगल-कामना के साथ सम्मेलन के कार्यों में योग दिया है। इस वर्ष हिन्दी-जगत् में सम्मेलन का जो एक विशिष्ट वायुमंडल दृष्टि आता है, अधिकांश में, उसका श्रेय हमारे शुभचिन्तक सहयोगियों ही को है। एतदर्थ हम उन्हें जितनी बधाई दें थोड़ी है!

❧❧❧

राजपूताने का इतिहास—राजपूताने के इतिहास के सम्बन्ध में अद्वितीय इतिहास-मर्मज्ञ श्रद्धेय पं० गौरीशंकर हीराचन्द्रजी ओझा की एक सूचना समाचार-पत्रों में प्रकाशित हुई है। उसे पढ़ कर किस भारत-भक्त के हृदय में आनन्द-अरुणोदय न हुआ होगा?

राजस्थान की वीरप्रसविनी भूमि का गौरवान्वित दिव्य चित्र और उसे अंकित करनेवाले कुशल चित्रकार ओझाजी—यह मणि-काञ्चन-योग नहीं तो क्या है ? हमें दृढ़ विश्वास है कि यह वृहद् ग्रन्थ प्रत्येक भारतीय सज्जन के हृदय में आदरपूर्ण स्थान पायगा और हमारे तिमिराच्छन्न इतिहास-संसार का एक प्रदेश प्रकाशित हो अपना अतीत स्वर्गीय चित्र प्रदर्शित करेगा।

❧❧❧
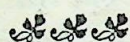
मिश्रजी की अत्युक्ति—कानपुर से प्रकाशित "साहित्य" की द्वितीय-तृतीय संयुक्त संख्या में सुविज्ञ और सफल समालोचक सहृदयवर पंडित कृष्णविहारी मिश्र ने, देव और केशव नामक लेख में एक स्थल पर, लिखा है—"देव कवि की भाषा अपूर्व है। हिन्दी के किसी भी कवि की भाषा इनकी भाषा से अच्छी नहीं है।" हमें इस कथन में अत्युक्ति की गन्ध आती है। 'हिन्दी के किसी भी कवि'—इस वाक्यांश का अर्थ भी हमारी समझ में नहीं आया है। क्या इस वाक्यांश के अन्तर्गत सूर और तुलसी का भी समावेश हुआ है ? माना कि महाकवि देव का भाषा-सौष्ठव मनोमुग्धकारी एवम् लोकोत्तरानन्ददायी है, पर हिन्दी के किसी भी कवि की भाषा उन की भाषा से अच्छी नहीं है, यह मानते हुए हमें हिचकिचाहट मालूम पड़ती है। सूर और तुलसी की बात तो दूर है, हिन्दी-साहित्य में ऐसे कई कवि हैं जिन की भाषा महाकवि देव की भाषा के बराबर ही नहीं वरन् किसी अंश में उस से ऊंची भी है। हमें आशा है कि मिश्रजी हमारे इस कथन पर विशेष रूप से ध्यान देने का कष्ट उठावेंगे।

❧❧❧
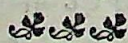
त्रिपाठीजी की अतिशयोक्ति—हिन्दी-कविता की उत्कृष्ट पत्रिका "कवि-कौमुदी" की चौथी संख्या में उस के सुयोग्य सम्पादक कविवर

पं० रामनरेश त्रिपाठी ने, श्रीमान् ठाकुर गोपालशरण सिंह का चित्र-परिचय देते हुए, एक स्थान पर लिखा है—"कवि-कौमुदी के इस अंक में आप की ( श्रीमान् ठाकुर साहब की ) जो समस्यापूर्ति प्रकाशित हुई है, वह हिन्दी की अच्छी-से-अच्छी पुरानी कविताओं के टक्कर की है।" जान पड़ता है, ठाकुर साहब की कविता के सम्बन्ध में त्रिपाठीजी ने यह अत्युक्ति पूर्ण वाक्य कदाचित् प्रेमाधिक्य के वश हो लिखा है। सरस हृदय पर प्रेमाधिक्य का शासन प्रायः देखा गया है। त्रिपाठीजी ज़रा ध्यान से देखें तो उन को स्वयं अपने उपर्युक्त वाक्य में अत्युक्ति दिखाई देगी। ठाकुर साहब निस्सन्देह एक होनहार सुकवि हैं। उनकी कविता वास्तव में प्रतिभामयी होती है। किन्तु कवि-कौमुदी के उस अंक में प्रकाशित उनकी समस्या-पूर्त्ति का हिन्दी की अच्छी-से-अच्छी पुरानी कविताओं से टकरा जाना हमारी समझ में नहीं आता। इस भाव की पुरानी कविताएँ इतनी ऊँची और अनूठी हैं कि उनके टक्कर की कविता करनेवाले कवि, हमारी राय में तो, अभी तक पैदा नहीं हुए, आगे की राम जाने। इस वाक्य के लिखते समय सहृदयवर त्रिपाठीजी को कम-से-कम महाकवि घनानन्द का ही स्मरण आ जाता, तो कदाचित् उन के उस वाक्य का यह रूप न होता।

❧❧❧
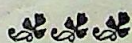
<u>बाबू जगन्मोहन वर्मा का स्वर्गवास !</u>—कौन जानता था कि वर्माजी को असमय ही कराल काल का कवल होना पड़ेगा ! अपने सुहृदों की स्वर्गयात्रा लिखना, उन की कोमल स्मृति को कठोर शब्द-पटल पर अंकित करना, सचमुच ही एक रोमाञ्चकारी कार्य्य है। पर पिशाचिनी प्रथा यह भी कराती है। वर्माजी हिन्दी के बड़े ऊँचे

लेखक थे, हिन्दी शब्दसागर के सहकारी सम्पादक थे, पुरातत्व वेत्ता थे आदि बातें लिखते-पढ़ते हमारे अन्तस्तल पर आघात पहुँचता है। हम तो इतना ही कह सकते हैं कि वर्माजी का हमारे हृदय के साथ एक स्वर्गीय सम्बन्ध था, जो आर्य-सिद्धान्त के अनुसार लोकान्तर में भी रहेगा। परमात्मा उनके शोकाकुल कुटुम्ब को धैर्य्य प्रदान करे।

# कार्य-विवरण तथा लेखमालाएँ

| लेखमाला | मूल्य | कार्य विवरण | मूल्य |
|---|---|---|---|
| प्रथम सम्मेलन की लेखमाला | ॥।) | प्रथम वर्ष का कार्य विवरण | ।) |
| द्वितीय (मध्यमा में स्वीकृत) | (प्रेस में) | द्वितीय " " | (अप्राप्य) |
| तृतीय सम्मेलन की लेखमाला | ॥) | तृतीय " " | ।=) |
| चतुर्थ " " | ॥) | चतुर्थ " " | ॥) |
| पंचम " " | ॥) | पंचम " " | ॥।) |
| षष्ठ " " | ॥।) | षष्ठ " " | ।) |
| सप्तम " " | ॥=) | सप्तम " " | ।=) |
| अष्टम " " | १) | अष्टम " " | ।) |
| नवम " " | १॥) | नवम " " | ।=) |
| दशम " " | ।≡) | दशम " " | ॥) |
| द्वादश " " | १) | | |
| त्रयोदश " " | १) | | |

## सम्मेलन द्वारा प्रकाशित उत्तमोत्तम पुस्तकें

| पुस्तक | मूल्य |
|---|---|
| अकबर की राज्य-व्यवस्था ... ... ... | १) |
| सूर्यसिद्धान्त ... ... ... ... | १।) |
| इतिहास ( चिपलूणकर ) ... ... ... | ≡) |
| हिन्दी-भाषा-सार ... ... ... ... | ॥।) |
| प्रथमालंकार-निरूपण ... ... ... ... | =) |
| द्वितीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के सभापति का भाषण ... | ।) |
| तृतीय " " " " ... | ।) |
| मद्रास प्रान्त में हिन्दी-प्रचार का विवरण ... ... | -) |
| हिन्दी-विद्यापीठ ... ... ... ... | -)॥ |
| नागरी अंक और अक्षर ... ... ... | ≡) |
| हिन्दी का सन्देश ... ... ... ... | -) |
| वृत्तचन्द्रिका ... ... ... ... | =) |
| तेरहवें हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के सभापति का भाषण ... | =) |

**पता—मंत्री, हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग**

## ५०) का पारितोषिक

[illegible] जो हिन्दी विद्यापीठ के पाठ्यक्रम पर निबन्ध लिख-वाने के लिए ५०) के पारितोषिक की घोषणा की थी उसके सम्बन्ध में ४ निबन्ध आये थे। उन सब निबन्धों में हिन्दी के सुपरिचित विद्वान् श्री रामदास गौड़ का निबन्ध सर्वोत्तम समझा गया और वह पुरस्कार गौड़ जी को दिया जायगा।

प्रधान मंत्री

हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग

## घर-बैठे देहरादून-सम्मेलन का दृश्य देखिए !

## सम्मेलनाङ्क

प्रति वर्ष की भांति अब के भी 'पत्रिका' का सम्मेलनाङ्क निकलेगा। यह अंक मार्गशीर्ष और पौष का संयुक्त अंक होगा। इसमें सम्मेलन के समारोह का रोचक वर्णन, स्वागताध्यक्ष की वक्तृता, सभापति का भाषण और कवि-सम्मेलन की उत्तमोत्तम समस्यापूर्तियां रहेंगी। इसके अतिरिक्त सम्मेलन में स्वीकृत प्रस्ताव, स्थायीसमिति के पदाधिकारियों और सदस्यों की सूची एवं अन्य आवश्यक बातों का भी उल्लेख रहेगा। जो सज्जन किसी कारण वश देहरादून-सम्मेलन में सम्मिलित न हो सकेंगे, उन्हें पत्रिका के सम्मेलनाङ्क में ही वहाँ का सुन्दर दृश्य देखने को मिल जायगा। यह अंक पौष शुक्ला १४ तक प्रकाशित हो जायगा। इस अंक का मूल्य ।=) होगा।

व्यवस्थापक

**सम्मेलन-पत्रिका**

हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग

---

हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग द्वारा प्रकाशित
सूरजप्रसाद खन्ना के प्रबन्ध से हिन्दी-साहित्यप्रेस प्रयागमें मुद्रित।

तार का पता—"सम्मेलन" इलाहाबाद रजिस्टर्ड नं० ए. ६२६.

भाग १२ अङ्क ४, ५; मार्गशीर्ष, पौष १९८१

संपादक

**वियोगी हरि**

प्रकाशक

**हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग**

वार्षिक मूल्य २) प्रत्यंक ≡)
यह अंक ।≡)

# विषय-सूची

# सम्मेलन-पत्रिका के नियम

१—'पत्रिका' प्रत्येक मास की पूर्णिमा को प्रकाशित हो जाती है। यदि किसी मास को कृष्णा १० तक उस मास की पत्रिका न मिले, तो पत्र द्वारा सूचना देनी चाहिये।

२—'पत्रिका' का वर्ष भाद्रपद से प्रारम्भ होता है। वर्ष के बीच में, किसी भी मास में, ग्राहक होने पर उस वर्ष के पूर्व मासों के अंक अवश्य लेने पड़ते हैं। डाक-व्यय-सहित पत्रिका का वार्षिक मूल्य २=) है। २) मनीआर्डर द्वारा भेजने से अधिक सुभीता होता है।

३—यदि दो-एक मास के लिए पता बदलवाना हो तो डाकख़ाने से प्रबन्ध कर लेना चाहिए, और यदि बहुत दिनों के लिए बदलवाना हो, तो हमें उसकी सूचना देनी चाहिए, अन्यथा 'पत्रिका' न मिलने के लिए हम उत्तरदायी न होंगे।

४—लेख, कविता, समालोचना के लिये पुस्तकें—"सम्पादक सम्मेलन पत्रिका, पोस्ट बाक्स नं० ११ प्रयाग" के पते से वा प्रबन्ध सम्बन्धी पत्र—"प्रचार-मन्त्री हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, पोस्ट बाक्स नं० ११ प्रयाग" के पते से और पत्रिका का मूल्य, विज्ञापन की छपाई आदि का द्रव्य "अर्थमंत्री, हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन पोस्ट बाक्स नं० ११ प्रयाग" के पते से आना चाहिए।

५—प्राप्त कविता और लेखों के घटाने, बढ़ाने एवं प्रकाश करने या न करने का पूर्ण अधिकार सम्पादक को है।

---

## सम्मेलन-पत्रिका में
## विज्ञापन की दर

| | १ मास | ६ मास | एक वर्ष |
|---|---|---|---|
| एक पृष्ठ | ५) | २५) | ४५) |
| आधा पृष्ठ | ३) | १५) | २८) |

# आवश्यक सूचना

६—सम्मेलन द्वारा प्रकाशित पुस्तकों की बिक्री पर कमीशन की दर निम्नलिखित अनुसार होगी।

( क ) १०) से नीचे की पुस्तकों पर कुछ भी कमीशन न दिया जायगा।

( ख ) १०) से २५) तक की पुस्तकों पर दो आना रुपया कमीशन दिया जायगा।

( ग ) २५) से ऊपर १००) तक २०) रुपया सैकड़ा।

( घ ) १००) से ऊपर, २५) सैकड़ा।

( ङ ) ५००) या अधिक की पुस्तकें लेने पर तृतीयांश कमीशन अर्थात् ३३।-)४ दिया जायगा।

(नोट) सम्मेलन से सिर्फ़ सम्मेलन द्वारा प्रकाशित पुस्तकें बेची जाती हैं। अतः सर्वसाधारण को चाहिए कि वे सम्मेलन से केवल सम्मेलन द्वारा प्रकाशित ही पुस्तकें मगावें। अन्य प्रकाशकों की पुस्तकें हमारे यहाँ नहीं मिलतीं।

# सुलभ-साहित्य-माला

इस माला का उद्देश्य यह है कि हिन्दी में उत्तमोत्तम ग्रन्थों के सुन्दर और सस्ते संस्करण इस ढंग से निकाले जायँ कि जिससे हिन्दी-प्रेमी इन ग्रन्थ-रत्नों को सुलभता से पा सकें। यह माला प्राचीन साहित्य का विशेष रूप से उद्धार करने की चेष्टा कर रही है। इसमें प्राचीन साहित्यक, दार्शनिक, सामाजिक, राष्ट्रीय आदि उत्तमोत्तम ग्रन्थ सिद्धहस्त लेखकों को उचित पुरस्कार देकर लिखाये और प्रकाशित किये जाते हैं। अब तक इस माला में निम्नलिखित पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं—

## १—भूषण-ग्रन्थावली ( सटिप्पण )

भूषण कवि हिन्दी में वीर रस के एक मात्र कवि हैं। इनकी कविता में भाव हैं, ओज है और प्राण है। परन्तु अधिकांश में वह इतनी क्लिष्ट है कि उसका समझना कठिन हो जाता है। इस कठिनाई को दूर करने के लिए हिन्दी के सुपरिचित विद्वान् पं० रामनरेशजी त्रिपाठी ने क्लिष्ट स्थानों पर टिप्पणी दे दी हैं और कठिन शब्दों का अर्थ लिख दिया है। कविता में सूत्र रूप से वर्णित ऐतिहासिक घटनाओं का भी यथास्थान स्पष्ट उल्लेख कर दिया गया है।

यदि भारतीय वीरता का पता चलाना हो, यदि जातीय ज्योति को जगमगाना हो, यदि साहित्यिक आनन्द लूटना हो, तो इस ग्रन्थावली को एक बार अवश्य पढ़ जाइए। इसमें अलङ्कार शास्त्र का अनुपम ग्रन्थ शिवराजभूषण, शिवा-बावनी, छत्रसाल-दशक तथा भूषण कवि के फुटकर कवित्तों का संग्रह किया गया है। यह ग्रन्थावली साहित्य-सम्मेलन की मध्यमा परीक्षा में भी स्वीकृत है। पृष्ठ-संख्या १८४, मूल्य ॥-)

## २—हिन्दी-साहित्य का संक्षिप्त इतिहास

लेखक—श्री० मिश्रबन्धु

हिन्दी भाषा और साहित्य का क्रमशः विकास कैसे हुआ, उसने कौन-कौन से रूप पकड़े, किन-किन बाधाओं एवं साधनों का उसे सामना करना पड़ा, वर्त्तमान परिस्थिति क्या है आदि गम्भीर विषयों का पता इस पुस्तक से भली भाँति चलता है। अपने ढंग की यह पहली पुस्तक है। "मिश्रबन्धु विनोद" रूपी महासागर से मथन कर यह इतिहासामृत निकाला गया है। यह भी हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की मध्यमा परीक्षा में स्वीकृत है। पृष्ठसंख्या १८८, मूल्य ।=)

पुस्तकें मिलने का पता—हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, पोस्ट बाक्स नं० ११ प्रयाग।

## ३—भारतगीत

लेखक—पं० श्रीधर पाठक

पाठकजी की रसमयी-रचना से किस सहृदय साहित्य रसिक का हृदय रसप्लावित न होता होगा ? आपकी गणना वर्तमान हिन्दी-साहित्य के महारथियों में है। आपकी राष्ट्रीय कविता नवयुवकों में जातीय जीवन सञ्चार करनेवाली है। प्रस्तुत पुस्तक पाठकजी के उन गीतों का संग्रह है, जिन्हें उन्होंने समय-समय पर स्वदेश-भक्ति की उमंग में आकर लिखा हैं। इसकी प्रस्तावना साहित्य-मर्मज्ञ बाबू पुरुषोत्तमदासजी टंडन ने लिखी है। (यह पुस्तक राष्ट्रीय विद्यालयों के बड़े काम की है। पृष्ठसंख्या ६४, मूल्य ≡)

## ४—भारतवर्ष का इतिहास

### ( प्रथम खण्ड )

लेखक—श्री मिश्रबन्धु

यह इतिहास प्राचीन और अर्वाचीन काल से सम्बन्ध रखता है। इसमें पूर्व वैदिक काल से सूत्र काल तक अथवा ६०० संवत् पूर्व से ५० संवत् पूर्व तक की घटनाओं का उल्लेख है। अब तक हिन्दी में भारतवर्ष का सच्चा इतिहास एक भी नहीं था। विदेशियों के लिखे हुए अपूर्ण और पक्षपातयुक्त इतिहासों के पढ़ने से यहां के नवयुवकों को अपने देश के प्रति अश्रद्धा उत्पन्न हो जाती है। ऐसे समय में हिन्दी के सुप्रसिद्ध लेखक मिश्रबन्धुओं ने बड़ा काम किया है। मध्यमा परीक्षा के इतिहास विषय में यह पुस्तक निर्दिष्ट है। जिल्दवाली पुस्तक, जिसकी पृष्ठसंख्या ४०६ है, मूल्य केवल १॥)

---

**पुस्तकें मिलने का पता—हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, पोस्ट बाक्स नं० ११ प्रयाग।**

## ५—राष्ट्रभाषा

संपादक—श्री 'भारतीय हृदय'

कुछ समय हुआ, महात्मा गाँधी ने यह प्रश्न किया था कि, क्या हिन्दी राष्ट्र-भाषा हो सकती है ? इसके उत्तर में भारत के प्रत्येक प्रान्त के बड़े-बड़े विद्वानों और नेताओं ने पक्षपातरहित सम्मतियाँ दी थीं, कि निःसन्देह हिन्दी ही राष्ट्रभाषा होने योग्य है। उन्हीं सब अमूल्य सम्मतियों का संग्रह इस पुस्तक में किया गया है। इसके विरोधियों का भी यथेष्ट खण्डन हुआ है। इस विषय के व्याख्यानों का भी इसमें सङ्कलन कर दिया गया है। हिन्दीभाषा के [illegible] लिए यह पुस्तक प्राणस्थानीय नहीं तो क्या है ? पृष्ठसंख्या २००, मूल्य ॥)

## ६—शिवा-बावनी

महाकवि भूषण के वीररस सम्बन्धी ५२ कवित्तों का उत्तम संग्रह। इन कवित्तों के टक्कर के छन्द शायद ही वीररस के साहित्य में अन्यत्र कहीं मिलें। महाराष्ट्रपति शिवाजी की देशभक्ति और सच्ची वीरता का यदि चित्र देखना हो, तो एक बार इस छोटी सी पोथी का पाठ अवश्य कर जाइए। शब्द एवं भाव-काठिन्य दूर करने के लिये कवित्तों की सुबोधिनी टीका, टिप्पणी और अलङ्कार आदि साहित्य से सम्बन्ध रखनेवाली आवश्यक बातों का इसमें उल्लेख कर दिया गया है। साहित्य-सम्मेलन की प्रथमा परीक्षा में यह पुस्तक रखी गयी है। पृष्ठसंख्या ५४, मूल्य ≡)

## ७—सरल पिङ्गल

ले० — { श्री पुत्तनलाल विद्यार्थी<br>श्री लक्ष्मीधर शुक्ल, विशारद }

इस पुस्तक में पिङ्गल शास्त्र के गूढ़ रहस्यों को सरल और सुन्दर भाषा में समझाने का प्रयत्न किया गया है। छन्दों के उत्तम उदाह-

रण भी दिये गये हैं। अन्त में संस्कृत छन्दों का भी संक्षेप में दिग्दर्शन करा दिया गया है। पृष्ठ संख्या ५८, मूल्य ।)

## ८—सूरपदावली

(सटिप्पण)

श्री सूरदासजी के १०० अत्युत्तम पदों का अपूर्व संग्रह, जो हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की परीक्षा में स्वीकृत भी है। मूल्य ।)

## ९—भारतवर्ष का इतिहास

(द्वितीय खण्ड)

लेखक—श्री मिश्रबन्धु

इसमें ५०० संवत् पूर्व से १२५० संवत् तक की घटनाओं का वर्णन किया गया है। भारतवर्ष के उत्थान-पतन के क्रम का पता इस पुस्तक से जैसा कुछ चलता है, यह पढ़ने से ही मालूम होगा। हिन्दू-समाज की उन्नति और अवनति, इस देश में स्वदेशी और विदेशी भावों का आविर्भाव तथा धार्मिक जीवन की महत्ता आदि जानने योग्य आवश्यक विषयों का ज्ञान इससे पूर्णतः हो सकता है। सुन्दर छपाई, कपड़े की जिल्द, पृष्ठसंख्या ४४८, मूल्य २)

## १०—पद्य-संग्रह

संपादक { श्री व्रजराज एम. ए.; बी. एस. सी., एल. एल. बी.
श्री गोपालस्वरूप भार्गव एम. एस. सी.

आधुनिक खड़ी बोली के प्रसिद्ध-प्रसिद्ध कवियों की कविताओं का सुन्दर संग्रह। ये कविताएँ विद्यार्थियों के बड़े काम की हैं। संग्रह सामयिक और उपादेय है। यह पुस्तक हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की प्रथमा परीक्षा के साहित्य में स्वीकृत है। पृष्ठ संख्या १२८ मूल्य ।=)

---

पुस्तकें मिलने का पता—हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, पोस्ट बाक्स नं० ११ प्रयाग।

## ११—संक्षिप्त सूरसागर

सम्पादक—श्री वियोगी हरि

सूरदासजी रचित सूर-सागर से ५०० पद-रत्न चुन कर इसमें एकत्र किये गये हैं। जहाँ तक हो सका है, कई प्रतियों से पदों का पाठ शुद्ध किया गया है। प्रत्येक पद की पाद-टिप्पणी भी लगा दी गयी है। इसकी प्रस्तावना हिन्दी-साहित्य के महारथी सुप्रसिद्ध विद्वान्

**श्री राधाचरणजी गोस्वामी**

ने लिखी है। सागर की थाह लेना सहज नहीं है। उसे पार कौन कर सकता है? तथापि बिना शोभा देखे रहा नहीं जाता। अब तक सब के अनुशीलन करने योग्य सूरसागर का सुन्दर और सुलभ संस्करण नहीं निकला था। लोग इसके रसास्वादन के लिये लालायित हो रहे थे। सम्मेलन ने इस अभाव को दूर कर हिन्दी-साहित्य-रसिकों की पिपासा शान्त करने की यथाशक्ति चेष्टा की है। पुस्तक के अन्त में लगभग १०० पृष्ठ की सूरदासजी की जीवनी तथा काव्य-परिचय जोड़ा गया है। उनकी जीवनी की मुख्य-मुख्य घटनाओं का पूरा-पूरा उल्लेख आगया है। कविता की सुन्दरता भी पर्याप्त रूप से दिखला दी गई है। पदों में आई हुई अन्तर्कथाएँ भी लिखी गयी हैं। यह पुस्तक हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की उत्तमा परीक्षा में स्वीकृत है। एण्टिक काग़ज़ का जिल्ददार संस्करण, पृष्ठसंख्या ४२५, मूल्य २)

## १२—विहारी-संग्रह

सम्पादक—श्री वियोगी हरि

कविवर विहारीलाल की सतसई से प्रथमा परीक्षा के विद्यार्थियों के लिए यह छोटा सा संग्रह तैयार किया गया है। जहाँ तक सम्भव हुआ है, इसमें श्रृंगार रस के दोहों का समावेश नहीं किया गया है, किन्तु ऐसे दोहों का संग्रह किया गया है, जो बिना

किसी सङ्कोच के हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की प्रथमा परीक्षा के परीक्षार्थियों को पढ़ाए जा सकते हैं। पृष्ठसंख्या ६४, मूल्य ≡)

## १५—ब्रज-माधुरी-सार

सम्पादक—श्री वियोगी हरि—इस पुस्तक का विषय इसके नाम ही से प्रकट होता है। इसमें ब्रजभाषा की कविता का सार सङ्कलन किया गया है। इस संग्रह में चार विशेषताएँ हैं :—

( १ ) इसमें सूरदासजी से लेकर आधुनिक काल के स्वर्गीय सत्यनारायणजी तक की भावपूर्ण कविताओं का संग्रह किया गया है।

( २ ) इसमें कुछ ऐसे कवियों की रचनाओं का रसास्वादन भी कराया गया है जो अभी तक कहीं प्रकाशित नहीं हुई थीं।

( ३ ) इस ग्रन्थ में यथेष्ट पादटिप्पणियां लगा दी गयी हैं, जिनकी सहायता से साधारण पाठक भी लाभ उठा सकते हैं।

( ४ ) इसके प्रारम्भ में प्रत्येक कवि का संक्षिप्त जीवनचरित और उसकी कविता की संक्षिप्त आलोचना भी की गई है।

पृष्ठसंख्या ६३२, मूल्य जिल्दवाले संस्करण का केवल २)

## १६—पद्मावत ( पूर्वार्द्ध )

सम्पादक—श्री लाला भगवानदीन

यह हिन्दी के सुप्रसिद्ध कवि मलिक मुहम्मद जायसी कृत पद्मावत का पूर्वार्द्ध है। इस भाग में पहले खण्ड से लेकर ३४वें खण्ड तक समावेश हुआ है। सम्पादक महोदय ने इस ग्रन्थ में इतनी यथेष्ट पादटिप्पणी लगा दी है कि अब इस प्राचीन काव्य का रसास्वादन करना प्रत्येक कविता-प्रेमी के लिए सुलभ हो गया है। अन्त में एक संक्षिप्त शब्दकोश भी जोड़ दिया गया है। पृष्ठसंख्या लगभग २००; मूल्य साधारण जिल्द का १) और जिल्दवाली का १।)

---

पुस्तकें मिलने का पता—हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन
पोस्ट बाक्स नं० ११ प्रयाग।

भाग १२ } मार्गशीर्ष, पौष, संवत् १९८१ { अङ्क ४, ५

## कुटीर का पुष्प

भाग्यवान हूं इस ही में ! यह विजन कुटीर करूं सुरभित,
नहीं तनिक इच्छा मुझको मधुकर-मंडित आरामों की ॥
दुर्बल अंग स्वल्प सौरभ, मम काम-स्थल यह कोना है ।
इसे सजाऊं इसे रिझाऊं केवल यही कामना है ॥
यही लालसा हिय में, इसका इक दिन विध गलहार बनूँ ।
अपना सब सौरभ समाप्त कर रजकन में बस बास करूं ॥

पुरुषोत्तमदास टंडन

# श्री हरिश्चन्द्र-हृदय
## अथवा
# भारतेन्दु-भारती

[ देहरादून के पंद्रहवें हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के प्रतिनिधियों को हिन्दी के सुप्रसिद्ध लेखक श्रीमान् पंडित किशोरीलालजी गोस्वामी ने यह सुन्दर कविता पुस्तकाकार प्रकाशित करा के भेंट की है। —संपादक ]

छप्पय

वैश्य-वंश-अवतंस, अग्र-कुल-कमल-दिवाकर।
पारवती[1]-गिरिधर[2]-सरोज, सुषमा के आकर॥
ऋषि[7]-सभान, अंबर[0]-शोभित, निधिपति[9], विधुभूषण[1]। (३)
श्रीराधा-प्राकट्य-पूर्वदिन, उदित अदूषण॥ (४)
भुवि, भारतेन्दु, भारततरणि, भारतभूषण, भाग्यभट।
शुभ एकादश अवतार हरि, चंद-बदन, कविवर प्रगट॥

❧❧❧
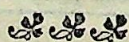
मुक्ति-जन्म, महिजान, ज्ञान की खान, अघासी।
विहरत शंभु सुजान, उमासह, जहँ अविनासी॥
जहाँ मुक्ति हित जन्म चहैं, सुरलोक-निवासी।
गंगा-तरल-तरंग-धौत-पद, सो यह कासी॥
धनि याहू को अतिशय कियो, हरिश्चन्द्र पावनपुरी।
सब कल्मषता, कलियुग-सहित, जाइ अधोलोकहिं दुरी॥

---

(१) भारतेन्दुजी की माता का नाम पारवती था। (२) पिता का नाम गिरिधरदास था।

(३) ऋषि ७, अंबर०, निधि ९, विधु १, इस तरह से संवत् १९०७ विक्रमीय भारतेन्दु का जन्म-संवत् हुआ।

(४) श्री राधा का जन्म भाद्रपद, शुक्ल पक्ष की अष्टमी तिथि को हुआ है, इसलिए अष्टमी के पूर्व की तिथि सप्तमी हुई; अतएव भारतेन्दु का जन्ममास भाद्रपद और तिथि उसी मास की शुक्ला सप्तमी हुई।

सत्-'कवि-वचन-सुधा'-सागर,-गंभीर, महामन।
'हरिश्चन्द्र-चन्द्रिका' जासु की फैली त्रिभुवन॥
'हरिश्चन्द्र में गज़ी नम'त अश्वी पादाती।
रथी; तथा नखिजात सामुहें है आराती॥
मति भोली 'बालाबोधिनी', 'कवि-समाज'-पति, गति विमल।
नित 'पेनी रीडिङ् क्लब'-निर'त, दीय समाज'हिं अतुलबल (१)

कविता-वनिता-वर नायक, साहित्य-विधायक।
हिन्दी-भाषा-जनक, नागरी-लिपि-परिचायक॥
भव्य, भारती-भरत, नाटकाचार्य[१] मुदित-मन।
'रत्नावली[२]' लुटाइ दियो परहित तन, मन, धन॥
सुभ लहि सबसों सनमान अति, कियो कविन सनमान मति।
धन निज बहाइ जल सम अहो ! भयो कौन जगहित सुमति॥*

'विद्या सुन्दर[३]' पाइ, कियो 'पाखंड विडंबन[४]'।
भयो 'वैदिकी[५] हिंसा हिंसा न भवति' प्रहसन॥
सदा, 'धनं जय[६]-विजय' हेत, छबि 'प्रेमयोगिनी[७]'।
'सत्यहरिश्चन्दे[८]'ति नाम महिमा सु 'मोहिनी[९]'॥

(१) भारतेन्दुजी ने "हरिश्चन्द्र मेगजीन," "कविवचन-सुधा," "हरिश्चन्द्र चन्द्रिका" और "बालाबोधिनी" नाम के चार सामयिक पत्र निकाले थे और "पेनी राडिङ्ग क्लब," "कविसमाज" तथा "तदीय समाज" आदि कई सभाएं स्थापित की थीं। इस (तीसरी) कविता में इन्हीं पत्रों और समाजों का नाम संश्लिष्ट है।

(*) चौथी कविता से लेकर इक्कीसवीं कविता तक श्रीभारतेन्दुजी के रचित और सम्पादित समस्त ग्रंथों के नाम श्लेष में आए हैं, जो संख्या-क्रम से लिखे जाते हैं,—

१ नाटक, २ रत्नावली, ३ विद्या सुन्दर, ४ पाखंड विडंबन ५ वैदिकी हिंसा हिंसा न भवति, ६ धनंजय विजय, ७ प्रेमयोगिनी, ८ सत्य हरिश्चन्द्र, ९ मोहिनी,

'कर्पूर-मंजरी[१०]'-सुरभि-लहि, किय 'विषस्य विषमौषधम्[११]'।
जग 'चन्द्रावली[१२]'-चकोर-सम, अहै कौन, प्रणमामि यम्॥
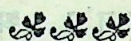
बसन 'नील[१३], देवी' जो धारे, ताहि धरे उर।
लखि 'भारत[१४] दुर्दशा,' बिनासन चह तिहि अंकुर॥
देखि चहूँ, 'मुद्रा, राक्षस'[१५]-गन की बहु मुद्रित।
'दुर्लभ बन्धु[१६]' बिलोकि, रहे जो ह्वै अति निद्रित।
अन्धेर,[१७] नगरि' महँ जो मच्यो, ताकहँ 'सती प्रताप[१८]' तें,
मेटन चाहत, लहि 'माधुरी,[१९]' 'भारत[२०] जननी'-जाप तें॥

सदा, 'विजयिनी-विजय-वैजयन्ती[२१]' कर धारे।
'मनो मुकुल[२२]माला' गल, 'सुमनोञ्जलि[२३]' अलिभारे।
'विजय वल्लरी[२४]', 'मुंहदिखावनी[२५]', देत रसिकजन।
चह, 'भारतवीरत्व[२६]', मागि 'भारतभिक्षा[२७],-कन।
नितही, व्रज-'राज-कुमार[२८]-सु स्वागत-पत्र' चढ़ाइ धनि।
'जातीय[२९], सरस, संगीत' कर, मान, मानसोपायननि[३०]॥
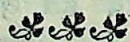
निज-समाज-सरपंच, पवित्रात्मा[३१],' प्रमुदित मन।
'काशमीर-कुसुम[३२]' नि की माला, लसै, जासु तन॥

---

१० कर्पूरमंजरी, ११ विषस्य विषमौषधमं, १२ चन्द्रावली, १३ नीलदेवी, १४ भारतदुर्दशा, १५ मुद्राराक्षस, १६ दुर्लभ बन्धु, १७ अन्धेर नगरी, १८ सती प्रताप, १९ माधुरी, २० भारत जननी (ये बीस नाटक हैं)

२१ विजयिनी विजय वैजयन्ती, २२ मनोमुकुलमाला, २३ सुमनोञ्जलि, २४ विजय वल्लरी, २५ मुँह दिखावनी, २६ भारत वीरत्व, २७ भारत भिक्षा, २८ राजकुमार सुस्वागत पत्र, २९ जातीय संगीत, ३० मानसोपायन (ये दस ग्रन्थ भारतेन्दुजी की सच्ची राजभक्ति के ज्वलन्त प्रमाण हैं) ३१ पंचपवित्रात्मा, ३२ काश्मीर कुसुम,

महाराष्ट्र[३३]-देशक-इतिहास,'-विकास, बदन महँ
बरसत, 'बूंदी, राजवंश'[३४] कहँ चितव सुखद जहँ ॥
लखि 'रामायण[३५] को समय' अरु, 'समय महाभारत[३६],' निरखि।
भनि, 'उदयपुरोदय[३७]' अस्तपर, 'कालचक्र'[३८]–महिमा परखि ॥

❀❀❀
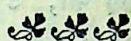
कही 'अगरवालों[३९] की उत्पति,' परम अनूठी।
तथा, 'खत्रियों[४०] की उत्पत्ति,' रची अति मीठी ॥
मौजी, मनके—'बादशाह, दरपण[४१]' प्रतिभा के।
'पुरावृत्त'—संग्रह[४२]'—समुद्र, श्रुतिधर कविता के।
यह दिल, 'दिल्लीदरबार[४३] के, दरपण' निरखन-हार भट।
इनकी चोखी चरितावली[४४],' दिखरावत नाटक अघट ॥
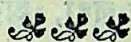
❀❀❀

भए 'भक्तसर्वस्व[४५]', वीर, 'वैष्णव सर्वस्व[४६]' हु।
'वल्लभीयसर्वस्व[४७]', 'युगलसर्वस्व[४८]' मोद बहु ॥
है, 'तदीयसर्वस्व'[४९], 'उत्सवावली[५०]'—विमंडित।
'भक्तिसूत्र[५१]—वैजयन्ति' का—को दंड अखंडित ॥
मन, 'मार्गशीर्ष-महिमा[५२]'-करन, 'माघस्नान[५३]' विनोद-रत।
'पुरुषोत्तम-मास[५४] विधान' के, 'पुरुषोत्तम-पंचक[५५]' जगत ॥

❀❀❀

३३ महाराष्ट्रदेश का इतिहास, ३४ बूँदी राजवंश, ३५ रामायण का समय, ३६ महाभारत का समय, ३७ उदयपुरोदय, ३८ कालचक्र, ३९ अगरवालों की उत्पत्ति, ४० खत्रियों की उत्पत्ति, ४१ बादशाह दरपण ४२ पुरावृत्त संग्रह, ४३ दिल्ली दरबार दर्पण, ४४ चरितावली। ( ये चौदह ग्रन्थ ऐतिहासिक हैं )

४५ भक्त सर्वस्व, ४६ वैष्णव सर्वस्व ४७ वल्लभीय सर्वस्व, ४८ युगल सर्वस्व ४९ तदीय सर्वस्व ५० उत्सवावली ५१ भक्तिसूत्र वैजयन्ती, ५२ मार्गशीर्ष महिमा, ५३ माघस्नान, ५४ पुरुषोत्तम मास विधान, ५५ पुरुषोत्तम पंचक।

'स्तुति[५६] सर्वोत्तम भाषा' में भाखी मनभाई।
'उत्तरार्द्ध भे भक्तमाल[५७]' के फूल सवाई॥
'वैष्णवता अरु भारतवर्ष[५८]' मान-मग-चारी।
'तहकीकात[५९] पुरी का तहकीकात' विचारी।
रचि, 'अष्टादश[६०] हु पुराण की, उपक्रमणिका' अति सुगम।
करि सैर, 'कुरानशरीफ़[६१]' की, मरजादा थापी निगम॥
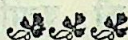
कहि, 'वैसाखमहातम[६२]' हत्यो महातम सारो।
सदा, 'कारतिक[६३]-कर्म-बिधी' सों निज प्रन धारो॥
धर्म-कर्म-निज-निरत, रहत या बिधि मति चोखो।
खरी सदा ही कही, बात भाषी नहिं ओखी॥
'कार्त्तिक[६४]-नैमित्तिक-कृत्य' में, परम परायण, धर्मधुर।
या भांति विमल कीरति लही, अतुल अखंडित तीन पुर।
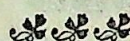
अ'हो ली[६५], न 'मधुमुकुल,[६६]' 'प्रेमफुलवारी[६७]' माली।
'फूलों का[६८] गुच्छा' देते और कुसुमित डाली॥
किए 'कार्तिकस्नान[६९],' नेमसों, प्रेमसरोवर[७०]'।
करि 'स्वरूपचिन्तन[७१],' 'प्रबोधिनी[७२]' बोधि सुबुधवर॥
पुनि, 'प्रातःस्मरण[७३]' सनेह सों, 'गीतगुबिन्दानन्द[७४]'-घन।
अनुराग 'रागसंग्रह[७५]' किए 'वेणुगीत[७६]'-गायन-मगन॥

---
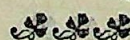
५६ सर्वोत्तमस्तोत्र भाषा, ५७ उत्तरार्द्ध भक्तमाल, ५८ वैष्णवता और भारतवर्ष, ५९ तहकीकात पुरी की तहकीकात, ६० अष्टादश पुराणोपक्रमणिका, ६१ कुरानशरीफ़ ६२ वैशाखमाहात्म्य, ६३ कार्त्तिक कर्म विधि, ६४ कार्त्तिक नैमित्तिक कृत्य, ( ये बीस ग्रंथ भक्तिमार्ग के हैं )

६५ होली, ६६ मधुमुकुल, ६७ प्रेम फुलवारी, ६८ फूलों का गुच्छा, ६९ कार्तिक स्नान, ७० प्रेम सरोवर, ७१ स्वरूपचिन्तन, ७२ प्रबोधिनी, ७३ प्रातः स्मरण, ७४ गीतगोविन्दानन्द, ७५ राग संग्रह, ७६ वेणुगीत,

'प्रीतसमीरण[७७]' सेइ, धारि उर 'प्रेममालिका[७८]'।
'प्रेममाधुरी[७९]',-मत्त, मनाई 'दीपमालिका[८०]'।
'प्रेमतरंग[८१]' समोइ, लह्यो 'वर्षाविनोद[८२]' बहु।
प्रेम[८३]-प्रलाप'नि, कियो, कुतुक कमनीय अनेकहु॥
'शृङ्गार[८४] सतसई' को कियो, 'जैनकुतूहल[८५]' केलि-करि।
रसना 'श्रीनाथस्तुति[८६]' निरत, विरत कुभाव, सुभाव भरि॥

लीलादेवी[८७], छदम'-मयी, जाकी छबि सोहनि।
'स्तोत्र[८८] श्रीसीतावल्लभ'-महिमा, मन मोहनि॥
'श्री भीष्मस्तवराज[८९]'-राज, 'अपवर्ग[९०]-पंचक' हु।
'मंगलप्रातः[९१]स्मरणपाठ,[९२]' कीनो अविरत बहु॥
चहुँ प्रेमअश्रुवर्षण' करत, नहीं बात 'मुकरी[९३]' कही।
'हेमन्त[९४] पंच क' रि 'विनय[९५]-मय, प्रेमपचासा' किय सही॥

'हिन्दीभाषा[९६]'-भाग्य, उदित, 'कवि हृदय[९७] सुधा कर'।
'कृष्णचरित्र[९८]'-विचित्र-चित्र चित्रित मानस पर॥
सुभग'सुन्दरीतिलक[९९]''खुशी[१००]' नित 'कृष्ण[१०१]भोग' में।
'पावस[१०२] संग्रह', नई बहार[१०३],' रचै, सँजोग में॥
किय 'कोशलेश-कवितावली[१०४]','रस-रतनाकर[१०५]' रसिक-वर।
पहिराई 'दूषणमालिका[१०६],' परिपन्थिन-कर, गर-निकर॥

---

७७ प्रीत समीरण, ७८ प्रेम मालिका, ७९ प्रेममाधुरी ८० दीपमालिका, ८१ प्रेम तरंग, ८२ वर्षा विनोद, ८३ प्रेम प्रलाप, ८४ सतसई शृंगार, ८५ जैन कुतूहल, ८६ श्री नाथस्तुति, ८७ देवी छद्म लीला, ८८ श्री सीतावल्लभ स्तोत्र, ८९ श्री भीष्मस्तवराज, ९० अपवर्ग पंचक, ९१ प्रातः स्मरण मंगल पाठ, ९२ प्रेमाश्रुवर्षण, ९३ मुकरी, ९४ हेमन्त पंचक, ९५ विनय प्रेम पचासा। (ये इकतीस ग्रन्थ काव्यामृतप्रवाह के हैं)

९६ हिन्दी भाषा, ९७ कवि हृदय सुधाकर, ९८ कृष्णचरित्र, ९९ सुन्दरी तिलक, १०० खुशी, १०१ कृष्ण भोग, १०२ पावस संग्रह, १०३ नई बहार, १०४ कोशलेश कवितावली, १०५ रस रत्नाकर, १०६ दूषण मालिका,

हरि-'प्रतिमा पूजन[१०७]-विचार,' मूरति प्रगटाई।
रची, 'रामलीला[१०८]' महँ, 'सिय सुखमा[१०९]' मनभाई॥
करी, 'मानलीला[११०]औ फूल बुझौवल' खासी।
गाइ, 'मलारावली[१११],' मगन, 'लालित्य-लता[११२]' सी
'साहित्यलहरि[११३]' महँ धँसि लह्यो, 'श्रुतिरहस्य[११४]' मनभावतो
पुनि, 'बड़ी ज्ञान[११५] से भक्ति' कहि, 'अष्टपदी[११६]' नितगावतो।

मची 'मलार[११७] जयन्ती' सुनि, 'संगीत[११८]-सार' तें।
'प्रहसन[११९] पंच क' राहिं, न, रीते जे बिकार तें॥
महा 'मनोहर संग्रह[१२०],' 'परिहासिनी[१२१]'-भाव-भरि।
भेजत 'प्रेम[१२२] सँदेसा,' बहु, 'पावसप्रलाप[१२३]' करि॥
'रसखान[१२४]'-'सुजान[१२५]-शतेकपर' 'रतिरहस्य[१२६]'-रस-पगिरहे
निसि-वासर, 'परहित[१२७] काम' में, तन, मन, धन सों लगि रहे।

'यात्रा[१२८] सरयूपार' करी, जो जन-मन-भाई।
'प्रशस्ति[१२९] संग्रह, 'पत्रबोध[१३०]' की महिमा गाई॥
चढ़ते 'चपल[१३१] तुरंग,' रसिक, चतुरंग[१३२]' चाल के।
देख, 'भड्डुरी,[१३३]' 'मूकप्रश्न[१३४]' करते निकाल के॥
'श्रीमान[१३५],-चरित्र'-उदार अति, 'राधारमन[१३६]-सिंगार'-रत।
'श्री सूरशतक[१३७]-पूर्वार्द्ध' के, भाष्यकार, हरि-चरन-नत॥

---

१०७ प्रतिमा पूजन विचार, १०८ रामलीला, १०९ सीयसुखमा, ११० मानलीला और फूल बुझौवल, १११ मलारावली, ११२ लालित्यलता, ११३ साहित्यलहरी, ११४ श्रुतिरहस्य, ११५ भक्ति ज्ञान से क्यों बड़ी है? ११६ अष्टपदी, ११७ मलार जयन्ती, ११८ संगीतसार, ११९ प्रहसन पंचक, १२० मनोहर संग्रह, १२१ परिहासिनी, १२२ प्रेम संदेसा, १२३ पावस प्रलाप, १२४ रसखान, १२५ सुजान शतक, १२६ रति रहस्य, १२७ परहित काम, १२८ सरयू पार की यात्रा, १२९ प्रशस्ति संग्रह, १३० पत्रबोध, १३१ चपल तुरंग, १३२ चतुरंग, १३३ भडरा, १३४ मूक प्रश्न, १३५ मानचरित्र, १३६ श्री राधारमण का शृंगार, १३७ श्री सूरशतक पूर्वार्द्ध,

'गुलज़ारे[१३८] पुरबहार', दुहरी [१३९], रही हमेशा।
प्याला भरा, 'प्रेम-मदिरा[१४०]' से, रहता शीशा॥
देख, 'भ्रूणहत्या[१४१],' गहरा कोहराम मचाया।
'वलिया के लेक्चर[१४२]' में, सच्चा काम दिखाया॥
फिर, 'गोमहिमा[१४३]' के शोर से, सारा देश कँपा दिया।
झट 'ताज़िरात[१४४] क़ानून के, शौहर' बन मुजरा किया॥

✿✿✿

'काशिराज[१४५] की वर्षमालिका' गुही मनोहर।
'राधासुधा[१४६] शतक' देखि फैलावत हे कर॥
'बिरहबशीठी[१४७]'-'भ्रमरदूत[१४८]', चाकर-जुग जाके।
अहो, देव, हरि! चंद सरिस जग भाग सु काके॥
'शंका[१४९] निरास किय बाद कर श्री भागवत' सुहावनी।
यह कीरति अतिशय विमल-तर, रहिहै जुग-जुग पावनी॥

✿✿✿
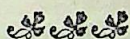
सेवक सदा गुनीजन के, चतुरन के चाकर।
मीत कबिन के, गुनगानी के चित-हित आकर॥
सीधनसों अतिसीध, महा बाँके बाँकन के।
नगद दमाद दिखात सदा अभिमानी-जन के॥
चित चाहत जो, तेहि चाहियत, नेही-नेह-निबाहियत।
जो नाहिं करै परवाह, तेहि नेक निगाह न गाहियत (१)

---

१३८ गुलज़ारेपुर बहार (छोटा), १३९ गुलज़ारेपुर बहार (बड़ा), १४० प्रेम मदिरा, १४१ भ्रूण-हत्या, १४२ वलिया का लेक्चर, १४३ गोमहिमा, १४४ क़ानून ताज़ीरात शौहर, १४५ काशिराज वर्षमालिका, १४६ राधासुधाशतक, १४७ बिरह बशीठी १४८ भ्रमरदूत, १४९ श्रीभागवत शंका निरासवाद। ये चौवन ग्रन्थ विविध विषय के हैं, इनमें से कुछ आप के रचित हैं और कुछ सम्पादित?

(१) श्री हरिचन्द्र उवाच,—
सेवक गुनी के, चाकर चतुर के हैं, कबिन के मीत, चित-हित गुनगानी के।
सीधेन सों सीधे, महा बांके हम बांकेन सों, हरीचंद नगद दमाद अभिमानी के॥

सुन्दर सूरत, स्याम-गौर पर सदा दिवाने।
ह्वै सरबस रसिकन के, तिन्हें सदा सनमाने॥
प्रेमिन के पुनि, दास--दास यह खास कथा है।
सखा कृष्ण के प्यारे, मेटत बिरह-विथा है॥
परिचय स्वभाव को निज दियो, भारतेन्दु हरिचंद कवि।
बिन दाम गुलाम कियो जिन्हें राधारानी-चरन छबि॥

❧❧❧

बाल कृष्ण[1]-पदकमल-मधुप, गिरिधरन[2]-परायन।
गोकुल[3] चंद-चकोर,-सदा, रसिकन-गुन-गायन॥
राधाकृष्ण[4]-रसैक-मत्त-रसना, रसधारिनि।
कृष्णचन्द्र[5]-व्रजचन्द्र[6]-सरल, सुखमा सुखकारिनि॥
बहु विद्या[7]-बारिधि, विमलमन, सरस्वती-सोभित-सदन।
भुवि कृष्णा[8]गम-कोविद, परम, हरिश्चन्द्र कवि, विधुबदन॥

❧❧❧

अति पावनि, सब सोक-नसावनि, जन-मन-भावनि।
छबि छावनि छिनि, 'रसिक[1] किसोरी' मंगल गावनि॥
नेह-निभावनि, महा मूढ़ता-सूल-मिटावनि।
हिय हरखावनि, रसिकन को रस पान करावनि॥
यह कही जीवनी जगमगी, कविवर श्रीहरिचंद की।
सुभ रहै दया जापर सदा, श्रीराधा नँद-नंद की॥

---

चाहिबे की चाह, काहु की न परवाह नेही, नेह के दिवाने सदा सूरत निमानी के।
सर्बस रसिक के, सुदास-दास प्रेमिन के, सखा प्यारे कृष्ण के, गुलाम राधारानी के॥

(१) भारतेन्दुजी के पितामह। (२) पिता। (३) सहोदर। (४) फुफेरे भाई। (५) और (६) भतीजे अर्थात् गोकुलचंद्रजी के पुत्र। (७) कन्या। (८) और (९) भतीजियां अर्थात् बाबू गोकुलचन्द्रजी की लड़कियां।

(१) इस प्रबन्ध के रचयिता का नाम।

# अनुराग-वाटिका

## दंडक

विहरि विश्राम-प्रद अमित आह्लादिनी
रसिक-रमनीय अनुराग-रस-वाटिका।
त्यागि सठ ! मोहमय मंद मायाविनी
दोष-दुख-कूप भ्रमरूप भव-नाटिका॥
उदित-उर-भाव-नवकुंज सुख-पुंज बन
सघन रति-फलित अति ललित लव-लहलही।
रमत वैदेह-वर-कोकिला-कीर तहँ
देखि तरु-छाँह संतापहर गहगही॥
सुकृत-फल-भार तें झूमि झुकि कलपतरु
उरहिं बरबेलि सँग केलि बिलसावहीं।
प्रेम-पथ-जाल बिच उरझि रचि मंडपनि
सुरुचिकर रम्यतर दृश्य दरसावहीं॥
रहत जहँ बिमल मुकुलित मनोरथ मधुर
सुरस-संवलित सुभ कलित कुसुमावली।
विसद सद मालती कुंद मुचकुंद तिमि
सुरभिमय बकुल कल कमल-कुलकी कली॥
मुदित मँडरात मन-मधुप मकरंद हित
करत गुन-गान-गुञ्जार मधु-मद-छके।
लसत पिय-हीय मृदु पद्म-हारावली
खेत नहिं बनत रस, देखि छबि दृग थके॥
मध्य संतोष-सर पुन्य-जल-भरित नित
सत्य-सोपान सुभ स्वच्छ सुचि भ्राजहीं।
पद्मिनी-पत्र सँग लोल कल्लोल करि
मुक्ति-मुक्तान लै हंस बहु राजहीं॥
ज्ञान-विज्ञान-वैराग्यमय मरुत तहँ
बहति सुख-सार रितुराज-उल्लासिनी।

पीउ-मुख-चंद्र की चंद्रिका चारु चहुँ
आर जगमगति अति मंजु मृदु हासिनी ॥
विहरि अनुराग-रस-वाटिका बीच किन
अजहुँ भरि नैन लखि सान्ति-सुख-दायिनी।
संभु सुक सेष सनकादि विहरत जहाँ
लहत अनवरत हरिभक्ति अनपायिनी ॥

---

## पद

मधुकर, क्यों न हरि-रस लहत।
लहत हरि-रस क्यों न, इत उत सूल-सालनि सहत ॥
बसि विषय-विष-बेलि सँग अँग दोष-दाहनि दहत।
करै पान पियूष जहँ नित क्यों न सो मग गहत ॥
कुञ्ज-कुञ्जनि लुञ्ज ह्वै दुख-पुञ्ज जरि-बरि बहत।
जहँ रसिक-रमनीय उपवन, क्यों न तहँ रमि रहत ॥

✤✤✤
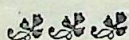
कबहुं तौ या रहनी रहिए।
देवनि दुरलभ देह पाय किन कृष्ण-कृपा-रस लहिए ॥
सीरे सुधा-सने सुचि साँचे वचन बोलि अघ दहिए।
पर निन्दा पर धन पर तिय तजि, पर उपकार निबहिए।
सुख-दुख दोऊ एक जानि सिर आनि परै सो सहिए।
सहज सील संतोष धारि सतसंग-चाव चित चहिए ॥
छाँड़ि अमीरी ऐंठ गहरी गहनि गरीबी गहिए।
रहिए मुदित एक रस निरभय, क्यों करि सो सुख कहिए ॥

✤✤✤
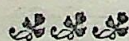
गावति कहा रँगीली! ठाढ़ी।
ओठनिही मुसुकाति गुनीली, चढ़ी दृगनि रति गाढ़ी ॥
अबहीं बिरह-उदेग-सिंधु तें बूड़त पिय गहि काढ़ी।
याही तें तेरे इन नैननि नेह-नदी-सी बाढ़ी ॥

✤✤✤

हरि, बिपरीत सुभाव तिहारो।
बसति जदपि राधा गोरी नित, तऊ हृदय तुअ कारो॥
चाखत चोरि-चोरि मृदु माखन पै हिय कठिन करारो।
सरस नाम घनश्याम, नेह-रस नहिं बरसावनहारो॥
आँखि बचाय चलत तिनसों तू जिन आँखिन कौ तारो।
प्रान लेत हँसि-हँसि तिनके तू जिन प्राननि कौ प्यारो॥
रसघातें करि मारत बातें देखत कौ अति बारो।
तेरी या बिपरीत बानि पै कहा हमारो चारो॥

( क्रमशः )

वि० ह०

---

# देहरादून में हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन

का

## पन्द्रहवाँ वार्षिक अधिवेशन

### पहला दिन

देहरादून में हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन का पन्द्रहवाँ अधिवेशन सानन्द समाप्त हो गया। कार्तिक शुक्ला ११-१२ और १३ की तिथियाँ सम्मेलन के लिए निश्चित की गयी थीं। किन्तु एकादशी के दिन, वृष्टि के कारण, सम्मेलन का आरंभ न हो सका। द्वादशी को १२ बजे दिन से अधिवेशन आरंभ हुआ।

मनोनीत सभापति विद्यावयोवृद्ध पूज्यवर पंडित राधाचरण जी गोस्वामी अपनी तथा अपने पौत्र की अस्वस्थता के कारण नहीं पधार सके। कवि-सम्मेलन के मनोनीत सभापति कविवर पंडित श्रीधरजी पाठक भी किसी अत्यावश्यक कार्यवश नहीं पहुँच सके! स्वागत-कारिणी समिति ने ऐसे अवसर पर बड़ा प्रशंसनीय कार्य किया। उसने तत्काल हिन्दी के अनन्य सेवक श्रद्धेय पंडित माधवरावजी सप्रे को सम्मेलन का साभापत्य समर्पित करने का आयोजन कर लिया। सप्रेजीने भी अनुग्रहपूर्वक स्वागत-कारिणी की

प्रार्थना-स्वीकार कर ली। कवि-सम्मेलन का सभापतित्व लब्ध-प्रतिष्ठ गद्य-पद्य-लेखक श्रीमान् पंडित किशोरीलालजी गोस्वामी को दिया गया। पर तार पहुँचने के पहले ही गोस्वामीजी की गाड़ी छूट गयी! तब कवि-सम्मेलन के सभापति हास्यप्रिय माननीय पंडित जगन्नाथप्रसादजी चतुर्वेदी चुने गये। परमात्मा की अमोघ अनुकंपा से अधिवेशन में कोई विघ्न उपस्थित नहीं हुआ। मंगलायतन भगवान् की कृपा से नित्य नव मंगलोदय हुआ।

प्रतिनिधियों और दर्शकों की अच्छी उपस्थिति थी। उपस्थित साहित्य-सेवियों और हिन्दी-हितैषियों में श्री पंडित पद्मसिंहजी शर्मा, श्रीबाबू पुरुषोत्तम दासजी टंडन, श्री पंडित जगन्नाथप्रसाद जी चतुर्वेदी, श्रीबाबू शिवप्रसादजी गुप्त, महा महोपाध्याय श्री पंडित गिरिधरजी शर्मा, श्री पंडित जगन्नाथप्रसादजी शुक्ल, श्री पंडित उदितमिश्रजी, श्री पंडित माधवशुक्लजी, श्री पंडित बदरी दत्तजी जोशी, श्री पंडित झाबरमल्लजी शर्मा, श्री पंडित श्रीनारायण जी चतुर्वेदी एम० ए०, एल० टी०, श्री प्रो० दयाशंकरजी दुबे, श्री बाबू रामचन्द्रजी वर्मा, श्री पंडित छबीलेलालजी गोस्वामी, सरदार श्री नर्मदाप्रसाद सिंहजी, श्रीस्वामी नरसिंहदेवजी, रायसाहब श्री दुर्गादत्त पंत, श्री दुलारेलालजी भार्गव, श्री पंडित ऋषीश्वरनाथजी रैना, श्री जयचन्द्रजी विद्यालंकार, श्री पंडित द्वारकाप्रसादजी चतुर्वेदी, श्री पंडित रामजीलालजी शर्मा, अध्यापक श्री पंडित रामरत्नजी, श्री पंडित गौरीशंकरजी भट्ट, श्री पंडित ज्वालादत्तजी शर्मा तथा श्रीमती पार्वती देवीजी, श्रीमती हेमंतकुमारीजी चौधरानी, श्रीमती ठाकुर देवीजी आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।

स्वागत-कारिणी का स्वागत-कार्य बड़ा ही उत्साहपूर्ण था। लोगों में असाधारण प्रेम दिखाई देता था। मंडप के अतिरिक्त नगर भी सजाया गया था। मंडप-द्वार पर स्वागताध्यक्ष वेदतीर्थ पंडित नरदेवजी शास्त्री बड़े ही विनीत भाव से समागत सज्जनों का स्वागत कर रहे थे। एक बड़े मंच पर सभापति तथा प्रमुख

सज्जनों के बैठने की व्यवस्था थी। महिलाओं के लिए अनावृत स्थान अलग निर्दिष्ट था। मंडप में अनेक सिद्धान्त-सूक्तियाँ सुसज्जित की गयी थीं; जैसे 'सूर सूर तुलसी ससी, उडुगन केशवदास' 'निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल,' 'सरस्वती ने यहीं तप किया था,' 'उच्च कोटि के साहित्य से देश का भला होगा', 'हिमालय स्वागत करता है' इत्यादि।

ठीक १२ बजे, जैसा कि लिख आये हैं, कार्यारंभ हुआ। गुरुकुल के ब्रह्मचारियों ने वैदिक मंत्रों से मंगलाचरण किया। तदनंतर हिन्दी के प्रसिद्ध राष्ट्रीय कवि पंडित माधव शुक्लजी ने, हारमोनियम के स्वर में, 'वन्देमातरम्' गीत गाया। तत्पश्चात् अनन्य हिन्दी-भक्त पंडित उदितमिश्रजी ने निम्नलिखित स्वरचित स्वागत-गान सुनाया—

तुम्हारो स्वागत है महराज !
भलो बुरो सब जानि आपनो लेहु सँभारहु काज ॥
प्रेम न नेम कहा दिखरावों सूखो स्वागत मेरो।
केवल एक भरोसो निशिदिन चरन-जलज-रज केरो ॥१॥
दीठि, पीठि को कठिन पाँवड़ो कैसे भला बनावों !
तव दरसन तें विकसित-हिय को हर्षित आज बिछावों ॥२॥
है यह "लेन फालतू" प्रभुवर ! बाहर को व्यवहार।
याही तें अँसुवन–मुक्ता को गूँथि पिन्हावों हार ॥३॥
बनहु अभिन्न त्यागि भेदन कों गावहु हिन्दी-गान।
जय हिन्दी की जय हिन्दी की जय जय छेड़ो तान ॥४॥
'राधा-चरण'-मनाय'अमर'-'नर'बनि,माता-दुख टारो।
सरस,सुखद, वर हिन्दी-बानी-यश करि 'उदित' पसारो ॥५॥

शुक्लजी ने 'बदनसीबी से हुई आज यह हालत मेरी' यह गान भी गाया। इसके बाद लाहोर-नेशनल-कालेज के प्रोफ़ेसर प्रसिद्ध हिन्दी-सेवी श्री जयचन्द्रजी विद्यालंकार ने रात में "कवि-दरबार" होने की शुभ सूचना दी। विद्यालंकारजी ने अपनी असमर्थता बतलाते हुए कहा कि "मुझे केवल १०-१२ दिन का समय मिला, इतनी

जल्दी में क्या हो सकता था ? पंजाब निवासियों को हिंदी-कवियों का सूक्ष्म परिचय दिलाने के विचार से 'कवि-दरबार' की कल्पना की गयी थी। पंजाब प्रान्तीय सम्मेलन में इस कल्पना का जन्म हुआ था। मित्रों को यह स्वांग पसंद आया। सहृदय वर शास्त्रीजी ने आज्ञा दी कि देहरादून में 'कवि दरबार' अवश्य होना चाहिए। इतनी शीघ्रता में जो कुछ हम कर सके हैं, उसका श्रेय मेरे मित्र श्री चेतरामजी को है, जिन्होंने राष्ट्रीय विद्यालय के विद्यार्थियों को हिन्दी सिखायी है।"*

तत्पश्चात् स्वागताध्यक्ष श्रीमान् पंडित नरदेवजी शास्त्री ने अपना सुन्दर लिखित भाषण पढ़ा, जो नीचे दिया जाता है—

"माननीय माताओ, बहनों तथा प्रतिनिधिगण !

जब मैंने देहली में निमन्त्रण दिया था, तब स्वप्न में भी यह ध्यान नहीं था कि हमको आठ मास में ही यह सम्मेलन करना पड़ेगा! विचार तो यही था कि मार्च अथवा अप्रैल में सम्मेलन का समारोह रचा जाय, किन्तु हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन प्रयाग के प्रधान-मंत्री श्री पं० रामजीलालजी शर्मा की प्रबल प्रेरणा, यहां की परिस्थिति, सहकारी कार्यकर्त्ताओं की सम्मति, भावी विघ्न आदि अनेक कारणों से यही अवसर अनुरूप प्रतीत हुआ। हमने कार्य तो पूर्ण उत्साह से उठाया था, किन्तु बीच में सहसा जलप्रलय के उपस्थित होने से लोगों में भयङ्कर उदासीनता छा गई। थोड़ी देर के लिये हमारी हिम्मत सर्वथा टूट गई। फिर भगवान् का स्मरण करके हम अपने कार्य में संलग्न हुए।

थोड़े समय में जो कुछ बन पड़ा आपके संमुख उपस्थित है। श्री ला० उग्रसेनजी रईस हमारा उत्साह न बढ़ाते, डी० ए० बी

* श्रीयुक्त जयचन्द्रजी विद्यालङ्कार किसी आवश्यक कार्यवश उसी दिन लाहौर जा रहे थे। इसी कारण सभापति का निर्वाचन होने के पूर्व ही, स्वागताध्यक्ष के निदेशानुसार, आपने अपनी सूचना उपस्थित की।

—संपादक

कालेज के प्रिन्सिपल श्रीलक्ष्मणप्रसाद एम०ए० तथा उनके सहकारी प्रोफेसर, टीचर, हमारा हाथ न बटाते, कनखल के पं० रामचन्द्र वैद्य आदि सज्जन हिम्मत न दिलाते, स्वागतकारिणी के सदस्य सहायता न देते और हिन्दी-समाचार-पत्र हमारी सहायता न करते तो निश्चय ही देहरादून में सम्मेलन न होने पाता। इधर साहित्य सम्मेलन का नाम भी कोई नहीं जानता था बड़ी कठिनता से सम्मेलन का नाम लोगों को याद हुआ है, किन्तु 'साहित्य' कहने के लिये अब भी लम्बा सांस लेते हैं। यहां डी० ए० वी० कालेज सम्मेलन की हिन्दी-परीक्षाओं का केन्द्र है। इसने इस विषय में अच्छा कार्य किया है। श्रीसाहित्याचार्य पं० रामचन्द्र शास्त्रीजी ने इस विषय में प्रशंसनीय उद्योग किया है, तदर्थ वे धन्यवाद के पात्र हैं। कन्या पाठशाला द्वारा भी कुछ कल्याण हुआ है। खुशीराम लायब्रेरी द्वारा भी कुछ प्रचार होता रहता है।

ज़िला देहरादून तो नवीन सभ्यता का गढ़ है। शहर तो है छोटा, किन्तु इसका सिर मंसूरी से जा मिला है! इसके हाथ पैर भी दूर तक फैल रहे हैं। ऐसे स्थान में जिस कठिनता से हम सम्मेलन कर रहे हैं इसको हम ही जानते हैं।

धनाभाव, कार्यकर्त्ताओं का अभाव, जनता की सहानुभूति का अभाव, वर्षा ऋतु की प्रबलता, भयङ्कर जलप्रलय, समय की न्यूनता इन कारणों से हम जैसी तैयारी करना चाहते थे न कर सके।

स्वागतकारिणी समिति का अध्यक्षपद मैंने विवश होकर लोगों के आग्रह से स्वीकार किया है। मैं इस पद के योग्य नहीं हूं। संभवतः सम्मेलन बुलाने का यह प्रायश्चित्त है। चलिये थोड़ी सी राम-कहानी के साथ में अपने वक्तव्य को प्रारम्भ करता हूं। मैं महाराष्ट्र हूं और इसीलिये थोड़ासा आत्मनिवेदन आवश्यक है, क्योंकि यह हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन है।

## मैंने हिन्दी कैसे सीखी, मेरा अनुभव

मौ० हसरत मोहानी ने ठीक ही कहा है कि हिन्दी-जैसी सरल भाषा दूसरी नहीं है। मैं निज़ाम हैदराबाद की रियासत का रहने-

वाला हूँ। वहां की कोर्ट भाषा उर्दू है। उस रियासत में चार भाषाएँ प्रधान हैं। १ मरहठी २ तेलगू ३ कर्नाटक ४ मलयालम और ५वीं सर्वसाधारण उर्दू है ही। इन चार विभक्त-भाषाभाषियों का परस्पर व्यवहार प्रायः ऊर्दू में ही रहता है। हमारे पिताजी रावसाहब श्रीनिवासरावजी इस राज्य में नौकर थे। हम छोटे-छोटे थे, जब हमारे पिताजी स्व० पं० लेखरामजी (आर्यमुसाफ़िर) के सहवास व परिचय से आर्यसामाजिक विचार के हो गये। आर्यविचार के होने से इनको यह ख़याल हुआ कि लड़कों को हिन्दी सिखलानी चाहिये। इसीलिये हिन्दी की पुस्तकें मंगाई गईं। मरहठी व हिन्दी के अक्षर एक से ही हैं, अतः अक्षरज्ञान तो मैंने एक ही दिन में कर लिया। केवल तीन अक्षर विचित्र से लगते थे—एक अ, दूसरा झ, तीसरा ण, मरहठी में इनके आकार दूसरे हैं। हिन्दी की पुस्तकों को हम धड़ाधड़ पढ़ने लगे। पिताजी कठिन शब्दों का अर्थ समझा देते थे। पाठकों को आश्चर्य होगा कि मैंने पन्द्रह दिन में ही हिन्दी की चार पुस्तकें पढ़ डालीं। मुसलमानी राज्य में होने से "जाता है, आता है, खाता है" इतनी हिन्दुस्तानी तो हम बोल ही लेते थे। फिर स्व० स्वामी नित्यानन्द सरस्वतीजी-रचित पुरुषार्थप्रकाश पढ़ने लगे। यह पुस्तक अत्यन्त मधुर सरल हिन्दी में लिखी हुई है। इसको पढ़कर मुझको हिन्दी का विशेष ज्ञान हुआ, किन्तु जब तक मैं यू० पी० में आकर न रहा, तब तक इसका मर्म ज्ञान न हुआ। यहां के पण्डितों के साथ रहकर मेरी हिन्दी बदलती गई, संस्कृत के साथ हिन्दी भी संस्कृत सी बनने लगी। शनैः शनैः हिन्दी के विद्वानों के परिचय से बहुत कुछ अनुभव हुआ। लेख लिखने के लिये उमंगें उठने लगीं। सब से प्रथम मैंने अपना हिन्दी लेख बिहार के आर्यावर्त्त नामक समाचारपत्र में लिखा। उस समय उसके सम्पादक थे स्व० श्री रुद्रदत्तजी सम्पादकाचार्य्य। इन्होंने मेरे लेखों को पसन्द किया, इससे मेरा उत्साह बढ़ा। मैंने फिर अन्य समाचारपत्रों में लेख लिखने का क्रम बांधा। शनैः-शनैः नये अनुभव होते गये। जिन लेखों को मैं भेजता था उनको देखता रहता था कि सम्पादक कहां-कहां ठीक करते हैं।

इससे मुझे बहुत लाभ हुआ। फिर १६०८ में सुहृद्वर हिन्दी-सागर श्री पं० पद्मसिंह शर्माजी के साथ 'भारतोदय' का सहकारी सम्पादक रहा, जिससे उर्दू और हिन्दी कवियों के काव्यों का कुछ कुछ मर्म समझ में आने लगा। फिर मैंने धृष्टता से ग्रन्थलेखन का अभ्यास किया और गत सोलह वर्ष में बहुत से ट्रैक्ट तथा अनेक ग्रन्थ लिख डाले। यह है संक्षेप से मेरा हिन्दी-ज्ञान का इतिहास। मुझे स्वप्न में भी ध्यान नहीं था कि मैं एक दक्षिण महाराष्ट्र का निवासी इस प्रकार हिन्दी सीखता-सिखाता ठेठ उत्तर में आकर इस उत्तराखण्ड के द्वार पर अखिल-भारतवर्षीय पञ्चदश हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के अवसर पर स्वागताध्यक्ष बनकर आप जैसे हिन्दी-कोविद महानुभावों के स्वागत करने का सौभाग्य प्राप्त कर सकूँगा। यह मेरे पूर्वजन्म-कृत सुकृत का ही फल है।

मैं जब पूने में नूतन मराठी विद्यालय में पढ़ता था, तब एक दिन भूगोल के घण्टे में हमारे मास्टर बापटजी ने मुझ से कहा कि गंगोत्री बतलाओ। मैं छोटा था, नक़शा ज़रा ऊँचा टंगा था, मैंने बेत लेकर उसको बतलाने का यत्न किया, किन्तु मेरी भूल से बेत का सिरा मुलतान पर रक्खा गया। मास्टर बापट ज़रा सख्त मास्टर थे। उन्होंने उसी बेत से मेरी खबर ली। मैं अपनासा मुँह लेकर बेंच पर आ बैठा। इस हिमालय स्थित गंगोत्तरी के लिये मुझे मार खानी पड़ी, इसलिये हिमालय की उपत्यका में होनेवाले सम्मेलन का स्वागताध्यक्ष मैं हुआ तो आश्चर्य ही क्या है? इतनी मार खाने का कुछ तो फल मिले! मैं अपने मरहठी भाषा के गुरु श्री बापट जी का कृतज्ञ हूँ। बन्धुगण! यह सच्ची घटना है, मैं विनोद नहीं कर रहा हूँ।

## हम आपका क्या स्वागत करें!

प्रिय बन्धुगण, हम आपका क्या स्वागत करें! हम इतने तुच्छ किन्तु इतने बड़े हिमालय के प्रतिनिधि बनकर भारतीय प्रतिनिधियों का स्वागत कर रहे हैं यह हमारा सौभाग्य है। ऋषि-मुनियों की

यह दिव्य भूमि "देवभूमयः" नाम से प्रसिद्ध है—इसी देव-भूमि के सबसे उच्च भाग में, त्रिविष्टप में, प्रथम वेदवाणी का ऋषियों के हृदय में प्रादुर्भाव हुआ था। यहीं से हिन्दी भाषा की नानी देववाणी का प्रकाश समस्त संसार में पहुँचा। आज कालदौरात्म्य से न उस वेदवाणी का ही प्रभाव शेष है, न देववाणी का। हमारा हिमालय जो कि जगत् के इतिहास का साक्षी है और जिसने अपनी आंखों से जगत् की अनेक क्रान्तियाँ देखी हैं, आंख मूँदे न जाने किस ध्यान में मस्त है। हिमालय की शोभा देवों के अभाव से निस्तेज सी हो रही है। इधर देवों के अभाव में दैवी सम्पद् का ह्रास हो रहा है और शनैः शनैः आसुरी सम्पद् अपने पैर फैला रही है। प्राचीन सभ्यता मिटकर नवीन सभ्यता का प्रभाव बढ़ रहा है। नवीन सभ्यता हिमालय के कंधों तक चढ़ गई है, केवल गौरीशङ्कर की चोटी बच गई है और नवीन सभ्यता की ज़िद है कि मैं गौरीशङ्कर के सिर पर पैर रखकर मानूँगी। ऐसे समय में स्वधर्म की रक्षा द्वारा हिमालय के सम्मान की रक्षा करना हम सब लोगों का परम धर्म है। स्वधर्म, स्वराष्ट्र, स्वराज्य, स्वशिक्षा, स्वभाषा, स्वलिपि, स्वसभ्यता, स्वाभिमान, स्वरीति, स्वनीति—इन सबका परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध है। सरस्वती राष्ट्रभाषा के रूप में पुनः हमारे उत्तराखंड के द्वार पर आई है, हम इसका और इसके प्रतिनिधियों का स्वागत करते हैं। यह राष्ट्रभाषा अपनी नानी देववाणी का गौरव बढ़ायेगी और देववाणी वेदवाणी की रक्षा करेगी। और वेदवाणी द्वारा फिर धर्म की रक्षा होगी, धर्म की रक्षा से भारत की रक्षा होगी, भारत की रक्षा से संसार की रक्षा होगी। संसार मर्यादा में बना रहे इसलिये भारत भूमि की रक्षा परम आवश्यक है। भारत की सभ्यता ही सर्वश्रेष्ठ है, इसीसे संसार का कल्याण होगा। पाश्चात्य सभ्यता के कारण यूरोप तथा अन्य पाश्चात्य देशों की बुरी दशा हो रही है।

इधर हमारी पराधीनता की पराकाष्ठा देखिये—

सिर्फ़ मेरा हाथ चल रहा है।
उन्हीं का मतलब निकल रहा है॥

उन्हीं का मज़मूं, उन्हीं का काग़ज़ ।
क़लम उन्हीं का, दवात उन्हीं की ॥

मैं अपने टूटे-फूटे अक्षरों में यह कहता हूँ कि—

उन्हीं की शिक्षा, उन्हीं की दीक्षा ।
उन्हीं की भाषा, लिपी उन्हीं की ॥
उन्हीं की रीति, उन्हीं की नीति ।
उन्हीं के आचार, विचार उन्हीं के ॥
उन्हीं का देश है, उन्हीं का वेश है ।
तहज़ीब उन्हीं की, मज़हब उन्हीं का ॥

पाश्चात्य सभ्यता के साथ सब कुछ बदलता जाता है। स्वभाषा का स्वसभ्यता के साथ घनिष्ठ सम्बन्ध है। स्वसभ्यता गई कि राष्ट्र का नाम मिट गया समझिये ।

उन्हीं के मतलब की कह रहा हूं ।
दिमाग़ मेरा व बात उनकी ॥
उन्हीं की महफ़िल सजा रहा हूं ।
चिराग़ मेरा व रात उनकी ॥

बन्धुगण ! क्या सचमुच ऐसी अवस्था नहीं है ? यदि हम बचना चाहते हैं तो हमको अपने स्व की रक्षा करनी चाहिये, स्व में सब कुछ आ गया। उसी में स्वभाषा आ गई जो कि राष्ट्रभाषा होने का संमान पा चुकी है। जिस लिपि में संसार की सबसे प्रथम धर्मपुस्तक लिखी जा चुकी है, उसी देवनागरी लिपि की रक्षा द्वारा ही हमारा कल्याण होगा ।

हे बन्धुगण ! हिमालय आपका हृदय से स्वागत करता है ! स्व० लोकमान्य तिलक ने जिस भाषा को राष्ट्रभाषा बनाने का यत्न किया था, महात्मा गान्धी तथा मा० मालवीयजी ने जिसको राष्ट्रीय सभा में सम्मानित किया, जिसका आदर अब सब भारतीय समान रूप से कर रहे हैं, राजा-महाराजा जिसको अपना रहे हैं, उस राष्ट्रभाषा

के आश्रय से एक राष्ट्र बनावें, जिससे हम लोग अथर्ववेद के शब्दों में एक स्वर से कह सकें कि—

राष्ट्रे वयं जागृयाम पुरोहिताः स्वाहा

(अथर्व)

"शब्दब्रह्मणि निष्णातः परं ब्रह्माधिगच्छति"

हमारे शास्त्रकारों ने दो ब्रह्म माने हैं, एक शब्दब्रह्म और दूसरा परब्रह्म। जो शब्दब्रह्म में निष्णात होता है वही परब्रह्म को पाता है। इसलिये स्वभाषा की उपासना करना शब्दब्रह्म की उपासना करना है। शब्दब्रह्म हमारे भारत की रक्षा करें।

सक्तुमिव तितउना पुनन्तो।
यत्र धीरा मनसा वाचमक्रता॥
अत्रा सखायः सख्यानि जानते।
भद्रैषां लक्ष्मीर्निहिताधिवाचि॥

शुद्ध किये सत्तू की भांति जो विद्वान् मनसे शुद्ध वाणी बोलते हैं उनकी वाणी में कल्याणकारिणी लक्ष्मी स्थित रहती है। वही विद्वानों की भद्रा लक्ष्मी हमारी वाणी में स्थित हो।

चत्वारि शृंगा त्रयो अस्य पादाः।
द्वे शीर्षे सप्त हस्तासो अस्य॥
त्रिधा बद्धो वृषभो रोरवीति।
महोदेवो मर्त्या आविवेश॥

शब्दरूपी वृषभ, जिसके नाम, आख्यात, उपसर्ग, निपात ये चार सींग हैं, भूत, भविष्यत् और वर्तमान जिसके तीन पैर हैं, शब्दात्मक नित्य और अनित्य जिसके दो सिर हैं, सात विभक्तियाँ जिसके सात हाथ हैं, जो हृदय, कण्ठ और सिर तीन जगह बंधा हुआ है ऐसा यह विचित्र वृषभ हमारी रक्षा करे।

चत्वारि वाक्परिमिता पदानि।
तानि विदुर्ब्राह्मणा ये मनीषिणः॥

गुहा त्रीणि निहता नेङ्गयन्ति ।
तुरीयं वाचो मनुष्या वदन्ति ॥

परा, पश्यन्ती, मध्यमा, वैखरी ये चार वाणियाँ हैं। हम जिस को बोलते हैं वह वैखरी हमारी रक्षा करे। शेष तीन हृदयगुहा में स्थित हैं इस तत्वको विद्वान् ही जानते हैं। वैखरी के शुद्ध व्यवहार से हमारी राष्ट्रभाषा में स्पृहणीय स्फूर्ति उत्पन्न हो और उस स्फूर्ति द्वारा भारतमाता की दिव्य मूर्ति उज्ज्वल रूप को धारण करे और उसकी अटल कीर्ति दिगन्तव्यापिनी होकर प्राचीन वैभव की अनुपम स्मृति दिलाने में समर्थ हो।

सरस्वती सा जयति प्रकामं ।
देवी श्रुतिस्वस्त्ययनं कवीनाम् ॥
अनर्घतामानयति स्वभङ्गया
योल्लिख्य यत्किञ्चिदिहार्थरत्नम् ॥

(कविरहस्य)

---

सुविज्ञ स्वागताध्यक्ष ने अपना भाषण समाप्त कर सभापति के आसन ग्रहण करने का, मधुर और शिष्ट शब्दों में, प्रस्ताव उपस्थित किया। आपने कहा—

"बहिनो और भाइयो ! आप लोगों को यह तो मालूम ही होगा कि यहां की स्वागत-समिति ने श्रीमान् पंडित राधाचरणजी गोस्वामी को, जो वृन्दावन-निवासी एक वयोवृद्ध और हिन्दी के धुरन्धर पंडित ही नहीं, संस्कृत, बंगाली और गुजराती के भी विद्वान् हैं, सभापति चुना था। ७ तारीख को गोस्वामीजी का यह तार आया कि 'मेरा पौत्र अस्वस्थ है, अतः मैं नियत तिथि पर नहीं आ सकता।' हम लोग घबरा गये। सभापति नहीं आते; तो काम कैसे चलेगा! हमने तार दिया कि, 'क्या आप कल तक पधार सकते हैं?' इस पर तार द्वारा यह जवाब आया कि, 'नहीं आ सकता, मैं भी बीमार हूं।' अब हम बड़ी चिन्ता में पड़े। क्या करें क्या न करें! परन्तु भगवान् सब की रक्षा करते हैं। उन्होंने हमारी भी रक्षा की।

श्रीमान् पंडित माधवरावजी सप्रे का तार आया कि, मैं आ रहा हूं। सप्रेजी भारतवर्ष के एक बड़े भारी विद्वान् हैं। आप की हिन्दी-सेवा के लिए समस्त हिंदी-संसार आप का कृतज्ञ है। हमने सोचा—चलो, ठीक है, इनको वरण कर लेंगे। आपने तार दिया था दो बजे आने को, परन्तु आ गये दिल्ली-एक्सप्रेस से ग्यारह बजे। यह अच्छा हुआ। ढाई बजे आते तो कुछ कहने-सुनने के लिए समय ही न मिलता। अब उन्हें अपनी कठिनाई बताने का हमें काफ़ी समय मिल गया। हमने उनसे प्रार्थना की कि आपको हिमालय-सम्मेलन का सभापति होना ही पड़ेगा। कृपाकर आपने हमारी प्रार्थना स्वीकार कर ली। हम लोग तो आपका यथेष्ट स्वागत नहीं कर सके, पर प्रकृति ने किया। हिमालय ने जल बरसा कर आप की अगवानी की। मेरे प्यारे भाइयो! इसे आप सौभाग्य समझें। जब मैं देखता हूं कि सप्रेजी-जैसे प्रकांड विद्वान् विद्यमान हैं, तब कार्य के सफल होने में शंका ही क्या हो सकती है? जब मैं महामहोपाध्याय पंडित गिरिधर शर्मा, सुप्रसिद्ध हिंदी साहित्य-सेवी पंडित जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी, राष्ट्रभाषा-प्राण पुरुषोत्तमदास टंडन आदि महानुभावों को देखता हूं तो मेरे हृदय में आनन्द का समुद्र उमड़ आता है। अस्तु। अब मैं नियमानुसार कहता हूं कि श्रीमान् पंडित माधवरावजी सप्रे इस सम्मेलन का शुभासन ग्रहण करें।"

हास्यप्रिय श्रीयुत् पंडित जगन्नाथप्रसादजी चतुर्वेदी ने स्वागताध्यक्ष के प्रस्ताव का समर्थन करते हुए विनोदात्मक शब्दों में कहा—

"हिन्दी के प्रसिद्ध विद्वान् सप्रेजी इस सभापति-पदके लिए सर्वथा उपयुक्त हैं। इस पद के लिए पूज्यपाद पंडित राधाचरणजी गोस्वामी मनोनीत हुए थे। पर विधि की विडम्बना से इस सम्मेलन में राधाजी तो पधारीं नहीं, माधवजी पधार गए। स्वागताध्यक्ष पंडित नरदेवजी महाराष्ट्र हैं और सप्रेजी भी महाराष्ट्र हैं— यह साम्य-सम्बन्ध भी सर्वथा उपयुक्त है। मैं स्वागताध्यक्ष को

उपयुक्त सभापति मिल जाने के लिए बधाई देता हूँ। माधव ने भारत में गीता प्रकट की थी। आपके मनोनीत माधव ने भी हिंदी-जगत् में 'गीता' प्रकट की है। राधाचरण तो नहीं आए, पर माधव चरण आ गये—यह हर्ष की बात है। मैं नरदेवजी से प्रार्थना करता हूं कि वे सभापतिजी के कंठ में, मुक्तकंठ से उनका वरण कर, जयमाल डालें।"

चतुर्वेदीजी के भाषण पर खूब हास्यध्वनि हुई। तत्पश्चात् श्रीमान् पंडित रामचन्द्रजी शास्त्री ने इस प्रकार समर्थन किया—

"सज्जनो और उपस्थित माताओ! मैं वयोवृद्ध विद्वान् पंडित माधवरावजी सप्रे का समर्थन करने के लिए खड़ा हुआ हूँ। आप कितने ऊँचे विद्वान् हैं, इसे आप लोग भली भांति जानते हैं। लोक-मान्य तिलक के 'गीता-रहस्य' का हिंदी-रूपान्तर कर आपने ही उसका सुधा-पान हिंदी-जगत् को कराया है। आपका व्यक्तित्व भी असाधारण है। आपकी हिंदी-सेवा के लिए समस्त हिन्दी-साहित्य-सेवी आप के आभारी हैं। मैं स्वागताध्यक्ष के प्रस्ताव का मुक्त कंठ से समर्थन करता हूं।"

शास्त्रीजी के बाद श्रीमान् टंडनजी ने इस प्रस्ताव का इस प्रकार ओजपूर्ण शब्दों में समर्थन किया—

"स्वागत-समिति के अध्यक्ष और सज्जनो! मैं भी अपने मित्रों के स्वर में अपना टूटा-फूटा स्वर मिला पंडित माधवराव सप्रे से प्रार्थना करता हूँ कि आज जो माननीय आसन उनके अर्पण किया जा रहा है उसे वह ग्रहण करें। सप्रेजी मेरे पुराने मित्र हैं। मैं बरसों से उनको जानता हूँ। सप्रेजी उन थोड़े-से इनेगिने मनुष्यों में हैं, जिन्होंने अपना सुख त्याग कर देश-हित के लिये अपना जीवन समर्पण किया है, उन गिने हुए देश-सेवकों में हैं, जिन्होंने, मातृभाषा दूसरी होते हुए भी, हिन्दी को राष्ट्रभाषा के नाते अपनाया है और उसकी इस तरह से उच्च सेवा की है, जिससे किसी भी हिन्दी-भाषा-भाषी को गौरव मिल सकता है। साथ ही सप्रेजी केवल साहित्य-सेवी ही नहीं। उनका गीता-रहस्य तो बहुतों

ने देखा है। वह कितनी ऊँची वस्तु है, प्रायः सब ही पढ़े-लिखे लोग जानते हैं। किन्तु जो उनके जीवन-रहस्य से परिचित हैं वे इतना और अधिक जानते हैं कि सप्रेजी का व्यक्तित्व कितने उच्च आदर्श का है। सप्रेजी का सम्बन्ध राष्ट्रीयता से प्राचीन है। वह 'केसरी' होकर भारत में गरज चुके हैं। उनकी वाणी से कितने ही शत्रुओं के हृदय दहल चुके हैं। इसमें सन्देह नहीं कि 'हिंदी-केसरी' भी शत्रुओं का शिकार हो चुका है। परन्तु हमारा राष्ट्रीय जीवन जैसा है उसमें कितने ही केसरी आयँगे और जायँगे, इसमें कोई बात निराशा की नहीं है। सप्रेजी-जैसी महान् आत्माओं द्वारा उसी प्रकार का "हिंदी-केसरी" फिर गर्जेगा और राष्ट्र को आगे बढ़ायगा। उनकी सेवा का स्मरण करते हुए आज हमारा यह सौभाग्य है जो हम उनको वह आदर का आसन दे रहे हैं जो हमारे अधिकार में है। हमको यह अवसर बड़े भाग्य से मिला है कि हम इस तरह अपने प्रेम का परिचय दें। मैं सप्रेजी से प्रार्थना करता हूं कि वह हमारे प्रेम का उपहार स्वीकार करें और सभापति के आसन पर विराजमान होकर कार्य आरंभ करें।"

महामहोपाध्याय पंडित गिरिधर शर्माजी और हिंदी-हितैषी पंडित छबीलेलालजी गोस्वामी ने भी इस प्रस्ताव का सुमधुर शब्दों में समर्थन किया। समर्थन-अनुमोदन के अनन्तर श्रीमान् सप्रेजी सभापति के आसन पर समासीन हुए। स्वागताध्यक्ष ने उन्हें जय-ध्वनि के बीच में पुष्प-माला पहनायी। इस अवसर पर कविवर पंडित माधव शुक्ल ने 'मोसम आज कौन बड़भागी' यह गान मधुरालाप में गाया। तदनंतर श्रीमान् सप्रेजी ने निम्नलिखित प्रारंभिक वक्तृता दी—

"स्वागत-समिति के अध्यक्ष और अन्य सभासद्गण, पूज्य माताओ और प्रतिनिधिगण, तथा अन्य मेरे प्यारे भाइयो!

मैं आज आप लोगों के सामने जिस परिस्थिति में खड़ा नज़र आ रहा हूँ उसकी कल्पना आप के लिये करना कठिन है। आपने तो अपना कार्य कर लिया। पर मेरे मन में जो इस समय चञ्चलता

है, मेरे हृदय में जो नाना प्रकार के भाव उठ रहे हैं उनको प्रकट करने का मैं प्रयत्न करूँगा। परन्तु मेरी कठिनाइयों की कल्पना आप उसी दशामें कर सकेंगे, जब आप मेरी वर्त्तमान परिस्थिति के साथ सहानुभूति रखेंगे।

मुझे शास्त्रीजी (पं० नरदेवजी) ने सम्मेलन में आने के लिये कई पत्र बड़े ही प्रेम से लिखे थे, और जब मैं अपने घर से सम्मेलन के लिये रवाना हुआ, तब मुझे यही आशा थी कि सम्मेलन में पहुँचने पर मेरे शरीर को कुछ स्वास्थ्य-लाभ होगा; पर यहां स्टेशन से ज्यों ही मैं निवासस्थान पर आया, त्यों ही शास्त्रीजी और उनके मित्र-गण सभापति होने के लिये मुझ पर ज़ोर डालने लगे! मैंने अपनी असमर्थता और अयोग्यता के विषय में बहुत कुछ उनके सम्मुख निवेदन किया, परन्तु उन्होंने मेरी एक भी नहीं सुनी। उन्होंने भी अपनी कठिन स्थितिका निदर्शन कराया। बात भी सच है, नियमानुसार चुने हुए सभापति पूज्य गोस्वामीजी जब नहीं आ सके, तब स्वागतकारिणी के सामने सचमुच ही एक बड़ा कठिन प्रश्न उपस्थित हो गया। मैंने अपनी कठिनाई की रामकहानी सुनायी। परन्तु यहां के मित्रों की कठिनाई के सामने मैं अपनी कठिनाई को भूल गया। मेरा और आपका उद्देश्य एक ही है। मैं आपसे कोई द्वैत भाव नही रखता हूँ। जिस काम के लिये यह सब उद्योग हो रहा है, उसमें मैं भी कुछ हिस्सा रखता हूँ। इसलिये आप चाहे जैसा निर्णय कीजिये मैं स्वीकार करता हूँ। निर्णय करनेवालों की ज़िम्मेदारी का ध्यान मैंने उनको दिलाया था, उनसे स्पष्ट कह दिया था कि आपको निराश होना पड़ेगा, परन्तु मित्रों ने माना नहीं। वास्तव में मैं आपसे सच कहता हूँ कि मध्यप्रदेश में, जहां का रहनेवाला मैं हूँ, सब लोग, बच्चे से बूढ़े तक, इस बात को जानते हैं कि आजतक छोटी से लेकर बड़ी सभा तक किसी सभा के सभापति के आसन पर बैठने की धृष्टता मैंने नहीं की है। परन्तु स्वागतकारिणी समिति की कठिनाई को देखकर, मैं अपनी इन सारी बातोंको भूल गया और अपने मित्रों को प्रणाम करके मैंने इस कठिन कार्यको स्वीकार कर लिया।

अभी मेरे कुछ प्रतिष्ठित सज्जनों ने मेरे विषय में बहुत-कुछ कहा है, परन्तु मैं समझता हूँ कि यह सब उनकी प्रेम, श्रद्धा और भक्ति-भाव की अन्धी कल्पना है। मैं यह नहीं कह सकता हूँ कि उन्होंने झूठ कहा है, परन्तु इतना मैं अवश्य कहूंगा कि मेरे प्रेम ने उनको अन्धा बना दिया है और इसी कारण वे मेरी अयोग्यता और असमर्थताकी ओर दृष्टिपात नहीं कर सके। मेरे मित्र टंडनजी ने भी मेरे विषय में अनेक प्रशंसासूचक शब्द कहे हैं, परन्तु उन सब में सिर्फ़ एक ही बात मुझे सत्य जचती है और वह यह कि मुझे राष्ट्रभाषा हिन्दी से प्रेम है। मेरा जन्म, शरीर से, महाराष्ट्र में है। बचपन में मैंने भी मराठी का ही अभ्यास किया था। इस विषय में पं० नरदेवजी शास्त्री की और मेरी एकही दशा है। परन्तु आगे चल कर कुछ मित्रों की कृपा से मेरे हृदय में राष्ट्रभाषा का भाव पैदा हुआ, मैंने इस बात का अनुभव किया कि इस विशाल देश में एक ऐसी भाषा की आवश्यकता है जिसे सब प्रान्तों के लोग अपनी राष्ट्रभाषा मानें, और वह भाषा हिन्दी को छोड़कर अन्य कोई नहीं है। मैं महाराष्ट्र हूँ, परन्तु हिन्दी के विषय में मुझे उतना ही अभिमान है, जितना किसी हिन्दी-भाषी को हो सकता है। मैं चाहता हूं कि इस राष्ट्रभाषा के सामने भारतवर्ष का प्रत्येक व्यक्ति इस बात को भूल जावे कि मैं महाराष्ट्र हूं, मैं बङ्गाली हूं, मैं गुजराती हूं, या मैं मदरासी हूं। ये मेरे ३५ वर्ष के विचार हैं और तभी से मैंने इस बात को निश्चय कर लिया है कि मैं आजीवन हिन्दी भाषा की सेवा करता रहूंगा। मैं राष्ट्रभाषा को अपने जीवन में ही सर्वोच्च आसन पर देखने का अभिलाषी हूं। मेरे हृदय का यह दृढ़ सङ्कल्प है कि मेरे मरते समय समस्त भारतवर्ष में, एक छोर से दूसरे छोर तक, राष्ट्रभाषा हिन्दी के सिवाय और किसी दूसरी भाषा की आवाज़ सुनाई न दे।

अस्तु! मैं बराबर यह सोच रहा हूं कि मैं आज यहां पर एक बहुत बड़ी ज़िम्मेदारी के स्थान पर बैठा अथवा खड़ा हुआ हूं। यह आसन बहुत ही पवित्र, प्रतिष्ठित और ज़िम्मेदार है। जो सज्जन

इसके योग्य थे वे आज हम लोगों में उपस्थित नहीं हैं। यह हमारा दुर्भाग्य है कि हम उनके दर्शन आज यहां पर न कर सके। मैं अचानक बीच में पड़कर यहां पर बैठाल दिया गया हूं। इसलिये मैं फिर एकबार आप से निवेदन कर देना चाहता हूं कि मैं इस आसन के लिये ज़िम्मेदार नहीं हूं और इस अधिवेशन के लिये भी ज़िम्मेदार नहीं हूँ, इस अधिवेशन के बाद एक साल तक सभापति की जो जिम्मेवरी रहती है उसका भार उठाने के लिये भी मैं असमर्थ हूं। परन्तु हां, इस समय मैंने अपने को आप की सेवा में अर्पण कर दिया है। इसलिये आपकी आज्ञा का पालन करना मैं अपना कर्तव्य समझता हूँ। फिर भी आप मुझसे यह आशा कदापि नहीं कर सकते कि मैं आप के सामने कोई ऐसा उत्तम भाषण उपस्थित कर सकूँ, जिसमें, मार्मिक भाषा में, कोई ऐसी सुन्दर आलोचना की गयी हो जो हिन्दी भाषा के साहित्य में कोई स्थायी स्थान ग्रहण कर सके। मैं तो पूज्यपाद गोस्वामीजी को ही इसका सच्चा अधिकारी मानकर और अपने हृदय में इस बात का ध्यान रखकर कि वे इस समय यहां पर उपस्थित हैं, आपकी सेवा करने को खड़ा हुआ हूँ। मैं अपने को उनका एक छोटा सा प्रतिनिधि समझता हूँ। यही एक भाव इस समय मेरे हृदय में है। इस से अधिक मेरे मित्र और कुछ मुझसे आशा न करें।

जैसे किसी राज्य में राजा न रहा हो और किसी भिक्षुक को लाकर कोई उदार व्यक्ति उस राज्य की गद्दी पर उसे बैठा दे वैसा ही आप लोगों ने भी किया है। आपने मेरी योग्यता को न देखकर केवल अपनी उदारता के अधीन हो यह कार्य कर डाला है, इसलिये सब बातों के जिम्मेदार आप ही हैं। हां, यहां पर इतनी प्रार्थना आपसे मैं अवश्य करूंगा कि आप मेरे साथ पूर्ण सहानुभूति रखकर, सहयोग और मेल के साथ, इस सम्मेलन का कार्य मुझसे करा लेंगे।

पिछले १४—१५ वर्षों में साहित्य-सम्मेलन से जो कार्य हुआ है, उसके विषय में आज कुछ न कहकर अन्तिम दिन में कहूँगा।

इस समय तो मैं एक प्रकार से बेगार में पकड़ लिया गया हूँ, परन्तु आप भी इसको बेगार का ही कार्य न समझ लीजिये। आप सम्मेलन के प्रत्येक कार्य में अपना पूरा पूरा हृदय लगावें और शांत चित्त तथा उदारभाव से सम्मेलन के इन दोनों दिनों की कार्यवाही का निर्वाह करा लें।"

---

इसके अनन्तर सम्मेलन के प्रधान मंत्री श्रीयुत पंडित रामजी लालजी शर्मा ने चौदहवें सम्मेलन की स्थायी समिति का वार्षिक कार्य-विवरण पढ़कर सुनाया। कार्य-विवरण की छपी हुई प्रतियाँ बाँटी गयीं। विवरण के कुछ आवश्यक और उपयोगी अंश नीचे दिये जाते हैं—

हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन को स्थापित हुए चौदह वर्ष व्यतीत हो गये। परमेश्वर की परम कृपा और हिन्दी-प्रेमियों की हितचिन्ता से सम्मेलन का यह चौदहवाँ वर्ष भी सानन्द सम्पूर्ण हो गया। सम्मेलन में आरम्भ से अब तक १४ वर्ष में ३,१५,६७३॥≡)७ की आय हुई और ख़र्च २,२२,८८८-)१ का हुआ। वर्ष के अन्त में ६२,७८५॥=)॥ की बचत थी। इसका ब्यौरा आयव्यय के चिट्ठे में दिया गया है। इस ख़र्च में १,११,६६३॥≡) अकेले मद्रास प्रचार में ख़र्च हुआ है। अर्थात् कुल ख़र्च की आधी रक़म मद्रासप्रचार में ख़र्च हुई।

× × × × × ×

दिल्ली-सम्मेलन के गत अधिवेशन में जो जो प्रस्ताव स्वीकृत हुए थे और गत वर्ष स्थायी समिति में जिन-जिन कार्यों के करने का निश्चय किया गया था उन सब प्रस्तावों और कार्यों के सम्बन्ध में कार्यालय ने अपने कर्तव्य का यथोचित पालन किया। इस वर्ष करौली और जयपुर राज्य में हिन्दी के प्रचार का प्रयत्न किया गया। संयुक्त प्रान्तीय कौंसिल में हिन्दी-भाषा-भाषी सदस्यों को हिन्दी में भाषण देने के लिए जो अनुचित रुकावट डाली गई थी उसके सम्बन्ध में स्थायी समिति ने यह निश्चय किया था कि एक डेपुटेशन कौंसिल के सभापति महोदय की सेवा में जाय और इस

विषय में उचित कार्रवाई करे। वह डेपुटेशन अभी तक नहीं जा सका। अब, आशा है, वह शीघ्र अपने कर्तव्य का पालन करेगा।

× × × × × ×

इस वर्ष गतवर्ष की अपेक्षा २५ परीक्षा-केन्द्र नवीन बनाये गये। परीक्षा की प्रचार-वृद्धि का जो उद्योग किया गया है, उसका पूरा फल तो अगले वर्ष दिखाई देगा।

| सं० ८० में | सं० ८१ में |
| --- | --- |
| प्रथमा में ४५२ | प्रथमा में ५२६ |
| मध्यमा में २६७ | मध्यमा में ३०० |
| मुनीमी में ३० | मुनीमी में ४० |
| आवेदन-पत्र आये। | आरायज़नवीसी में ६ आये। |

इस प्रकार इस वर्ष १२४ आवेदन-पत्र अधिक आये।

परीक्षा की सफलता का मुख्य श्रेय परीक्षकों और व्यवस्थापकों को मिलना चाहिए। एतदर्थ उनकी जितनी प्रशंसा की जाय कम है।

× × × × × ×

सम्मेलन की ओर से मद्रास में हिन्दी-प्रचार का कार्य ६ वर्ष से निरन्तर हो रहा है। दक्षिण-भारत-निवासियों में हिन्दी का कितना प्रचार हुआ है इसका प्रत्यक्ष अनुभव कोकनाडा की कांग्रेस और वहाँ के विशेष सम्मेलन में सम्मिलित होनेवालों को हो चुका है। इस काम में सम्मेलन आरम्भ से श्रावणी पूर्णिमा सं० ८१ तक १,११,६६३॥≡) खर्च कर चुका है। इसमें ३५,६१४॥।-) मद्रास-प्रान्त के निवासियों ने सहायतार्थ प्रदान किये हैं। शेष धन सम्मेलन ने अपने कार्यालय से दिया। इस धन का अधिकांश महात्मा गांधी जी की प्रेरणा और श्रीटन्डनजी तथा सेठ जमनालालजी बजाज के उद्योग से प्राप्त हुआ था।

मद्रास प्रान्त २४ ज़िलों में विभक्त है। भाषा की दृष्टि से यह चार भागों में विभक्त किया जा सकता है।

१. आन्ध्र, २. तामिल, ३. कर्नाटक, ४. केरल। आन्ध्र प्रान्त में इस वर्ष १६ प्रचारकों ने कार्य किया और तामिल में १४ प्रचारकों ने। अब केरल और कर्नाटक में प्रचार करने की विशेष आवश्यकता है।

मद्रास-प्रचार-विभाग ने एक प्रेस भी कई वर्ष से खोल रखा है, जिसमें अब तक २४३४२॥=) खर्च हो चुके हैं। यहां से पुस्तकें भी प्रकाशित होती हैं और "हिन्दी-प्रचारक" नाम का एक पाक्षिकपत्र भी उत्साही कार्यकर्त्ता पण्डित हृषीकेश शर्मा के सम्पादकत्व में निकल रहा है। वहाँ पर एक पुस्तकालय भी है, जिसमें ६८३ पुस्तकें हैं। इसकी वृद्धि का प्रबन्ध किया गया है।

मद्रास नगर में एक "प्रचारक विद्यालय" की स्थापना अभी हाल में की गई है। ४ विद्यार्थियों को १५) मासिक की वृत्ति भी दी जाती है।

मद्रास में प्रचार-सम्बन्धी कार्यों के सञ्चालन के लिए एक समिति का सङ्गठन हो गया है, जिसकी संशोधित नियमावली स्थायी समिति से स्वीकृत हो चुकी है।

सम्मेलन की तीन परीक्षाओं के अतिरिक्त मद्रास में दो वर्ष से चार प्रकार की और परीक्षाएँ प्रचलित हैं। पहली वार वहां ४०० परीक्षार्थी परीक्षा में बैठे थे। दूसरी बार ५२८ परीक्षार्थी सम्मिलित हुए। मद्रास में परीक्षा का काम बड़ी तेज़ी से बढ़ रहा है।

प्रचार सम्बन्धी मुख्य कार्यालय ट्रिपलीकेन मद्रास में है। इसके व्यवस्थापक और सञ्चालक पण्डित हरिहर शर्मा विशारद हैं। आपका उद्योग प्रशंसनीय है। यह सुनकर सबको आनन्द होगा कि पं० हरिहर शर्म्माजी अपनी अल्प वृत्ति में से कुछ न कुछ प्रतिमास बहुत दिन से सम्मेलन के सहायतार्थ प्रदान किया करते हैं। आज कल आप १०) मासिक की सहायता सम्मेलन को देते हैं। यह हिंदी-प्रेम, यह उदारता प्रशंसनीय और अनुकरणीय हैं। वास्तव में मद्रास-प्रचार की सफलता का मुख्य श्रेय पंडित हरिहर शर्म्मा को है।

अब तीन-चार महीने से आसाम में भी हिन्दी-प्रचार का कार्य प्रारम्भ कर दिया गया है। वहां पर गोहाटी में पं० राममनोहर पांडे 'विशारद' प्रचारक का कार्य कर रहे हैं। वहां पर एक हिन्दी-विद्यालय और एक हिन्दी-पुस्तकालय स्थापित हो गया है। हिन्दी विद्यालय में सभी जाति के विद्यार्थी निःशुल्क हिन्दी की शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं। अधिकांश छात्र कालेज और हाईस्कूल के हैं। महिलाओं और बालिकाओं में भी हिन्दीशिक्षा का प्रबन्ध किया गया है। वहां की जंगली और पहाड़ी जातियों में भी हिन्दी के शिक्षाप्रचार का प्रबन्ध किया जा रहा है।

आसामप्रान्त के ६ योग्य नवयुवकों को हिन्दी सीखने के लिए १०) मासिक छात्रवृत्ति दी जायगी। ६ मास बाद वे प्रचारक नियत कर दिये जायंगे। उन्हें यथोचित वेतन दिया जायगा। प्रत्येक ६ मास में ६ प्रचारक तैयार होंगे, छात्रवृत्ति पानेवालों को ६ वर्ष तक आसाम में सम्मेलन के आदेशानुसार प्रचार-कार्य करना होगा। इस प्रकार आसाम में हिन्दी-प्रचार का कार्य सुगम हो जायगा। आसाम प्रान्तनिवासी हिन्दीप्रेमियों को इस काम में सम्मेलन को पर्याप्त आर्थिक सहायता देनी चाहिए।

× × × × × ×

काशी के प्रसिद्ध धनी और हिन्दी-प्रेमी बाबू गोकुलचन्दजी ने अपने स्वर्गीय भाई श्री मंगलाप्रसादजी के स्मारक में जो ४० हज़ार रु० के प्रामिसरी नोट सम्मेलन को दिये थे, उसके व्याज से तीन वर्ष से प्रति वर्ष १२००) का श्रीमंगलाप्रसाद-पारितोषिक उस विद्वान् लेखक को दिया जाता है जिसका ग्रन्थ (निर्णायक-समिति के द्वारा) सर्वोत्तम निर्णीत होता है। इस वर्ष (तीसरी वार का) यह पारितोषिक दर्शन विषय के सर्वोत्तम ग्रन्थकर्ता को मिलेगा *। ऐसा

* दर्शन विषय में सर्वोत्तम मौलिक ग्रन्थ न आने के कारण इस वर्ष मंगलाप्रसाद-पारितोषिक किसी को प्रदान नहीं किया गया है। —संपादक

५

पारितोषिक भारत की और किसी भाषा के लिए नहीं है, यह हिन्दी के लिए, हिन्दीवालों के लिए, कम गौरव की बात नहीं है।

इस वर्ष मंगलाप्रसाद-पारितोषिक के सम्बन्ध में भी समाचार पत्रों में आन्दोलन हुआ। आन्दोलन होना चाहिए, पारितोषिक के लिए निर्णेतव्य ग्रन्थों की आलोचना-प्रत्यालोचना प्रकाशित करना भी बुरा नहीं। किन्तु ऐसे आन्दोलन वैध सीमा के अन्तर्गत ही रहने चाहिएँ। यह भी स्मरण रखने योग्य बात है कि स्थायी समिति की बनाई हुई पारितोषिक-समिति विषय-विशेष के विज्ञ विद्वानों को ही निर्णायक चुनती है। उनका निर्णय न्याययुक्त, पक्षपातरहित और स्वतन्त्र होने में किसी को सन्देह नहीं हो सकता। ऐसे विद्वान् निर्णायक जो अपना अमूल्य समय अनेक ग्रन्थों के पढ़ने और निर्णय करने में लगाते हैं उनकी इस कृपा के लिए सम्मेलन उनका परम अनुगृहीत है।

× × × × × ×

पुस्तक-प्रकाशन के लिए एक पुस्तक-प्रकाशन-समिति है, जिसमें ९ सदस्य हैं। इस समिति के संयोजक पं० द्वारकाप्रसादजी चतुर्वेदी हैं। इसवर्ष इस समिति के ६ अधिवेशन हुए। इस वर्ष सुलभ-साहित्य-माला में सूरपदावली छपी, प्रथमालङ्कार निरूपण का दूसरा संस्करण प्रकाशित हुआ और द्वितीयवर्ष की निबन्धमाला का भी प्रकाशन आरम्भ हो गया है।

इस वर्ष सुलभ-साहित्य-माला में सूरदास की विनय-पत्रिका का सर्वथा नवीन संस्करण तैयार किया गया।

इस समय सम्मेलन की विक्रेय पुस्तकों की स्थिति इस प्रकार है:—

इस वर्ष के अन्त में कुल ६० प्रकार की ३०२१० पुस्तकें हाथ में थीं जिनका मूल्य १८,३६६॥≡) होता है।

हिन्दी के प्रसिद्ध लेखक पण्डित बनारसीदासजी चतुर्वेदी ने स्वर्गीय पं० सत्यनारायण कविरत्न की सचित्र जीवनी बड़े परिश्रम

से लिख कर तैयार की है। चतुर्वेदीजी ने उक्त जीवनी के प्रकाशन का स्वत्व सम्मेलन को दे दिया है। सम्मेलन उसे शीघ्र प्रकाशित करेगा। श्रीचतुर्वेदीजी हिन्दी के अन्य मुख्य-मुख्य कवियों और साहित्य-सेवियों की भी जीवनी लिखने का प्रयत्न कर रहे हैं। आप का प्रयत्न परम प्रशंसनीय है।

× × × × × ×

सम्मेलन की मुख पत्रिका का नाम "सम्मेलन-पत्रिका" है। यह पत्रिका प्रति मास प्रकाशित होती है। इस वर्ष के आरम्भ से पत्रिका की कलेवरवृद्धि भी हो गई है। अब यह ६ फ़ार्म अर्थात् ४८ पृष्ठों की निकलती है। यद्यपि पत्रिका के प्रकाशन का मुख्य अभिप्राय सम्मेलन-सम्बन्धी कार्यों और हिन्दी-संसार के समाचारों का प्रकाशन करना ही है, तथापि इसमें साहित्य-सम्बन्धी उत्तमोत्तम गम्भीर लेख और प्राचीन कविताएँ भी यथावकाश प्रकाशित होती हैं। हिन्दी-प्रेमियों को इसके प्रचार में सहायता देनी चाहिए।

× × × × × ×

हिन्दी भाषा और देवनागरी लिपि से सम्बन्ध रखनेवाली सम्बद्ध संस्थाओं की संख्या इस वर्ष के अन्त में ५३ थी। नीचे लिखी हुई संस्थाओं ने इस वर्ष अच्छा कार्य किया। शेष संस्थाओं को अपना काम बड़ी मुस्तैदी से करना चाहिए।

१—नागरी-प्रचारिणी सभा, बुलन्दशहर
२—मध्य-प्रान्तीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, जबलपुर
३—नागरी-प्रचारिणी सभा, आगरा
४—विहार प्रान्तीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, मुज़फ्फरपुर
५—पञ्जाब-प्रान्तीय-सम्मेलन, लाहौर
६—हिन्दी-साहित्य-विद्यालय, काशी
७—नागरी-प्रचारिणी सभा, गोरखपुर
८—हिन्दी-हितैषिणी सभा, जबलपुर
९—हिन्दी-साहित्य-सभा, बाँदा
१०—माथुर-चतुर्वेदी पुस्तकालय, मैनपुरी

११—शुद्ध-साहित्य-समिति, अल्मोड़ा
१२—नागरी-प्रचारिणी-सभा, मौरावां, उन्नाव
१३—हिन्दी-साहित्य-प्रचारिणी सभा, कन्नौज
१४—चैतन्य-हिन्दी-सभा, पटना
१५—हिन्दी-प्रचारिणी-सभा, बलिया
१६—भारतीय रात्रि-पाठशाला, फ़र्रुख़ाबाद

रिपोर्ट के देखने से पता लगता है कि बुलन्दशहर की सभा नागरी-प्रचार का उत्तम कार्य कर रही है। बारहवें वर्ष की रिपोर्ट (सं० ८० की) हमारे सामने है। सभासदों की संख्या ६४ है। प्रबन्धकारिणी समिति के ७ अधिवेशन हुए। सभा ने एक नया काम ज़ारी किया है। उसने अपने ज़िले के स्कूलों में पढ़नेवालों की संख्या मालूम करके यह पता लगाया है कि उनमें हिन्दी पढ़ने वाले कितने हैं। बुलन्दशहर ज़िले के स्कूलों में पढ़नेवालों की पूरी संख्या २३०८६ है। इनमें १६०१२ हिन्दी पढ़नेवाले हैं। ६६१ संस्कृत पढ़नेवाले भी मिला दिये जायँ तो यह संख्या १६६७३ हो जाती है।

सभा के उद्योग से इस वर्ष कचहरियों में ४०७१ पत्र हिन्दी में प्रविष्ट हुए। इससे पहले वर्ष में २१५६ हुए थे।

सभा के प्रयत्न से २३० और स्वतन्त्र रूप से ६, कुल २३६ दस्तावेज़ें हिन्दी में लिखी गईं।

सभा के अधीन एक पुस्तकालय भी है। पुस्तकों की संख्या १००० के लगभग है।

इस सभा के द्वारा जो नागरी-प्रचार का ऐसा अच्छा काम हो रहा है उसका सारा श्रेय सभा के उत्साही मंत्री पं० बाबूरामजी शर्मा और बा० मोहनलालजी वकील को है।

मध्य-प्रान्तीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन भी अच्छा काम कर रहा है। इसने गत वर्ष म्युनिसिपैलिटियों और ज़िला कौंसिलों में हिन्दी भाषा और देवनागरी लिपि के प्रचार का अच्छा उद्योग किया।

आगरे की नागरी-प्रचारणी-सभा के मंत्री श्रीयुक्त महेन्द्रजी का प्रयत्न भी प्रशंसनीय है। यहाँ पर प्रतिमास कवि-सम्मेलन होते रहे। इस सभा से परीक्षा के कार्य में हमें बड़ी सहायता मिलती है। परीक्षा की पाठ्य पुस्तकें अवैतनिक रूप से पढ़ाने के लिए पं० गणेशीलाल साहित्योपाध्याय विशेष धन्यवाद के पात्र हैं।

काशी के हिन्दी-साहित्य-विद्यालय ने गत वर्षों की तरह इस वर्ष भी सम्मेलन की परीक्षाओं में बहुत से परीक्षार्थी पढ़ा कर सम्मिलित किये। कार्य संतोषजनक है। लाला भगवानदीनजी का उद्योग प्रशंसनीय है।

विहार-प्रान्तीय सम्मेलन भी अच्छा काम कर रहा है। इसके मंत्री बा० रामधारीप्रसादजी उत्साह से कार्य करते हैं।

× × × × × ×

सम्मेलन का संग्रहालय अभी एक पुस्तकालय के रूप में है। इस पुस्तकालय में गतवर्ष २८६९ पुस्तकें थीं। इस वर्ष के अन्त में उनकी संख्या ३३५२ होगई। अर्थात् इस वर्ष ४८३ पुस्तकें संग्रहालय में नई आईं। कुछ मोल ली गईं और कुछ बिना मूल्य प्राप्त हुईं। इस वर्ष संग्रहालय के लिए जो हस्तलिखित पुस्तकें प्राप्त हुईं हैं उनके नाम ये हैं:—

१—काव्यसुधाकर
२—रासा भगवंतसिंह जीविका
३—प्रेमसागर, स्नेहसागर, गेंदलीला,
४—हितसिद्धान्त
५—तुलसीदासजी की विनय-पत्रिका
६—किरातार्जुनीय ( श्रद्धेय पण्डित महावीरप्रसादजी द्विवेदी के हाथ का लिखा हुआ और उन्हीं का प्रदत्त )

वैरिया ( बलिया ) निवासी बाबू शिवप्रसादसिंह ने संग्रहालय के लिए निम्नलिखित महत्त्वपूर्ण पुस्तकें प्रदान कीं। तदर्थ आपको अनेक धन्यवाद !

१—बिहारी सतसई ( मूल ) सं० १८८० की छपी [ दाता श्रीरामबालक तिवारी, श्रीनगर ]
२—ध्यानमंजरी ( सं० १२३७ साल की* लिखी )
३—छप्पय रामायण (अपूर्ण)
४—श्रीरामरक्षा ( अपूर्ण )

इनके अतिरिक्त जिन प्रकाशकों और लेखकों ने संग्रहालय के लिए मुद्रित पुस्तकें प्रदान की हैं उनकी प्राप्ति-सूचना सम्मेलन-पत्रिका में छप चुकी है और कुछ छपने को शेष है। प्रेषक महाशयों को अनेक धन्यवाद !

संग्रहालय-भवन की नीव रखने का प्रबन्ध किया जा रहा है। आशा है, शीघ्र ही संग्रहालय-भवन के बनवाने का कार्य आरम्भ हो जायगा।

× × × × × ×

इस वर्ष सम्मेलन की ओर से पण्डित प्रभुदयाल शर्मा उपदेशक नियत किये गये और उन्होंने संयुक्त प्रान्त के अनेक ज़िलों में भ्रमण किया। पंजाब-प्रान्तीय सम्मेलन के बुलाने पर उपदेशक जी कोई डेढ़ महीने के लिए वहाँ भी गये। धनसंग्रह कराने और सम्मेलन के लिए प्रतिनिधि बनवाने का कार्य किया। अब चार महीने से देहरादून सम्मेलन की ओर से आस पास के ज़िलों में भ्रमण कर रहे हैं। यहाँ पर भी धनसंग्रह करने और सम्मेलन के प्रतिनिधि बनने की प्रेरणा करने का कार्य खूब किया गया है।

इनके प्रयत्न से पत्रिका के १५ ग्राहक बने और ३२५ पुस्तकें संग्रहालय के लिए प्राप्त हुईं। कानपुर और आगरे से प्रतिज्ञात ५०२) प्राप्त हुए और कितने ही परीक्षार्थियों को परीक्षामें सम्मिलित होने की इन्होंने प्रेरणा की। उपदेशकजी जहाँ-जहाँ गये, वहाँ वहाँ सम्मेलन का अच्छा प्रचार हुआ।

*यह संवत्र अशुद्ध है। इस पुस्तक के रचयिता स्वामी अग्रदासजी सोलहवीं शताब्दि में हुए हैं। —सम्पादक

× × × × × +

नियमानुसार सम्मेलन के सदस्य दो प्रकार के होते हैं। स्थायी सदस्य, और साधारण सदस्य। स्थायी सदस्य वे होते हैं जो सम्मेलन के स्थायी कोश के लिए २५०) देते हैं और साधारण सदस्य वे कहे जाते हैं जो १२) प्रति वर्ष देते हैं। दोनों प्रकार के सदस्यों की संख्या इस वर्ष के अन्त में ४४ थी। इस वर्ष केवल ३ सदस्य बढ़े।

× × × × × ×

आपको यह तो समाचार-पत्रों द्वारा विदित ही हो चुका होगा कि इस वर्ष सम्मेलन ने हिन्दी-विद्यापीठ के लिए प्रयाग में यमुना के दक्षिणी तट पर सिसैंडी के राजा साहब की कोठी और उनकी सारी भूमि, ४० वर्ष के पट्टे पर, ले ली है। एक प्रकार से हिन्दी-विद्यापीठ का प्रारम्भ वहाँ हो गया है। उसकी पूरी योजना, नियमावली और पाठन-पद्धति बननेवाली है। यह स्थान इस काम के लिए सर्वथा उपयुक्त है। यदि आप अपने देश में देशी भाषा के द्वारा सब विषयों की शिक्षा का द्वार उन्मुक्त करना चाहते हैं, यदि आप अपने देश में नवयुवकों को पुस्तकी विद्या के साथ साथ कला-कौशल की भी आवश्यक शिक्षा देकर उनको स्वावलम्बी विद्वान् बनाना चाहते हैं तो इस काम के लिए सम्मेलन को जी खोल कर सहायता दीजिए।

× × × × × ×

यद्यपि हिन्दी की पुस्तकों और पत्र-पत्रिकाओं की प्रकाशन-गति में उत्तरोत्तर उन्नति हो रही है, तथापि हिन्दी में अभी तक अनुवाद-ग्रन्थों के ही प्रकाशन की ओर विशेषतया झुकाव है। कितने ही विषय अभी अछूते पड़े हैं, जिनकी ओर विद्वान् लेखकों ने दृष्टिपात भी नहीं किया। हमारे कितने ही विद्वानों को यह शिकायत रहती है कि उनको ग्रन्थ-प्रणयन के लिए अवकाश ही नहीं मिलता। ऐसे कितने ही उत्कृष्ट विद्वान् हैं जो चाहें तो हिन्दी में मौलिक ग्रन्थ लिखकर साहित्य की श्रीवृद्धि कर सकते हैं। परन्तु

उनको अवकाश का अभाव है। यहाँ भारत के और भी विद्वान् भारत की राष्ट्रभाषा के साहित्य की शोभावृद्धि में अपना समय देने लगें तो फिर हिन्दी साहित्य की पूर्ति में देर न लगे।

× × × × × ×

हिन्दी में सत्समालोचन का अभाव बेतरह खटकता है। पुस्तकों और पत्रों का प्रकाशन तो बढ़ रहा है, परन्तु उनको समालोचना की कसौटी पर कसने का काम हिन्दी में अभी नहीं होता। हिन्दी में इस बात की बड़ी आवश्यकता है कि पुस्तकों और पत्रों की गुण दोष-विवेचनापूर्वक ऐसी आलोचना की जाय जिससे सर्वसाधारण को उनके गुण और दोष दोनों विदित हो जायँ। आलोचना में पक्षपात का गन्ध न हो, व्यक्तिगत आक्षेपों का लेश न हो। जबतक हिन्दी में उत्तम समालोचना का क्रम ज़ारी न होगा तब तक सत्साहित्य का यथेष्ट प्रचार और असत्साहित्य का अवरोध न होगा। साहित्य के संशोधन और उसकी वृद्धि के लिए समालोचना की अत्यन्त आवश्यकता है। यदि हिन्दी के निर्भीक विद्वान् साहित्य के इस आवश्यक अंश की ओर ध्यान देने की कृपा करने लगें तो बड़ा काम हो।

× × × × × ×

सम्मेलन के गतवर्ष के आय-व्यय के चिट्ठे को देखने और बजट के अनुशीलन से आपको यह अच्छी तरह ज्ञात हो जायगा कि सम्मेलन का व्यय तो निश्चित है, किन्तु आय का कोई निश्चित आधार नहीं है। तिस पर भी कई वर्ष से सम्मेलन के अधिवेशन धनागम की दृष्टि से कोरे ही रहे हैं। ऐसी दशा में, सम्मेलन के निश्चित और प्रारम्भ किये हुए कार्यों के लिए ही पर्याप्त धन की आवश्यकता है। यदि संग्रहालय, अन्य प्रान्तों में हिन्दी-प्रचार, और हिन्दी विद्यापीठ के व्यय का विचार किया जाय तो कई लाख रुपये तुरन्त चाहिए। इतने बड़े व्यय का भार आप सभी सज्जनों के ऊपर है। यदि आप इस आवश्यक आर्थिक समस्या की पूर्ति करने का शीघ्र कोई प्रबन्ध नहीं करेंगे तो हिन्दी के प्रचार और साहित्य

की श्रीवृद्धि के विचार का स्वप्न देखना निष्फल है। परन्तु मैं आशावादी हूँ। मुझे आशा ही नहीं, दृढ़ विश्वास है, कि आप यथाशक्ति आर्थिक सहायता स्वयं देंगे और अपने दूसरे हिन्दी-प्रेमी मित्रों से दिलाकर सम्मेलन की यथेष्ट सहायता करेंगे। ऐसा कौन भारतवासी होगा जो माता के समान पूजनीया मातृभाषा और राष्ट्रभाषा की पूजा के लिए श्रद्धापूर्वक यथाशक्ति पुष्पाञ्जलि समर्पित न करे?

आर्थिक सहायता के अतिरिक्त सम्मेलन को ऐसे त्यागी साहित्य-सेवियों और हिन्दी-प्रेमियों की भी आवश्यकता है जो अपना समय देकर सम्मेलन के कार्यों में पूरा योग दे सकें। जिस भाषा के बोलनेवालों की संख्या १५—२० करोड़ हो, उसकी सेवा के लिए क्या देश भर में दस-बीस कर्मवीर भी ऐसे नहीं मिल सकते जो अपना जीवन राष्ट्रभाषा के पवित्र चरणों में समर्पित कर दें? देखें, हिन्दी-संसार इसका क्या उत्तर देता है?

---

इसके उपरान्त श्रीयुत पंडित दिनकर शर्मा ने उन सज्जनों के, जो सम्मेलन में सम्मिलित नहीं हो सके, सहानुभूति-सूचक तार और पत्र पढ़े। महात्मा गांधी का, उन्हीं के हाथ से पेंसिल से लिखा हुआ, यह पत्र पढ़ा गया—

"आपके तार आये। भाई मनजीतसिंह ने भी खूब समझाया। परन्तु मुझको समझाने की आवश्यकता ही क्या है? हिन्दी भाषा के लिए मेरा प्रेम भारतवर्ष के सब हिन्दी-प्रेमी जानते हैं। मेरा आना असम्भाविक है, मेरे नज़दीक इतना काम पड़ा हुआ है जिससे मैं पहुँच नहीं सकता हूं। इसीलिये मुझको क्षमा कीजिए। मैं इन कामों से निकलना चाहता हूं।

आपका

मोहनदास गाँधी"

महात्माजी ने नीचे लिखे आशय का एक तार भी भेजा था "मुझसे आग्रह करने की जरूरत नहीं है। अगर मैं आ सकता तो खुशी से आता, परन्तु आना असम्भव है। सफलता चाहता हूं।"

महामना श्रीमान् पंडित मदनमोहन मालवीय का, रेलयात्रा में पैंसिल से लिखा हुआ, पत्र सुनाया गया। उसमें मालवीयजी ने अनेक झंझटों में फंसे रहने के कारण सम्मेलन में न आ सकने पर खेद प्रकट किया था और सम्मेलन की सफलता मनायी थी।

श्रीयुत बा० राजेन्द्रप्रसादजी, श्री बा० सम्पूर्णानन्दजी, श्रीबा० श्यामसुन्दरदासजी, श्री रामदासजी गौड़, श्री पंडित अम्बिकाप्रसादजी बाजपेयी, श्री पंडित लक्ष्मणनारायणजी गर्दे, श्री केदारनाथजी गोयनका, श्री सेठ गोकुलचन्दजी आदि सज्जनों के संदेश पढ़े गये।

श्री रामदासजी गौड़ आदि कुछ हिंदी-हितैषियों के तार रोमन-लिपि और हिंदी भाषा में आये थे। राष्ट्रभाषा हिन्दी के लिये यह शुभ सूचना है।

तदनंतर तपस्विनी पार्वती देवी का हृदयग्राही भाषण हुआ, जिसका सार नीचे दिया जाता है—

"पूज्य सभापतिजी तथा भाइयो और बहिनो !

मुझे आश्चर्य्य होता है कि इतने हिन्दी के विद्वानों के होते हुए मेरे-जैसे तुच्छ जीव को इस मंच पर खड़े होकर व्याख्यान देने की आज्ञा होती है, जो कि एक ऐसी भूमि का है, जहां हिन्दी का नाम नहीं, जिस जाति को आपने अछूत समझा है, बल्कि यों कहिये कि जिसे आपने जूती के तलों के समान समझ रखा है। किन्तु दो मिनट में कुछ शब्दों में अपने मनोगत भावों को प्रकट करूंगी। आशा है, आप ध्यानपूर्वक सुनेंगे।

यद्यपि १४ वर्ष से हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन बहुत कुछ कार्य्य करता आ रहा है, पर आज आवश्यकता उस महत्कार्य्य करने की है, जिससे हिन्दी राष्ट्र-भाषा बन सके। एक राजनीतिक वक्ता लम्बी-चौड़ी स्पीच का धुआंधार वायुमंडल बाँध कर उतनी देश-सेवा नहीं कर सकता जितना कि एक साहित्य-सेवी। राजनीतिक आंदोलन में साहित्य की प्रेरणा न होने से ही असफलता होती है। साहित्य एक अमोघ अस्त्र है, संजीवनी बूटी है, राष्ट्रीय जीवन में एक निराली शक्ति पैदा

करनेवाला यन्त्र है। साहित्य को उच्च अवस्था पर लाना ही हमारा परम कर्तव्य है। राजनीतिक बातों में फंसने पर भी साहित्य की सेवा करना मैं अपना धर्म्म समझती आई हूँ। साहित्य की सीढ़ी से होकर जो प्रांत उन्नति के शिखर पर पहुँचने की कोशिश कर रहे हैं वे ही श्रेष्ठ हैं। उन्नति सबसे पहिले भारतवासियों में जाग्रत हुई। इसका कारण उनका प्राचीन साहित्य ही था। बंगाल में पश्चिमी सभ्यता का प्रादुर्भाव होने पर बंकिम बाबू ने जो अविरत प्रयास साहित्य के सहारे किया वह अवलम्बनीय है। बंग साहित्य के द्वारा रामायण का उद्धरण, शिक्षा की आलोचना, प्राचीन भारत का गौरव, पति-भक्ति, पत्नि-भक्ति, मातृ-पितृ-भक्ति आदि उच्च आदर्श का प्रचार करने का अधिक श्रेय उन्हीं को प्राप्त है। आज तक उनका 'बन्दे मातरम्' गायन मृतप्राय आत्माओं में भी नव-जीवन का सञ्चार कर रहा है। हिन्दी जिस समय उच्चता को प्राप्त थी उस समय भारत का भाल भी उच्च था। हमारी हिन्दी केवल गंगा ही के अन्दर विहार करनेवाली न होनी चाहिये, बल्कि काबुल-कन्धार तक पहुंचनी चाहिये।

मेरा विशेषतः स्त्रियों से भी निवेदन है कि वे इस ओर ध्यान दें। मातृभूमि की आवाज़ जब स्त्रियां सुनती हैं तब उच्चता को प्राप्त होती हैं। फ्रांस की एक समय की अवस्था यही थी कि जो आज साहित्य की दृष्टि से इस देश की है। जर्मनी के विस्मार्क ने फ्रांस की सभ्यता को नाश करने के लिये ही वहां की पाठशालाओं की शिक्षा का माध्यम जर्मन-साहित्य रखा। आज भारत की प्रत्येक बालिका को अपने हृत्पट् पर जर्मन-विजित फ्रांस की उस बालिका के शब्द अंकित कर लेने चाहिये, जो उसने महारानी से, उससे कुछ मांगने के लिये कहने के उत्तर में, कहे थेः—'यदि आप मुझे कुछ देना चाहती हैं तो वह यह कि आप इस पाठशाला की शिक्षा का माध्यम हमारी मातृ-भाषा में कर दें।' इस आठ दश वर्षीया कन्या के समान आज भारत की प्रत्येक पुत्री का होना आवश्यक है। उनके हृदय में भी मातृ-भाषा के प्रति इतना ही प्रेम

चाहिये। जो लोग चाहें कि हमें शीघ्र स्वतन्त्रता प्राप्त हो उनके लिये यही साधन सबसे सरल है कि वे तन, मन, धन से हिन्द की और हिन्दी भाषा की सेवा करें। एक 'आनन्द मठ' ने देश के अन्दर जितनी जागृति पैदा की बहुत से नेता थक जाने पर भी उतनी जागृति पैदा नहीं कर सकते। प्रत्येक देश के अन्दर उस देश के साहित्य का प्रचार होना चाहिये।

हमारा अपनी स्त्रियों के साथ दिमाग़ी सम्बन्ध बिलकुल जोड़ नहीं रखता। पति अँग्रेजी शिक्षित है तो पत्नी हिन्दी-शिक्षिता। पति-पत्नी की एक भाषा होनी चाहिये। राजनीतक आन्दोलन के समय में दूर देश के हाल से स्त्रियों को (अशिक्षित होने के कारण) वञ्चित रहना पड़ता है। लड़कों के लिये यदि गुरुकुल पाठशाला खोले भी तो कन्याओं के लिये नहीं। यही कारण है कि हिन्दी उतना पांव नहीं फैला सकती। हिन्दी के प्रचारार्थ पुत्रियों की ओर भी देश की दृष्टि पड़नी चाहिये। इसके लिये पाठशालाओं की व्यवस्था अति शीघ्र होनी चाहिये।

हिन्दी को जाग्रत करने के लिये प्रयत्न यहाँ तक हो कि हरेक हिन्दू-मात्र के हाथ में हिन्दी-रामायण की पुस्तक हो।"

कविवर पंडित माधव शुक्लजी ने 'किस ओर गिर रहे हो, किस धुन में जा रहे हो'—आदि भजन गाया। तदनंतर महा महोपाध्याय श्रीमान् पंडित गिरिधर शर्मा ने हिंदी भाषा के संबंध में बड़ी विद्वत्तापूर्ण वक्तृता दी, जो संक्षिप्त रूप में नीचे दी जाती है—

"उपस्थित माननीय सज्जनवृन्द! यद्यपि यह कार्य्य सरल नहीं और कठिनता प्राप्त होनेवाला है, परन्तु मुझे आज्ञा हुई है कि मैं इस पर अपने विचार उपस्थित करूँ। उन्हीं विचारों के उपस्थित करने के लिए मैं खड़ा हुआ हूँ। हिन्दी भाषा की उन्नति के बिना हमारी उन्नति असम्भव है। किसी अन्य भाषा द्वारा हमारे विचारों की आवश्यकता पूर्ण नहीं हो सकती। देश तथा जाति का उपकार उसके बालक तभी कर सकते हैं, जब उन्हें उनकी भाषा द्वारा शिक्षा मिली हो। विचारों का परिपक्व और उन्नति होना भी उसी समय

संभव होता है, जब शिक्षा का माध्यम प्रकृतिसिद्ध मातृभाषा हो। वह स्वाभाविक तथा सच्चे सोने के समान होती है, उसकी चमक मुलम्मे की तरह झूठी नहीं होती। अपने देश की भाषा ही अपने लिए स्वाभाविक होती है। हमारी हिन्दी भाषा को हमारे लिए किसने बनाया? प्रकृति ने। हमारे लिए हिंदी प्रकृतिसिद्ध है। प्रकृति में परिवर्तन क्षण-क्षण हो रहा है, इसमें आश्चर्य की बात नहीं। भाषा में भी कालान्तर में परिवर्तन हुआ। समय ऐसा आया कि संस्कृत पढ़ाने की आवश्यकता होने लगी। इस समय की भाषाएँ संस्कृत व प्राकृत के नाम से विख्यात हैं; प्राकृतसे बहुत से लोग वेदों की भाषा का ग्रहण करते हैं, लेकिन यह उनकी भूल है। प्राकृत से तो केवल यह तात्पर्य्य है कि जो माता के दूध के साथ मिली हो। मुझे बताना सिर्फ़ इतना है कि हिन्दी भाषा हमें प्रकृति से दी हुई प्राप्त हुई है। प्रकृति ने अरबी अरबवालों को, फारसी फारिस-निवासियों को तथा इंगलिश इंग्लैण्डवासियों को दी है। अब यदि हम उनकी भाषा सीखें तो भूल होगी, सच्चा परिणाम नहीं निकलेगा, क्योंकि बनावटी चीज़ में तो बल होता ही नहीं है। जब हम अपनी भाषा को छोड़ दूसरों की भाषा का ग्रहण करते हैं तो हमारी शक्तियाँ क्षीण हो जाती हैं। हम बल को गंवा देते हैं। परिणाम यह होता है कि साइंस की शिक्षा तो हमें मिलती है, परन्तु साइंस का यथार्थ तत्व किसने समझा है? यह उसीका फल है कि जहाँ पाश्चात्य लोग विज्ञान की शिक्षा प्राप्त करके संसार को चकित कर रहे हैं, वहाँ हमें एक भी नया अन्वेषण नहीं सूझता। बुद्धि का अधिकार तो सबको परमात्मा का दिया हुआ है ही, पर साधन उलटे पकड़ लेने से हमें बनावटी चीज़ ही मिला है! उस भाषा के सीखने हो में हमारी ताक़त ख़र्च हो जाती है। असली लाभ उठानेवाले वेही हो सकते है, जो अपनी भाषा को अपनाते हैं। प्रकृति ने भाषा व भाव का अटल संबन्ध निर्माण किया है। जब हृदय में, मन में, अपनी भाषा में सोचते हैं, तो कहने के लिए भी अपनी ही भाषा होनी चाहिए। मन-वचन में

साम्य होना ही परम तप तथा धर्मात्मा होने की पहचान है। जो मन में वही बाहर। यदि बलपूर्वक हम दूसरे की वाणी में बोले तो स्वतन्त्रता कहां रही ? आप हिन्दुत्व को स्थिर रखना चाहते हैं तो हिन्दी में बोलिये, हिन्दी में सोचिये, हिन्दी में पढ़िये और हिन्दी में ग्रन्थ लिखिये। अंग्रेज़ और फ्रेञ्च आपको एक भी नहीं मिलेंगे जो अङ्गेजी फ्रेञ्च न जानते हो, किन्तु हिन्दुस्तान में ऐसे हिन्दुस्तानियोंकी भी संख्या कम नहीं है जो हिन्दी नहीं जानते ! इसलिये आप हिन्दी भाषा को अपना कर अपने उद्धार का मार्ग प्रशस्त कीजिये। सम्मेलन हिन्दी प्रचार का द्वार है। सम्पूर्ण भारत की भाषा यदि कोई हो सकती है तो वह हिन्दी ही है, यह देश के सब नेताओं ने निर्णय कर दिया है। अतएव अपने बालकों को हिन्दी की शिक्षा दिलवाइये। आशा है आप, हिन्दी के प्रचार में सहायक बनकर पुण्य के भागी बनेंगे।"

इस बीच में राज्य-च्युत नाभानरेश मालवेन्द्र श्रीमान् रिपुदमन सिंहजी अपने परिषदों-सहित-सम्मेलन में पधारे। सभापति महोदय ने उठकर नाभा महाराज के शुभागमन पर समस्त सम्मेलन की ओर से आनंद प्रकट किया। लोगों ने बड़े हीं प्रेम से महाराजा साहब का स्वागत किया। शर्माजी का व्याख्यान समाप्त होने पर सभापति ने श्रीयुत पुरुषोत्तम दासजी टंडन से सम्मेलन की ओर से श्रीमान् महाराजा साहब को धन्यवाद देने का अनुरोध किया। टंडनजी उठे। उस समय लोग देशभक्त महाराज की ओर टकटकी लगाये थे। उनके प्रति सहानुभूति से लोगों की आँखों में आंसू छलछला आये थे। टंडनजी ने गंभीर भाव से श्रीमान् का स्वागत करते हुए कहा—

"श्रीमान्-नाभानरेश मालवेन्द्र महाराज रिपुदमन सिंहजी—

इस सम्मेलन के सभापति की आज्ञा से मैं सम्मेलन में पधारने के लिए, समस्त हिन्दी-भाषी जनता की ओरसे, श्रीमान् का स्वागत करता हूं। यह कार्य, जो मुझे सौंपा गया है, एक दृष्टिसे तो आसान था, पर इस समय कठिन हो गया है। मैं कई वर्षों के बाद श्रीमान्

को इस स्थान पर देख रहा हूं। आपके एक पुराने सेवक के नाते इस समय मेरे हृदय में जो भाव उठ रहे हैं, उनको प्रकट करना मेरे लिये असम्भव है। श्रीमान् का हिन्दीभाषा तथा देश से जो प्रेम है, उसको जितना मैं जानता हूँ, इस मंडप में कदाचित् ही कोई जानता होगा। श्रीमान् की सेवा में रहते हुए देश की अवस्था के सम्बन्ध में और हिन्दी भाषा के विषय में समय-समय पर जो वर्तालाप हुआ था, उस को जब मैं स्मरण करता हूं, तब मेरा हृदय भर आता है। मुझे उस समय की बात याद आती है, जब मैं आपकी सेवा में था; और प्रयाग के छठे सम्मेलन के लिए रवाना हो रहा था। उस अवसर पर श्रीमान् ने समस्त हिन्दी-प्रेमियों को मेरे द्वारा अपना शुभ सन्देशा भेजा था—वह संदेश सम्मेलन के कार्य-विवरण में अंकित है। श्रीमान् का हिन्दी-प्रेम बहुत पुराना है। मैंने आपके श्रीमुख से ही सुना है कि बचपन से ही श्रीमान् के पूज्य पिताजी ने आपको हिन्दी की शिक्षा दी थी। जिन प्रातःस्मरणीय गुरुओं की आप और समस्त सिख जाति उपासना करती है, उन्होंने हिन्दी में ही उपदेश दिये हैं। बड़ी ओजस्विनी भाषा में उन्होंने अपने भाव दरसाये हैं। मुझे इस समय गुरु गोविंदसिंहजी का एक कथन याद आ रहा है—

देहु शिवा बर मोहिं यहै, शुभ कर्मन तें कबहूं न टरौं।
न डरौं अरि सों जब जाय लरौं, तब निश्चय आपनि जीत करौं॥
आर जँजार जिते गृह के चित नेकहु तामें कबौं न धरौं।
आयु की औधि निदान बने, अति ही रन में तब जूझि मरौं॥

पूज्य गुरुओं की जिस वाणी में यह शक्ति है, वह सारे राष्ट्र की सम्पत्ति है। श्रीमान् इस सम्पत्ति के रखवारे हैं; हम सब हिन्दी साहित्य-सेवी भी उसके रखवारे हैं, इसी नाते से मैं हिन्दी जनता की ओर से श्रीमान् का स्वागत करता हूँ।"*

श्रीमान् महाराजा साहब बड़ी देर तक सम्मेलन की शोभा बढ़ाते रहे। आप ने बड़े ही प्रेम से वक्तृताएँ सुनीं।

* श्रीयुत पंडित लक्ष्मीधर जी वाजपेयी की कृपा से प्राप्त।

तत्पश्चात् स्वागताध्यक्ष ने श्रीमान् सेठ जमनालालजी बजाज का वह तार पढ़ा, जिसमें जयपुर राज्य में हिन्दी-प्रचार-कार्य में सफलता की संभावना-सम्बन्धी शुभ सूचना थी और इस बात की आशा दिलायी गयी थी कि वहां हिन्दी राजभाषा मानी जायगी।

तदुपरान्त पंजाब-निवासिनी अनेक हिन्दी-ग्रन्थों की रचयित्री श्रीमती हेमंतकुमारी चौधरानी ने हिन्दी-प्रचार की आवश्यकता और महत्व को बताया। आपने इसके लिए उपस्थित महिलाओं से अपील भी की।

पहले दिन की कार्यवाही यहीं समाप्त हुई। इसके बाद विषय-निर्द्धारिणी समिति की बैठक हुई।

---

रात को श्रीयुक्त जयचन्द्र विद्यालंकार की प्रेरणा से लाहोर के राष्ट्रीय कालेज के छात्रों द्वारा "कवि दरबार" दिखाया गया। कवि-दरबार का विवरण, संक्षेप में, नीचे दिया जाता है—

## कवि-दरबार का दृश्य

( राज-सिंहासन के सामने मंत्री और पांच कवि बैठे हैं। )

(राजा का प्रवेश; अभिवादनानन्तर राजा का अभिभाषण)

सहृदय सभ्य समाज! आज हम आप सब सज्जनों का सहर्ष अभिनन्दन करते हैं। आज अपने को आप के बीच पाकर हमारे हृदय में जो अपार प्रसन्नता हुई है, उसे प्रकट करने में जिह्वा असमर्थ है। देवलोक की सुख-सामग्री-पूर्ण परिस्थिति में, मन्दार और पारिजात की सुगन्ध से आमोदित अप्सराओं के राग से प्रतिध्वनित, कल्पवृक्ष की छाया में सुरभित वायु के मन्द मन्द झोंकों में भी मातृभूमि की स्मृति हमारे हृदय को किस प्रकार अकुलाया करती थी, इस बात की कल्पना कवि के लिये भी कठिन है। सभ्यगण! इस हिमालय की हिमधवल-उत्तुंग शृंगों, बिन्ध्याचल के उपवनों से परिवेष्टित बुन्देलखण्ड के रम्य सरोवरों, वसन्तऋतु में पंचनद के धनधान्य पूरित सुनहले खेतों और गंगा और नर्मदा की

शुभ्र स्फटिक-धाराओं की छटा की स्मृति एक अतृप्त अभितृष्णा के समान सदैव हमारे हृदय को अकुलाया करती थी। देवलोक-निवासियों के शांत और निश्चिन्त हृदयों को भी यदि कोई तृष्णा व्यथित किया करती है, तो वह यह कि इस पुण्यभूमि भारत में उन्हें किस प्रकार से जन्म प्राप्त हो। देवताओं की क्या बात, स्वयं भगवान् भी इस देवस्पर्द्धित भारतभूमि पर जन्म धारण करने की लालसा का संवरण नहीं कर सके। इसीलिये वे बारंबार "विनाशाय च दुष्कृतां" के मिससे इस भूमि पर जन्म धारण करते हैं। तो फिर हम मनुष्यों का तो कहना ही क्या, जिन्हें इस पुण्यभूमि को अपना कहने का अधिकार प्राप्त है।

सज्जनो! यह प्यारा भारत आज पहचाना भी नहीं जाता। आज वह प्रजा कहां? वह राजा कहां? वह आन पर जान देनेवाले क्षत्रियवीर कहां? नहीं, आज यह भारत वह भारत रह ही नहीं गया। शरणागतों और अबलाओं की पुकार सुनकर जान पर खेल जानेवाले वीरों के वंशज आज परायों के शरणागत बनने में, परायों के 'प्रोटेक्टरेट' बनने में नहीं लजाते, और तिस पर भी अपने आप को राजा समझते हैं! हमें तो आज इन राजकुलों में जन्म लेते भी लज्जा आती है। अपने राज्य-काल में हम एक-एक पदके लिये एक-एक लक्ष मुद्रा दान किया करते थे, परन्तु आज वह अवस्था नहीं है। कविगण! हमें आशा है, आप हमारे हृदयंगत भावों को ग्रहण करेंगे। क्या कहीं कविता की क़ीमत स्वर्ण से तोली जा सकती है? रसिकवृन्द! उस समय कविता विनोद के लिये होती थी, आज मृतप्राय जाति में जीवन का संचार करने के लिये इसकी आवश्यकता है। हमें पूर्ण आशा है कि आज इस सभा में एकत्रित कविगण वह संजीवनी तान छेड़ेंगे, जो इस मरती जाति में एक बार फिर नये सिरे से जीवन का संचार कर देगी। मंत्रिगण! हमने आप से राष्ट्रभाषा के समस्त कवियों को एकत्र करने के लिये कहा था, इस विषय में आपने क्या किया है?

मन्त्री—महाराज, हमने आपकी आज्ञा पाते ही कुमाऊं से

कुमारी तक और अटक से कटक तक, भारतवर्ष भर के, सब हिंदी-कवियों के पास निमन्त्रण भेज दिये थे। देश इस समय अनेक आपत्तियों से पीड़ित है। कहीं प्रलयकारी बाढ़ है, तो कहीं पकड़-धकड़ है। इसी कारण से बहुत से कवि नहीं पधार सके। जो आये हैं वे भी ज़रा देर में पहुँचे हैं। ये पांच सज्जन आपकी सेवा में उपस्थित हैं। और लोग भी अतिथिशाला में पहुँच चुके हैं, निवृत्त होकर आते ही होंगे।

राजा—( कवियों की ओर देख कर ) आप ही पांच सज्जन पधारे हैं? आपका परिचय तो दीजिये।

( मन्त्री कवियों का परिचय देते हैं )

मन्त्री—महाराज ( पहले की ओर इशारा करके ) आप आज़मगढ़-निवासी विद्यावयोवृद्ध पंडित अयोध्यासिंह उपाध्याय हैं। आप हिन्दी के प्रसिद्ध महाकवि हैं। उत्प्रेक्षा में आप श्रीहर्ष कवि की बराबरी करते हैं।

( दूसरे कवि की ओर ) आप इसी देहरादून के निवासी पंडित बुद्धदेव विद्यालंकार हैं। आपका जीवन हिमालय और गंगातट के रम्यस्थलों में बीता है। आप 'मराल' कवि भी कहलाते हैं।

( तीसरे कवि की ओर ) आप हिन्दी के तरुण भावुक कवि कूर्मांचल-कुंजविहारी पंडित सुमित्रानन्दन पन्त हैं।

( चौथे कवि की ओर ) आपके संमुख चौथे सज्जन जो बैठे हैं, ये हिन्दी के युगप्रवर्तक कवि पंडित सूर्यकांत त्रिपाठी "निराला" हैं। आपने हिन्दी में बेतुकी कविता का निराला ही ढंग चलाया है!

( पांचवें कवि की ओर ) आप छत्तीसगढ़-निवासी श्री पंडित मुकुटधर पांडेय हिन्दी के बड़े ही मार्मिक कवि हैं। आप बड़े लज्जाशील हैं, कभी सभा-समाजों में सम्मिलित नहीं होते। हमने बड़े प्रयत्न और आग्रह से आपको यहां बुलाया है।

राजा—कहिये कविगण, आप लोग कुशल तो हैं? कविता फलती-फूलती है न?

अयोध्यासिंह—राजन् ! पराधीनता तुषार के कारण 'कविता कमलिनी फूलने नहीं पाती। पर प्राचीन संस्कारों के प्रभाव से कोई कोई कली कभी खिल उठती है।

राजा—उपाध्यायजी, आपका नाम भगवान् श्रीरामचन्द्र की राजधानी के मंगलमूल नाम से आरम्भ होता है। आपही इस पवित्र यज्ञ के पुरोहित होकर इसे प्रारम्भ कीजिये।

( उपाध्यायजी 'दुखिया के आंसू' शीर्षक चौपदे पढ़ते हैं।)

राजा—[ राज-पंडित की ओर इशारा कर ] कहिये चतुर्वेदी जी! ये आंसू कैसे रहे ?

राजपंडित—आंसू तो बहुत दर्द-भरे हैं, पर हम तो आपकी उत्प्रेक्षा सुनने को लालायित हैं।

राजा—अच्छा, उपाध्यायजी, इन्हीं आंसुओं पर कुछ उत्प्रेक्षा की जाय।

अयो०—सुनिये महाराज।

("आंख का आंसू ढलकता देखकर" आदि चौपदे पढ़ते हैं।)

राजा—क्यों चौबेजी! उपाध्यायजी श्रीहर्ष कवि का मुक़ाबला करते हैं कि नहीं ?

रा० पं०—राजन्, चार-पांच उत्प्रेक्षाओं से क्या कोई हर्ष बन सकता है ? हर्ष तो वे महाकवि हैं, जिनके काव्य के लिये कहा है—'उदिते नैषधे काव्ये क्व माघः क्व भारविः।' आप भी अपने महाकाव्य में से कुछ सुनायें, तब कहें।

मन्त्री—उपाध्यायजी, कुछ 'प्रिय-प्रवास' में से कहिये।

अयो०—सुनिये राजन्, विरहिणी राधा की वायु के प्रति उक्ति सुनिये—

("प्यारी प्रातः पवन" आदि पद्य प्रियप्रवास से पढ़ते हैं।)

राजा—कैसी कविता रही चतुर्वेदीजी ?

रा० पं०—राजन्, इनका काव्य निन्दनीय तो नहीं है।

राजा—(बुद्धदेवजी के प्रति) अच्छा महाराजजी, आप अपने मानसरोवर से क्या सन्देश लाये हैं ?

बुद्धदेव—हिमालय के चरणों में जान्हवीकी नीलधारा के पवित्र तट पर जिस गुरुकुल-भूमि में हमने अपना शैशव बिताया है वह कवि-राजहंसों के विहार के लिये, वास्तव में, मानसरोवर ही हैं। वहीं के कुछ संगीत श्रीमान् को सुनाता हूँ।

("नटनागर" कविता पढ़ते हैं।) और यह लीजिये, एक सितार का रोना है। ("सितार" वाली कविता पढ़ते हैं) कलकत्ते के क़ब्रस्तान का दृश्य देखिये। ("एकान्त है.........अब दीवाने का गुनगुनाना" आदि कविता सुनाते हैं।)

राजा—बहुत अच्छा कहा मरालजी! वास्तव में, आपने मानसरोवर का सन्देश सुनाया है। पन्तजी! (सुमित्रानंदन पन्तजी से) अब आप अपने कूर्माचल की रागिनी अलापिए।

पन्त—सुनिये महाराज! ("कहो हे प्रमुदित विहग-कुमारि।" इत्यादि कविता सुनाते हैं।)

राजा—[ रा० पं० से ]—चतुर्वेदीजी, कविताएं तो सभी सरस हैं। अब आगे किसकी बारी है?

रा० पं०—अब निरालाजी की निराली तान छिड़ेगी।

निराला—राजन्, हम पहले अपनी अनामिका में से जूही की एक कलीका कुछ वृत्तांत कहते हैं। ("जूही की कली" शीर्षक कविता पढ़ते हैं।)

रा०—यह तो अद्भुत कृति है। चौबेजी! आप की इसपर क्या सम्मति है?

रा० पं०—राजन्, सम्मति क्या बतावें! फिर भी कुछ कहता हूँ-

आयी अनामिका अद्भुत,
धन्यवाद देता हूं।
करूं क्या आलोचना मैं, और दूं क्या सम्मति भी।
देखा पढ़ा सोचा किन्तु,
समझ में न आया कुछ।
अद्भुत हैं आविष्कार,
रचना भी नयी है।

कविता है—

छन्दोवद्ध, किंतु न गद्य है न पद्य है।
दोनों का मिश्रण है,
अजब अनूठी यह अकथ कहानी है।
साम्य है वेतुका छंद, बोली बोलचालकी भी।
किन्तु अमार्जनीय हैं,
छंदच्युत पदावली।

निराला०—राजन् !

पुराणमित्येव न साधु सर्वं, न चापिकाव्यं नवमित्यवद्यम्।
सन्तः परीक्ष्यान्यतरं भजन्ते, मूढ़ोपरप्रत्ययनेय बुद्धिः।

हमारी कृत यदि छंदच्युत है तो 'तत्सवितु र्वरेण्यं भर्गोदेवस्य धीमहि" इत्यादि वैदिक श्रुति में भी तो छन्दच्युति है।

रा० पं०—क्यों ? इसमें तो गायत्री छन्द है।

निरा०—पंडितवर! आप जो हमारी रचना की नक़ल कर सके हैं यही सूचित करता है कि हमारी कृति में भी कोई छंद है। वैदिक ऋचाओं के कर्त्ताओंने भी पहले छंद निश्चित करके कविता नहीं की थी। वे तो अपने उद्गार कह गये। हज़ारों वर्ष पीछे छन्दःशास्त्रकार पैदा हुए, जिन्होंने उन कृतियों में छन्द ढूंढ़ निकाले। हमारा भी कोई समानधर्मा किसी दिन उत्पन्न हो जायगा।

राजा०—त्रिपाठीजी ! आप ठीक कहते हैं। हम आपके काव्य-रस का और पान करना चाहते हैं।

(निरालाजी 'दिल्ली' शीर्षकवाली तथा "एकबार बस और नाच तू श्यामा" वाली कविता पढ़ते हैं।)

( द्वारपाल आता है )

धर्मावतार की जय हो। महाराज! द्वारपर एक सज्जन खड़े हैं, वे अपना कुछ पता नहीं बताते।

रा०—यदि कवि हैं तो अन्दर आने दो।

( श्री मैथिलीशरणजी का प्रवेश )

मै०—राजन्, स्वस्ति।

रा० पं०—कहिये महोदय, किस देश को सूना कर आये ?

मै०—"भारतीय मेरे बान्धव हैं, भारतवर्ष हमारा देश। बस यह मेरा आत्मचरित ही है मेरा केवल सन्देश।"

रा०—आप तो कवि हैं, कुछ और भी सुनाइये।

( मैथिलीशरणजी गुप्त "मानसभवन में आर्यजन जिसकी उतारें आरती" आदि पद्य पढ़ते हैं। )

पं०—अब पहचाना! आप तो मैथिलीके शरण हैं और महावीरजी के प्रसाद से सरस्वती के उपासक बने हैं, आप अब गुप्त नहीं रह सकते।

मै०—आप ने हमारी 'भारतभारती' तो पढ़ी दीखती है। अब एक नई रचना सुनाता हूं।

( "बड़े यत्न से माला गूंथी" कविता पढ़ते हैं )

रा० पं०—माला तो अच्छी गूंथी है। कोई न मिले तो हमें ही पहना दीजिये।

( द्वारपाल आता है )

द्वार०—धर्मावतार! पंजाब से कुछ ग्रामीण कवि आये हैं, वे कुछ पंजाबी गीत सुनाना चाहते हैं।

राजा—आदरपूर्वक ले आओ। कवि हैं, तो ग्रामीण क्या और नागरिक क्या ?

( पंजाबी गायकों का प्रवेश )

गायक—महाराज की जय हो!

रा०—कहिये, आप लोग पंजाब से आये हैं ?

गायक—महाराजजी, असी तो पञ्जाब तों तुरे औन्ने हैं। सुनया सी महाराज ने अवतार लैके दून दून-ओः सच—डेहराडून विच दरबार रचया हैगा। असी सोचया चलो नाले महाराज दे दर्शन कर आइये, नाले गंगा-माई विच पाप लाह आवांगे। एक पंथ ते दो काज हो जावनगे।

रा०-अच्छा बिराजिये। आप लोग अपनी कृति सुनायेंगे या औरों की ?

गायक—नहीं महाराज, असी तां पेडूं [ ग्रामीण ] हां, ते पंजाबी विच तुकबन्दी कराये हां।

रा०—हमारी इस सभा ने पंजाबी गीत कभी नहीं सुना। आप लोग इस रसिक-मंडली का मनोरंजन कीजिये।

( गायक गाना सुनाते हैं। )

कहे तू भी हिन्दिया होश सम्भाल ओ।
होश सम्भाल ओ लुट गया माल ओ।
घर लुटवाके माल गवांके बन गया अज्ज कंगाल ओ।
बस ओ यार न कर वधीकी असां समझलीने तेरे चाले,
सोना चांदी लूट लियोई तेरे कागज कढ़े दिवाले;
हिन्दोस्तान सोने दी धरती जित्थे भुक्खे मरदे लाले,
गलियां दे विच फिर न नमाने जेड़े इज्जत हुरमत वाले।
होश सम्भाल ओ, लुट गया माल ओ...
दाना पक्का बाहर भिजवावन खद्दड़ छड़ के मलमल पावन
भुक्खे ते मर गये निबाल ओ। कहे तू भी...
हिन्दू कहे मैं सब थी वड्डा मेरा हिन्दुस्तान ठिकाना
मुस्लिम कहे ए घर हुणसाडा सानूं मिलया हुक्म रबाना।
सिक्ख कहे मेरा भी सांझा असां पहले कदम जमाना
वांके सुन फिरंगी आखे जेड़ा हत्थ लावे तां जाना।
होश सम्भाल ओ कहे तू भी...*

राजा—आप की पंजाबी भाषा तो बड़ी सरस, सरल और मधुर है। आप एक गीत और न कहियेगा ?

( गायक दूसरा गीत सुनाते हैं। )

राजा—गायकगण, आप ने हमारी सभा को बहुत आनन्दित किया। अच्छा, विराजिये।

---

* बहुत संभव है, इस गीत में कुछ स्थानों पर पाठ भेद हो। —सं०

( द्वारपाल आता है )

द्वारपाल—महाराज की जय हो ! द्वार पर एक सज्जन आये हैं। नामधाम पूछा तो कहते हैं—

"रससिद्धों की जगह अब तुक्कड़ तीक्ष्ण त्रिशूल है"

रा० पं०—राजन् ! त्रिशूल कवि आये जान पड़ते हैं। ले आओ भाई ! अन्दर ले आवो ( त्रिशूल आते हैं )

त्रि०—राजन् ! अक्षयकीर्त्ति हो।

रा० पं०—कहिये शुक्लजी ! कुशल से तो हैं ? आज 'त्रिशूल' बनकर आये हैं कि 'सनेही' बनकर ?

त्रिशूल—'जाकी रही भावना जैसी; यह मूरति देखी तिन तैसी।'

रा० पं०—पर हमें तो आपकी मूर्ति महा भयंकर दीख पड़ती है।

त्रि०—यह ज़माने का अन्धेर है। सुनिये चौबेजी !

( "पड़े हैं बन्धन में गजराज" कविता पढ़ते हैं। )

रा० पं०—अन्धेर की आंधी ने तो अपना करतब दिखलाया, अब सनेह की वर्षा कीजिये।

त्रि०—बहुत अच्छा।

( "तू है गगन विस्तीर्ण" कविता पढ़ते हैं )

राजा—धन्य !

द्वार—महाराज की जय हो। अन्नदाता ! एक वृद्ध कवि पधारे हैं।

राजा—सहारा देकर ले आवो। ( दरबार में आकर शंकरजी बैठ जाते हैं। )

राजा०—हे सुजन हम सों कृपा करिके कहो निज हाल।
है उजागर तुव जनम सों कौन वंश विशाल ?
आज जन केहि देश के तुम्र विरहवस अकुलाहिं ?
कौन हित कोमल चरण आये कठिन भुव माहिं ?

शंकर—राजन् !

"धिक्कूप हरदुआगंज का शंकर शठ मण्डूक हूं।"

रा०—अहा ! आप ही कविता-कामिनी-कान्त पण्डित नाथूराम शंकर शर्मा हैं ? कविवर, हम आपके बहुत कृतज्ञ हैं ! ( मुकुटधर जी से ) मुकुटधरजी ! आप क्यों चुप हैं ?

( मुकुटधरजी "आराधना" तथा "प्रभु मन्दिर की नीरवता" कविताएँ पढ़ते हैं ।)

शंकरजी—( बैठे हुए ) बहुत अच्छा रहा ।

मु०—एक और सुनिये ("विश्वबोध" कविता पढ़ते हैं ।)

[ द्वारपाल आता है । ]

द्वार—अन्नदाता की जय हो ! प्रयागराज से कविवर पण्डित श्रीधर पाठक तथा पं० रामनरेश त्रिपाठी पधारे हैं ।

[ राजा के आज्ञा देने पर श्रीपाठकजी और श्रीत्रिपाठीजी का प्रवेश । ]

श्रीधर पाठक—राजन् ! अभ्युदयोऽस्तु ।

रा०—आइये पाठकजी । कहिये त्रिवेणी-स्नान खूब होता है न ?

श्री०—राजन्, आपकी दया है । जब घर पर गंगा हैं, तब क्यों न हो ? आजकल त्रिवेणी ३०० वर्ष से त्रिपैनी बन गयी हैं ।

[ यथास्थान बैठते हैं । ]

राजा—[ शङ्कर से ] शङ्करजी ! क्या अब आपका काव्य-ताण्डव आरम्भ होगा ?

शंकर—राजन्, ताण्डव अब क्या होगा ! हम तो बुढ़ाय गये । अब तो—

बूढ़े शंकर से कहती है हाथ जोड़ कविता-बाला ।
होकर सूर भजो केशव को लेकर तुलसी की माला ।

[ राजा प्रशंसा करते हैं । ]

शंकर—

"मैं समझता था कि शङ्कर कुछ पता तेरा नहीं ।
आज शंकर तू मिला तो कुछ पता मेरा नहीं ।"

[ राजा और पाठकजी दोनों प्रशंसा करते हैं । ]

राजा—आपका नाम कविता-कामिनी-कांत यथार्थ ही है।

शंकर—इसके विषय में भी सुनिये.........

[ "सुख भोगे भरपूर" वाली कविता पढ़ते हैं। ]

राजा—चौबेजी ! कैसी रही ?

रा० पं०—राजन्, हमें इस कविता में नायककी धृष्टता दिखायी देती है। 'उलही' आदि शब्दों में भद्दापन झलकता है।

शंकर—राजन् ! [ "पूरण सुधाकर के अंक में कलंक बसै" कविता पढ़ते हैं। ]

श्रीधर पाठक—खूब !

राजा—कविवर ! आप ब्रजभूमि के निवासी हैं, कुछ ब्रजभाषा में तो कहिये।

शंकर—राजन्, पड़ोस में यह मैथिलीशरणजी बैठे हैं। मैं समझता था कि कहीं यह हमारी पड़ी बोली सुनकर नाराज़ न हो जायँ ! आप सुनना चाहते हैं तो कहूँगा।

[ "दईमार भारत होरी है" कविता पढ़ते हैं। ]

राजा—अच्छी होली खेली शंकरजी ! (त्रिपाठीजी से) त्रिपाठी जो ! आपका काव्य सुनने की उत्सुकता है।

रामनरेश त्रिपाठी—सुनिये राजन् !

[ "कामना और नहीं कुछ मेरी" कविता पढ़ते हैं। ]

द्वारपाल—[ आकर ] महाराज की जय हो। मुलतान से चमूपति नामक कवि आये हैं।

राजा—सादर ले आओ।

चमू०—राजन् ! विजयलक्ष्मी अटल रहे।

राजा—आइये। आपका स्वागत है !

रा० पं०—चमूपतिजी ! आजकल पंजाब में हिन्दी-प्रचार की कैसी दशा है ?

चमू०—चौबेजी ! पहली स्थिति तो आप जानते ही हैं। वहां पर फ़ारसी का पूरा ज़ोर था, किन्तु अब कुछ जागृति होने लगी

है। आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि हमने चार ही वर्ष पहले देवनागरी अक्षर सीखे हैं।

रा०पं०—आपका उत्साह प्रशंसनीय है। [ पाठकजी से ] पाठकजी! अब आपकी कोमल-कान्त-पदावली का परिचय मिलना चाहिये।

श्रीधर पाठक—राजन्! कल इसी रमणीक देहरादून आते समय जो दृश्य देखा, उसपर कुछ पंक्तियां लिखी हैं, उन्हीं में से कुछ सुनाता हूं।

[ 'देहरादून' में से कुछ पद्य पढ़ते हैं ]

श्रीधर०—राजन्! एक भौंरे की कहानी और सुनिये—

["भ्रमर तुम बन-बन भ्रमण करो" कविता पढ़ते हैं; शंकर आदि प्रशंसा करते हैं।]

राजपण्डित—आपकी कविता तो बुलबुल मचा रही है पाठकजी!

द्वारपाल—जय हो! महाराज! द्वारपर दो सज्जन और एक राजपूत-कन्या भी पधारी हैं।

राजा—सादर ले आओ।

[ तीनों का प्रवेश; सब उठ खड़े होते हैं ]

माधवशुक्ल—राजन्! दीर्घायु हों।

राजा—आइये कविगण! कहां से शुभागमन हुआ?

रा० पं०—महाराज! हम आप लोगों से भलीभांति परिचित हैं। आप लोगों का हम परिचय करायेंगे। आप श्रीमती सुभद्राकुमारी चौहान हैं, जिनकी कीर्ति नागपुर-सत्याग्रह के कारण देश के कोने-कोने में पहुँच चुकी है।

राजा—हमारा सौभाग्य है कि हम आप के दर्शन से कृतार्थ हुए।

रा० पं०—आप भी उसी सत्याग्रह में ख्याति पानेवाले कर्मवीर पण्डित माखनलाल चतुर्वेदी हैं, और आप कृष्णमन्दिर के कट्टर पुजारी पंडित माधव शुक्ल हैं।

राजा—हमारा सौभाग्य ही आप सज्जनों को यहां खींच लाया है। [ राजपण्डित से ] अब किसकी बारी है ?

रा० पं०—महाराज! अब चमूपतिजी अपना सैन्य-सञ्चालन दिखायेंगे।

चमूपति [ उठ कर ]—राजन्! पहले अपने इष्ट देवता का आवाहन करता हूँ, सुनिए—

"रणचण्डी! जाग कि फिर, वैरी वैरानल-कोप जगाते हैं,
हम धर धर धैर्य अधीर हुए, फिर धूर्त्त दाँत दिखलाते हैं।
आ खड्ग गहे रण-प्राङ्गण में, फिर झन झन हो तलवारों की,
इत हाथ बढ़ें उत सीस कटें, फिर झनक जीत झनकारों की।
पी वैर-वारुणी वीर बढ़ें, वैरी दल का विध्वंस करें,
तन-परिमल रण-भू-धूलि मलें, सिर घोर घाव अवतंस धरें।
बन वीर हृदय में वीर-भाव, कुल लाज-ललन ललनाएँ हों,
घुट्टी में प्राणाभरण पिला, फिर धन्य-धन्य माताएँ हों।
रिपुजेता ही बनकर आवें, औ वहिन तिलक दें भाई को,
फिर पत्नीपूजा प्रस्तुत हो, रणवीर चिता घर आई को।
फिर भैरवनाद गुँजारे हों, फिर दुन्दुभिवाद विहारें हों,
हाथों में किरिच कटारें हों, भूतलपर शोणित-धारें हों॥

रा० पं०—वाह साहब वाह! आप तो पूरे चमूपति हैं।

च०—ये पंक्तियां उस समय की हैं जब हमारी वीर बहन नागपुर के पताका-संग्राम में मोर्चे पर डटीं थीं।

पाठकजी—धन्य चमूपतिजी! आप की कविता से तो इन बूढ़ी नसों में भी जवानी का खून खौलने लगा।

रा० पं०—खून न खौलाती तो चमूपति क्यों होते ?

द्वारपाल—महाराज का बोलबाला! महाराज द्वार पर दो महाशय खड़े हैं; कहते हैं, भजन सुनाने आये हैं।

राजा—अच्छा, अन्दर ले आओ।

द्वारपाल—जो आज्ञा महाराज की।

[ दोनों सज्जनों का प्रवेश ]

आर्यसमाजी भजनीक—नमस्ते राजन्।

सनातनी भजनीक—राजन् जय हो!

राजा—आइये महाशय, विराजिये, कैसे कृपा की?

राज पं०—पहिले आप अपना परिचय तो दीजिये।

एक महाशय—महाराज, मैं आर्यसमाज का भजनीक और उपदेशक हूं।

दूसरे महाशय—और महाराज, मैं सनातन धर्म सभा का भजनीक हूं।

पहले सज्जन—राजन्! सुना था, यहां एक 'कवि-दरबार' हो रहा है। मैंने कहा, कुछ हमारे भजन भी हो जांयगे और 'धरम-परचार' भी हो जायगा।

राज-पण्डित—धर्म-प्रचार तो होता रहेगा। आप अपने भजन सुनाइये।

सना०—महाराज, पहले हमें कहने का अवसर मिलना चाहिये।

आर्य—अच्छा, आप ही कह लीजिये।

[ बैठते हैं ]

राज-पण्डित—बहुत अच्छा, कहिये।

[ भजनीकजी भजन-पुस्तक खोलते हैं ]

राज-पण्डित—खूब! धर्मसभा के भजन और उर्दू में!

सना० भजनीक—महाराज, हमारा काम तो धरम-परचार करना है, चाहे उर्दू में होय चाहे हिन्दी में। भाषा की कौन सी बात है?

[ भजन पढ़ते हैं ]

क्या करूं हाय रे!
धर्म से बेमुख हुआ न जाय रे!
धर्म जाय तो उस पर वारूं मैं जिया,
धर्म के वास्ते मैं जान देने को तैयार हूं।
पर मुसल्मां के होने से तो इन्कार हूं,
धर्म की आंच लगे इससे भी लाचार हूं,
आपके कब्ज़े में मुद्दत से गिरफ्तार हूं।

राज-पण्डित—[ बीच में टोककर ] भजनीकजी ! इस दरबार में ऐसी कविता करने से भी गिरफ़्तार हो जाया करते हैं।

सना० भजनीक—[ लज्जित होकर अन्तिम पद कहते हैं ]

जो करी सोई कही क्योंकि गुनहगार हूं,
धर्म जाय रे ऐसा न सहाय रे कैसे सुख पाय रे।

( बैठते हैं )

पहले सज्जन—( स्वयं उठकर ) अच्छा, तो अब हम भजन कहें।

द्वारपाल—महाराज की जय हो। महाराज, बाहर एक चूरन वाला खड़ा है। वह कहता है, मैं भी कविता सुनाऊँगा।

राजा—अहा ! प्राचीन काल में हमारे जुलाहे भी कविता किया करते थे, आज कल चूरनवाले करने लगे तो क्या आश्चर्य है ! उसे आने दो।

(द्वारपाल "जो आज्ञा" कहकर जाता है, और चूरनवाला प्रवेश कर राजा का अभिवादन करता है।)

राजा—( चूरनवाले को देखकर ) क्यों भाई ! तुम भी कविता करते हो ?

चूरनवाला—महाराज की कृपा से कुछ-कुछ कर लेता हूँ ?

राजा—अच्छा, इधर बैठ जाओ ( चूरनवाला बैठता है ) आप कहिये भजनीकजी !

( पहले भजनीक "ओं विश्वानि देव सवितर" इत्यादि मन्त्र पढ़ते हैं।)

( गाना शुरू करते हैं )

प्रथम जगदीश को कीजै नमस्ते। कि जिसके गर्भ में ब्रह्माण्ड बस्ते।

राजपण्डित—अजी कुछ छन्द-बन्द यति-वति भी हैं ?

भजनीक—[बिना कुछ ध्यान दिये दूसरा भजन शुरू करते हैं।]

अब भी नहीं छोड़ोगे पूजा-पाषाण अब भी नहीं छोड़ोगे ?
न तस्य प्रतिमा अस्ती, तब कैसे है यह ज़बरदस्ती ?
तुम्हें क्या हुआ खफ़खान ? अब भी नहीं छोड़ोगे ?

राज-पण्डित—अजी महाशयजी, कविता पर तो ज़बरदस्ती न करो, कहीं बेचारी सरस्वती का गला ही न घोंट देना।

भजनीक—आप हमें बीच में मत रोकिये, जो कुछ कहना हो पीछे कह लीजियेगा। [ फिर गाते हैं ]

क्या कोई गावे सुनावे प्रभू, महिमा तेरा लखी किसी से न जाय।
ऋषि ऋषीश्वर, तपी तपीश्वर, मुनी मुनीश्वर हजार।
लिख लिख के हारे वो सारे वेचारे ना ..................

राजपण्डित—महाशयजी, तपस्वी का 'स्वी' कहाँ?

भजनीक—आप जानते नहीं यह 'आर्षप्रयोग' है। चारो वेद परमेश्वर के बनाये, उसके बाद उपनिषद्, दर्शन, प्राचीनऋषियों के सब ग्रन्थ, सत्यार्थ प्रकाश और स्वामीजी के सब ग्रन्थ और पांचों खण्ड संगीत-रत्नप्रकाश तथा आर्य गायन—यह सब ऋषि-कृत ग्रन्थ हैं। इनके सब प्रयोग आर्ष हैं। इनके सिवाय सब ग्रन्थ मनुष्य-कृत होने से कपोल-कल्पित हैं। आप हमें बार-बार रोकते हैं, यह सभ्यता के विरुद्ध है। हमें अब एक भजन और कह लेने दीजिये। [गाते हैं]

चूरनवाला—[उठकर] महाराज! ये भजनीक आपका समय ख़राब कर रहे हैं, इनसे अच्छी कविता तो हमीं सुना देते।

राजा—भजनीकजी, आप बहुत कह चुके, अब बस कीजिये, चूरनवाले को अपनी कविता सुनाने दीजिए।

[ चूरनवाला कविता पढ़ता है ]

जब ते आये हम हरद्वार, छोड़ दिया सब घर औ बार।
ऊपर चण्डी का दरबार, नीचे बहे गंग की धार॥
चूरन बना मसालेदार।

(इसके बाद भारतेन्दु हरिश्चन्द्र का "चूरन का लटका" गाता है।)

आर्यस० भजनीक—अरे यह क्या मख़ौलबाज़ी कर रहे हो?

सनातनी भज०—यहां चूरन बेचने आये हो या कविता सुनाने?

राजपण्डित—देखो! गड़बड़ मत करो, यहां जो कोई कविता की विडम्बना करता है, उसे जेल जाना पड़ता है।

चूरनवाला—महाराज, सरस्वती देवी जब गम्भीर कविताएं सुनते-सुनते थक जाती हैं तब हम विनोद द्वारा उनकी थकावट दूर करते हैं। यदि इसके लिये हमें जेल की चक्की मिले तो इन महाशयों को जो कविता की हत्या करते हैं फांसी मिलनी चाहिये।

राजा—ठहरो, हम तुम्हारे इस मामले पर कवियों की सम्मति लेंगे। कहिये कविगण, आप लोगों की क्या सम्मति है?

राज-पण्डित—राजन्, चूरनवाले की बात सर्वथा उचित है। उसकी कविता में बड़ी विनोदपूर्ण व्यञ्जना है, वह पुरस्कार के योग्य है। इन भजनीकों ने कविता की एकदम हत्या की है। हम देखते हैं, पंजाब के भजनीकों में यह अपराध दिन-दिन फ़ैल रहा है। इसलिये इन दोनों महाशयों को ऐसा आदर्श दण्ड मिलना चाहिये जिससे फिर कोई अन्य व्यक्ति ऐसा दुस्साहस न करने पावे। हमारी सम्मति में इन दोनों महाशयों को फांसी देनी चाहिये।

सनातनधर्मी भजनीक—अजी, हम आप से कविता सीखने नहीं आये। जिस कविता में कुछ उपदेश न हो, 'धर्म-परचार' न हो, बस इधर नदी बहती है उधर नाला जाता है, ऐसी कविता से क्या लाभ?

श्रीधर पाठक—राजन्! इन महाशयों का अपराध तो बहुत भारी है, किन्तु हमारी प्रार्थना है कि इस बार इन्हें क्षमा मिले। इस बार यह समझा कर छोड़ दिये जायँ। सुनिये महाशय, आगे से कभी कविता की ऐसी विडम्बना न कीजियेगा। देखिये—

जिस रचना में सुलभ माधुरी-मोहन-मन्त्र न।
अलभ अमोल विचार चातुरी सरणि स्वतन्त्र न॥
निपट निडर निरशंक निरंकुश भाव-प्रकाश न।
वर विवेचना-सहित अहित-हित का अलगाव न॥

वह रचना विफल प्रयास फल विफल प्रमाद-प्रलाप है।
वह कविता कुकवि-कुबुद्धि-कृत केवल कुपद-कलाप है॥

राज-पण्डित—किन्तु पाठकजी! क्या यह आप के समझाये समझ जायंगे? इनकी हठ-धर्मिता तो देखिये।

नाथूराम शंकर शर्मा—पण्डितवर! इनकी हठ-धर्मिता पर ध्यान न दीजिये। यह पंजाब की परिस्थिति का प्रभाव है, इन लोगों का तो यह सिद्धांत है कि,

यदि चौमुख बाबा की बिटिया* बनी रही अनुकूल,
तो तुक्कड़ समझेंगे मुझको कवितारण्य-बबूल।
कँटीले पाल पसारूँगा। किसी से कभी न हारूँगा।

यह किसी से हार नहीं मानते। फिर भी हम वृद्ध लोगों की सम्मति है कि इस बार यह क्षमा किये जायँ।

राजा—अच्छा महाशयो, इस बार हमने आपको इन वृद्ध कवियों के अनुरोध से छोड़ दिया। आगे से सावधान रहियेगा।

राजा—चतुर्वेदीजी! और सब कवि अपनी-अपनी मधुर और ओजस्वनी कविताएँ सुना चुके हैं, आपकी विभूति ही शेष है। आप लोग भी सुना लें, तो यह सभा विसर्जित की जाय।

माखन—मेरे पास तो यही टूटी-फूटी लकीरें हैं—

यह घूँसा देखो रे बलवान।
इसको मारा, उसको पीटा, तुमको जा धमकाया,
पंचांगुलि का ऐक्य साधकर सब कुछ बस में लाया।
इसके आगे सब ही झुकते बड़े-बड़े अभिमानी,
राजा झुकते रैयत झुकती, मूर्ख और विज्ञानी।
है स्वतन्त्रता पराधीनता, दोनों इसकी माया,
इस घूंसे में सब विभवों का सारा तत्व समाया।
("फूलकी अभिलाषा" आदि कविता पढ़ते हैं।)

* सरस्वती।

राजा—धन्य कविवर ! धन्य !!

राजा—( माधव शुक्ल से ) शुक्लजी ! आप क्यों चुप हैं ?

माधव—राजन् ! हमें श्रोता दिखाई दें, तो कहें।

राजा—क्यों, आपको किस प्रकार के श्रोता चाहिये ?

माधव—"जिनके स्वच्छ शुभ्र हियपट पर जगविकार का लगा न दाग।"

राजा—कविवर, विश्वास मानिये इस सभा में आपकी पुकार व्यर्थ न जायगी।

राजा—( श्री सुभद्राकुमारी से ) हमारी श्रद्धा आपसे कुछ कहने की प्रार्थना करती है।

सुभद्रा—राजन्, जलियांवाला बाग में बसंत का आगमन कैसे होना चाहिये, इस पर यह पंक्तियां लिखी थीं—

( "यहां कोकिल नहीं काक हैं शोर मचाते" "राखी" वाली इत्यादि कविताएं पढ़ती हैं। )

माखन—( खड़े होकर ) सभ्यगण ! बहिन के इन मर्मवेधी शब्दों को सुनकर किसके चित्त में उत्साह प्रदीप्त न हुआ होगा ? परमेश्वर करें हमारा यह वचन चरितार्थ हो।

सुभद्रा—

आर्य-स्त्रियां जो प्रण अनोखा कर चुकीं सो कर चुकीं,
जो भावना हृद्धाम में वे भर चुकीं सो भर चुकीं।
जो धारणा संसार में वे धर चुकीं सो धर चुकीं,
प्रण-पूर्ति होनी चाहिये, अगणित सुभद्रा मर चुकीं।

भाइओ, अब और क्या कहें !

( "वीणा बज सी पड़ी है" कविता पढ़ती हैं। )

राजा—कविगण ! हम आपको किन शब्दों में धन्यवाद दें ! हमारी केवल यही आकांक्षा है कि आपने आज इस मातृ-मन्दिर में

जो शंखनाद किया है, उसकी गूँज भारत-भूमि के कोने-कोने में फैल कर इस मुर्दा देश में फिर से जीवन फूंक दे। सब कविवरों को बार बार धन्यवाद देकर अब मैं सभा विसर्जित करता हूं।

## दूसरा दिन

दूसरे दिन एक बजे से सम्मेलन का कार्य आरम्भ हुआ। गुरुकुल के विद्यार्थियों ने मधुर स्वर में वेद-पाठ किया। स्थानीय विद्यार्थियों ने 'पितु मातु सहायक स्वामि सखा तुमही इक नाथ हमारे हो,' तथा 'भारत हमारा देश है हित उसका निश्चय चाहेंगे'—इन गीतों को गाया। "जालंधर—कन्या-महाविद्यालय" की छात्री श्री सुशीला देवी ने अपनी रचित कविता सुनायी। कविता के 'चंचल चिड़िया की चहचह में, कोयल की कलकल में तू' आदि पदों पर लोगों ने खूब दाद दी। इसके बाद हिन्दी के सुप्रसिद्ध सुलिपि-लेखक श्री पंडित गौरीशंकरजी भट्ट ने अपनी लेखन-कला के निदर्शक अनेक चित्र दिखलाए। आप ने अपने चित्रों द्वारा यह प्रदर्शित किया कि देवनागरी लिपि में भी 'मोनोग्राम' किस खूबी से अंकित किये जा सकते हैं। उपस्थित जनता आप की लिपि-कला-चातुरी पर मंत्रमुग्धवत् हो गयी। इसके उपरांत कविवर पंडित माधव शुक्लजी ने स्वरचित 'अचल सुहाग भरी, जागरी जग उजागरी' गीत गाया। इस मधुर गीत का लोगों पर अच्छा प्रभाव पड़ा।

तत्पश्चात् श्रीयुक्त ईश्वरचंद्रजी ( गुरुकुल कांगड़ी ) ने "काव्य और अलंकार" पर निबन्ध पढ़ा, जिसे लोगों ने खूब पसन्द किया। काशी-निवासी श्रीयुक्त अलगूरायजी ने 'हिन्दी शार्ट हेण्ड' के सम्बन्ध में विशेष बातें कहते हुए अपनी निपुणता दिखलाने के लिए सभापतिजी के भाषण का कुछ अंश पढ़ कर सुनाया, जिसे उन्होंने 'शार्ट हेण्ड' द्वारा लिखा था। तदनन्तर हिन्दी के लब्धप्रतिष्ठ लेखक श्रीयुक्त बाबू मुकुन्दीलालजी बैरिस्टर ने "समाचार-पत्रों का विकास और उनकी शक्ति" पर एक उत्तम निबन्ध पढ़ा।

इसके बाद प्रस्तावों की बारी आयी। सम्मेलन में स्वीकृत प्रस्ताव नीचे दिये जाते हैं—

( १ ) यह सम्मेलन हिन्दी के प्रसिद्ध विद्वान् परमहितैषी कवि-नायक पं० विनायकराव, पं० रामस्वरूप शर्मा, मुन्शी पन्नालाल "प्रेमपुञ्ज," पं० श्रीकृष्ण जोशी, बाबू जगन्मोहन वर्मा तथा बाबू कीर्त्तिनारायण सिंह की मृत्यु पर हार्दिक शोक और उनके परिवार के साथ समवेदना प्रकट करता है। —सभापति द्वारा

( २ ) यह सम्मेलन हिन्दी-भाषा-भाषी प्रान्तों की व्यवस्थापिका-सभाओं और डिस्ट्रिक्ट बोर्डों और म्युनिसिपल बोर्डों के सदस्यों से अनुरोध करता है कि वे समस्त जनता की सुविधा का ध्यान रखकर इन संस्थाओं की कार्रवाई हिन्दी-भाषा में कराने का विशेष प्रयत्न करें।

प्रस्तावक—बाबू मुकुन्दीलाल बैरिस्टर
समर्थक—गोस्वामी पं० छबीलेलाल

( ३ ) सम्मेलन के विचार में इस बात की बड़ी आवश्यकता है कि भारतवर्ष का एक बृहत् और प्रामाणिक इतिहास तैयार किया जाय। इस काम में न केवल उपस्थित सामग्री के अध्ययन की, किन्तु नई खोज की भी, बहुत आवश्यकता है। इस कार्य की योजना तैयार करने के लिए सम्मेलन निम्नलिखित सज्जनों की एक समिति बनाता है और उसे अधिकार देता है कि वह आवश्यकता के अनुसार इस समिति में और भी सज्जनों के नाम सम्मिलित करे। यह योजना आगामी सम्मेलन से पूर्व स्थायी-समिति में आ जानी चाहिए।

१—श्री० बाबू शिवप्रसाद गुप्त, काशी
२—श्री० पं० नरेन्द्र देव, काशी
३—श्री० पं० गौरीशङ्कर हीराचन्द ओझा, अजमेर
४—श्री० बा० पुरुषोत्तमदास टंडन, प्रयाग
५—श्री० पं० रामकरण सिंह असोपा, जोधपुर

प्रस्तावक—बाबू शिवप्रसाद गुप्त
अनुमोदक—महा महोपाध्याय पंडित गिरिधर शर्मा
समर्थक—पंडित श्री निवासदास चतुर्वेदी एम० ए०

श्री शिवप्रसादजी गुप्त ने प्रस्ताव उपस्थित करते हुए इस बात के लिये दुःख प्रकट किया कि, भारत के पास उसका अपना प्रामाणिक इतिहास नहीं है। जिस राष्ट्र का अपना प्रामाणिक इतिहास नहीं है, वह जीवित राष्ट्र नहीं। भारतीय स्कूलों और कालेजों में जो इतिहास की पुस्तकें पढ़ायी जाती हैं, वे बहुत ही अविश्वसनीय और भ्रमात्मक होती हैं। शिवाजी-जैसे हमारे राष्ट्रीय वीरों को 'लुटेरा' कहा जाता है! हमारे वेद चरवाहों और किसानों के गीत कहे जाते हैं! क्या ऐसी इतिहास की पुस्तकों को इतिहास का नाम दिया जा सकता है? क्या कोई विद्वान् और निष्पक्ष इतिहासवेत्ता ऐसी इतिहास की पुस्तकों के लिये यह कह सकता है कि इनमें भारत के भूत जीवन का वास्तविक चित्र खिंचा रहता है? हिन्दू काल बहुत बुरी तरह से संक्षिप्त कर दिया गया है, और थोड़े से पृष्ठों में भर दिया गया है। विदेशियों के आक्रमण विस्तार से दिये गये हैं और उनमें अत्युक्तिपूर्ण बातें भर दी गयी हैं। वाइसरायों का वर्णन बहुत अधिक पृष्ठों में दिया गया है।

इसके बाद वक्ता ने कहा कि हमारा इतिहास अपूर्ण है। इसको पूर्ण करने के लिये विश्वसनीय बातों और प्रमाणों की आवश्यकता है, विस्तार से अनुसन्धान करने की ज़रूरत है। विभिन्न राज्यों और प्रान्तों में इतिहास की बातें इकट्ठी करनी होंगी। विशेषतः, सातवीं और आठवीं शताब्दि के बीच का प्रामाणिक इतिहास हमारे पास नहीं है। इस बड़े काम को पूरा करने के लिये एक कमेटी नियुक्त की जाय और वह इस सम्बन्ध की योजना तैयार करे। वक्ता ने इस बड़े काम में व्यावहारिक रूप से सहायता करने की अपील की।

(४) यह सम्मेलन हिन्दुस्तान के रहनेवाले उन सब सज्जनों से जो हिन्दी या उर्दू लिखने के लिए अरबी या रोमन लिपि का

प्रयोग करते हैं, प्रेम के साथ अनुरोध करता है कि वे राष्ट्रीय आवश्यकता की ओर ध्यान देकर नागरी-लिपि भी सीखना और उसका व्यवहार करना आरम्भ करें।

—सभापति द्वारा

(५) नियम ३७ में इस वर्ष से वर्ष का आरम्भ माना जाय—

१—सम्मेलन का वर्ष चैत्र शुक्ल प्रतिपदा से आरम्भ होकर चैत्र कृष्ण अमावास्या को पूर्ण हुआ करेगा।

२—नियम ४४ के अन्त में यह और जोड़ दिया जाय 'और अधिवेशन समाप्ति के पीछे १ मास में हिसाब, ६ मास में लेखमाला तथा कार्य-विवरण छपवा कर हिसाब अवश्य साफ़ करदें।'

३—नियम ५२ में—सम्मेलन के "विशारद" उपाधिधारी के स्थान पर सम्मेलन के "उपाधिधारी" होना चाहिए।

—सभापति द्वारा

(६) यह सम्मेलन हिन्दी भाषा द्वारा उच्च शिक्षा का प्रचलन बढ़ाने के लिए देशी राज्यों, सार्वजनिक विद्यालयों, ज़िलाबोर्डों तथा म्युनिसिपल बोर्डों के शिक्षाधिकारियों से अनुरोध करता है कि वे सम्मेलन की परीक्षाओं के पाठ्य ग्रन्थों को पढ़ाने का अपने यहाँ ऐसा प्रबन्ध करें, जिससे परीक्षार्थियों को सम्मेलन की परीक्षाओं में सम्मिलित होने की सुविधा हो।

प्रस्तावक-अध्यापक पं० रामरत्न शर्मा
अनुमोदक-पं० श्रीनारायण चतुर्वेदी, एम. ए. एल, टी.
समर्थक-पं० जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी

(७) सम्मेलन को यह जानकर दुःख है कि पंजाब-शिक्षा-विभाग के अधिकारियों ने हिन्दी पढ़नेवाले बालकों की आरम्भिक शिक्षा की सुविधा पर यथोचित ध्यान न देकर अधिकतर आरम्भिक पाठशालाओं में उर्दू शिक्षा ही का प्रबन्ध कर रक्खा है। यह अनुचित है, इसलिए यह सम्मेलन पंजाब की हिन्दी-भाषा-भाषी जनता से अनुरोध करता है कि वह अपने बालकों के भविष्य का विचार कर इस अप्राकृतिक दशा के शीघ्र परिवर्तन के लिए कटिबद्ध हो प्रयत्न करे।

प्रस्तावक—पं० भोलानाथ शर्मा
अनुमोदक—लाला खुशालचन्द्र खुरशन्द

(८) (क) यह सम्मेलन पंजाब के उर्दू समाचार-पत्रों के हिन्दी-प्रेमी परिचालकों से निवेदन करता है कि वे अपने समय और शक्ति का कुछ अंश हिन्दी-प्रचार में लगावें; जहाँ तक सम्भव हो अपने पत्रों को हिन्दी में परिवर्तित कर दें। अथवा यदि वे ऐसा न कर सकें तो नये पत्र हिन्दी में भी निकालने का प्रबन्ध करें।

(ख) यह सम्मेलन हैदराबाद (सिन्ध) के सिन्धी दैनिक पत्र "हिन्दू" के इस कार्य का हृदय से स्वागत करता है कि उसने सिन्ध प्रदेश में प्रचार के लिए अपने कलेवर में हिन्दी को भी स्थान दिया है।

प्रस्तावक—लाला खुशालचन्द्र खुरशंद
समर्थक—पं० पद्मसिंह शर्मा

प्रस्तावों के स्वीकृत हो जाने के पश्चात् सम्मेलन के अनन्य भक्त श्री टंडनजी ने 'हिन्दी-साहित्य' पर निम्नलिखित ओजस्वनी वक्तृता दी—

"सज्जनो! प्राचीन हिन्दी-साहित्य की गति पर जब हम एक दृष्टि डालते हैं, तब हमको यही मालूम होता है कि, पहले साहित्य में वीर रस का आविर्भाव हुआ। उसके बाद भक्ति और फिर करुणा और शृंगार रस पर ग्रन्थों की रचना हुई है। साहित्य क्या है? क्या अन्धाधुन्ध किताबों का निकालते जाना ही साहित्य है? साहित्य कोई व्यापार की चीज़ नहीं है। क्या यहां आये हुए प्रतिनिधियों का यही धर्म है कि वे साहित्य को व्यापार का एक साधन बना लें? नहीं। इससे भी ऊँचा कोई उद्देश्य है। आप लोग इस बात की चिन्ता न करें कि हिन्दी में पुस्तकों की संख्या बहुत कम है। उसमें रद्दी पुस्तकों की उतनी भरमार नहीं है जैसी अन्य भाषाओं के साहित्य में है। अन्य प्रदेश के निवासी—गुजराती, बंगाली इत्यादि-कई सज्जनों ने मुझसे इस विषय में चर्चा की है, उन्होंने मुझसे पूछा है कि हिन्दी में साहित्य की दशा क्या है। वास्तव में

वे लोग पुस्तकों के ढेर से ही साहित्य का अनुमान लगाया करते हैं। वे इसी पर अभिमान करते हैं और अपने साहित्य के सामने हिन्दी-साहित्य को छोटा समझते हैं। परन्तु मैं उसी साहित्य को ऊंचा समझता हूं जिसमें ग्रन्थ थोड़े ही हों; किन्तु सुन्दर और ऊंची शैली के हों। एक हीरा सैकड़ों कांचों से अच्छा होता है। कांचों की भी आवश्यकता है; पर उसका मोल हीरे का नहीं होता। अच्छी चीज़ सदैव थोड़ी ही होती है। कबीरदासजी ने कैसी मर्म की बात कही है—

> "सिहन के लहँडे नहीं, हंसन की नहिं पाँत।
> लालन की नहिं बोरियां, साधु न चलें जमात॥"

सिंहों के झुंड नहीं होते—सारे जंगल में सिंह एक ही होता है, हंस भी सब जगह पंक्ति बांध कर नहीं दौड़ते फिरते—कहीं मान सरोवर के समीप कोई एक दिखलाई दे जाता है। लालों की बोरियां नहीं भरी जातीं। लाल कोई देहरादून के बांसमती चावल नहीं हैं, जो बोरियों में भर कर कहीं भेजे जावें। और साधुओं के झुंड भी नहीं देखे जाते। प्रयाग के कुंभ में लाखों साधुओं के झुंड आप देखते हैं; पर उनमें सच्चे साधु कितने होते हैं? इसी प्रकार साहित्य में भी रत्न थोड़े ही होते हैं। फिर भी हिन्दी-साहित्य में रत्नों की कमी नहीं है। हिन्दी-साहित्य के कबीर, सूर और तुलसी इन तीन ही रत्नों को आप ले लीजिए, इनके सामने सारे संसार का साहित्य नहीं टिक सकता। हमारे यहां तो और भी बहुत से रत्न उपस्थित हैं।

आजकल प्रायः देखा जाता है कि लोग बँगला या अँगरेज़ी इत्यादि अन्य भाषाओं की किताबों का तरज़ुमा कर लेते हैं अथवा दो चार किताबों के आधार पर ही किताबें लिखते रहते हैं। कई लोगों ने तो अपने हाथों को किताबें लिखने की मशीन बना रखा है, और धड़ाधड़ पुस्तकें लिखते चले जाते हैं, पर मैं इसको साहित्य-सेवा नहीं समझता। साहित्य-रुपया पैसा पैदा करने की चीज़ नहीं है; वह जति के विचारों को पलटने का मंत्र है। आज यहां बड़े

बड़े साहित्यिक सज्जन और कविगण एकत्र हैं, उनके सामने मेरा यही नम्र निवेदन है कि, आप लोग जातीय आवश्यकता को देख कर साहित्य-निर्माण करें। जाति में ऐसा साहित्य उत्पन्न कर दें जिससे युग-परिवर्तन हो। आज ऐसे ही युग-परिवर्त्तनकारी साहित्य की आवश्यकता है; और ऐसा ही साहित्य इतिहास में स्थिर रहेगा। तुलसी, सूर और कबीर इत्यादि ने हिन्दू-जीवन पर जो प्रभाव डाला है, वह सर्वथा अमिट है—आज भी हमारे सामाजिक जीवन पर उनका प्रभाव मौजूद है।

साहित्य से जीविका चलाना ही साहित्य-सेवियों का मुख्य काम नहीं है। जीविका के लिए और भी अनेक उद्योग तथा व्यवसाय हैं। साहित्य-सेवा समाज-सेवा के भाव से ही होनी चाहिये। उसके साथ यदि साहित्य जीविका का भी साधन हो जाय तो उचित है। किन्तु केवल जीविका की दृष्टि से क़लम चलानेवाले मनुष्य प्रायः साहित्यिक आदर्श भ्रष्ट कर देते हैं। उनके लेख में ऊँची शक्ति कदापि उत्पन्न नहीं हो सकती। साहित्य की गति देश की गति के साथ-साथ चलनी चाहिये। आज मैं आप सब सज्जनों का एक ही बात पर ध्यान दिलाना चाहता हूं और वह यह है कि आप जो कुछ साहित्य तैयार करें, वह देश की वर्तमान अधोगति को पलटने के लिये हो। पुस्तकों का लिखना, कविता का रचना और तसवीरों का खींचना वह किस काम का जिससे हमारे जातीय जीवन पर सुन्दर प्रभाव न पड़ा? यदि हमारा सामाजिक जीवन वैसीही दासता में जकड़ा रहा, बेड़ियों में बँधा रहा, तो वह साहित्य किस काम का? तैंतीस करोड़ जनता की दुर्दशा को पलटना आपके ही हाथ में है। आज देश की क्या दशा है? धर्म बिगड़ा हुआ है, चारों ओर अधर्म छाया हुआ है। यह आप के हाथ में है कि इस युग को पलट दें। जब कभी युग का परिवर्तन हुआ है, सजीव साहित्य के द्वारा ही हुआ है। सृष्टि के आदि से यह क्रम चला आया है। आज फिर वही काम आपके सिरपर है। यह कोई नवीन काम नहीं है। इतिहास इसका साक्षी है। अपने प्राचीन साहित्य की ओर दृष्टि डालिये।

एक भगवान् कृष्ण को ही ले लीजिये। उनके जीवन के रहस्य को देखिये। युवावस्था से ही उन्होंने उस समय की कुप्रथाओं के दूर करने में कितना क्रान्ति-कारी काम किया था! बड़े होने पर उन्होंने गीता के उपदेश द्वारा रणक्षेत्र की सूरत में रण के सिद्धान्तों में ही अमिट परिवर्तन कर दिया। अशोक के शासन में भी साहित्यकों ने ही जाति के जीवन में परिवर्तन किया था। आप को भी आज अपने साहित्य से ऐसा ही काम लेना है। साहित्य-निर्माण करते समय आज आप सिर्फ़ एक ही दृष्टि रखें और वह दृष्टि यही है कि जब आप कोई पुस्तक लिखने बैठें, इस उद्देश्य को सामने रख लें कि किस प्रकार यह पुस्तक हमारी जातीयता की बेड़ियों के काटने का कारण हो। काव्य की भी रचना इसी एक उद्देश्य को सामने रख कर होनी चाहिये। बस, इसी एक बात की ओर मैं आप लोगों का ध्यान अपने टूटे-फूटे शब्दों में दिलाना चाहता हूं।

आजकल किताबों की कमी नहीं है, लोग किताबें बहुत लिखते हैं; पर अमली जीवन की धारा में मिलकर नहीं लिखते। अमली जीवन के बिना लेख लिखना व्यर्थ है। आपका काम केवल लेख से ही समाप्त नहीं हो जाता। आपको जनता पर अपने लेख के द्वारा प्रभाव डालना है। पर यह काम तभी होगा, जब आप अपना जीवन जातीयता में मिला दें। अमली कार्य-क्षेत्र में यदि लेखकगण उतर आवें, तो देश का उद्धार हो जाय। आजकल लेखक जो कुछ लिखते हैं, उसमें उनका निज का हृदय बहुत कम रहता है। लेख और हृदय में आज अन्तर है। लेखक अपनी ज़िम्मेदारी नहीं समझते। आजकल लोग टेबल-कुर्सी पर बैठ कर लेख लिखना जानते हैं, गद्दी और मसनद लगा कर लिखते हैं। परन्तु युग-परिवर्तनकारी लेख इस प्रकार से नहीं लिखे जा सकते। बाल्मीकि, व्यास और कृष्ण ने इस प्रकार गद्दी-मसनदों पर बैठकर अपने लेख नहीं लिखे थे। भगवान् कृष्ण ने स्वयं युद्ध-क्षेत्र में अपना सब से ऊंचा और गुह्य उपदेश दिया था। इस बात की आवश्यकता है कि लेखकगण मैदान में आवें, देश की दशा का अनुभव

करें, जनता के साथ उनके कष्टों का स्वयं अनुभव करें, तब वे जो कुछ लिखेंगे उसका कुछ और ही प्रभाव पड़ेगा। लेखक लोग जब 'आप-बीती' कहेंगे, तब वह कुछ और ही बात होगी। घर में बैठ कर अख़बार-नवीसी से काम नहीं चलेगा। स्वयं अपना असली जीवन बनाना होगा। जातीयता की लहर में अपने जीवन को मिलाना होगा। चन्दकवि ने वीररस की कविता की है; पर क्या मसनदों पर बैठकर? नहीं, खड़ग धारण कर। भूषण कवि स्वयं शिवाजी के साथ युद्ध-क्षेत्र में उपस्थित रहते थे। फ्रांस और जर्मनी के पिछले घोर समर में फ्रांस के प्रसिद्ध-प्रसिद्ध लेखकों ने युद्ध के समय अपनी क़लम रख दी थी; और युद्धस्थल में कूद पड़े थे। जर्मनी के बड़े बड़े पंडित और लेखक भी युद्ध में गये थे। हमारे देश के पंडितों की तरह उन्होंने अपने उपदेश नहीं दिये। हमारे चश्माधारी लेखकों की ही भांति उन्होंने लेख नहीं लिखे। जब मौक़ा आया, उन्होंने क़लम फेंक दी, उसके बदले तलवार खींची, बन्दूक उठायी और शत्रु के हृदय पर गोलियों से लेख लिखने को तैयार हुए। यह उदाहरण देखिये। और हम लोग अभी तरजुमा करने और नक़ल करने में ही लगे हैं। नकल में क्या धरा है? हृदय से जो लेख लिखा जाता है, उसी का कुछ प्रभाव पड़ता है; और हृदय से लेख असली जीवन के बिना निकल नहीं सकता। रूस के प्रसिद्ध लेखक टॉलस्टाय का नाम हमारे देश में विख्यात है। उन्होंने भी रणभूमि में जाकर ही लेख लिखने की शिक्षा ली थी। ग्रामीणों की तरह जीवन व्यतीत करके गरीबों के कष्ट का अनुभव किया था, और तब अपने लेख लिखे थे। ऐना-तोले फ्रांस का अभी देहान्त हुआ है। वह फ्रांस देश के बहुत ऊंचे लेखकों में हुए हैं, हिन्दी के समाचारपत्रों में भी उनका जीवन-चरित्र निकला है। जर्मनी और फ्रांसके महायुद्ध के समय वह बहुत वृद्ध थे, उनकी अवस्था लगभग ७५ वर्ष की थी। किन्तु युद्ध आरंभ होने पर उन्होंने अपनी गवर्नमेंट से प्रार्थना की कि उनको समर-भूमि में सिपाही बन कर जाने की आज्ञा दी जावे। फ्रांस की

गवर्नमेंट ने उनकी अवस्था को देख और उनके जीवन को अनमोल समझ उन्हें लड़ाई में जाने की आज्ञा नहीं दी। किन्तु फ्रांस की जनता पर, वहां के वीर्यवान् युवकों पर, इस घटना का क्या प्रभाव पड़ा होगा, इसका तो आप अनुमान कर सकते हैं। ऐसे सजीव पुरुष की वाणी और लेख में क्या स्वाभाविक शक्ति रही होगी, इसका भी आप कुछ अनुमान कर सकते हैं। आप हिन्दी-साहित्य-सेवियों से भी मेरा यही नम्र निवेदन है कि आप लोग अपने जीवन को असली बनावें। तभी हमारे साहित्य में देश और काल के अनुकूल शक्ति उत्पन्न होगी।

मैं देखता हूं कि आजकल हमारे देश के कुछ ऐसे साहित्य-सेवी, जिनका ऊंचा पद है, Art और Culture पर बहुत ज़ोर देते हैं; कुछ अंगरेज़ लेखक भी इसी की शिक्षा हम हिन्दुस्तानियों को दिया करते हैं। Art और Culture कला और शिष्टता मनुष्य के सच्चे भूषण हैं, भारतवासी उनका मूल्य पुराने समय से जानते हैं, किन्तु वे 'मनुष्यत्व' का स्थान नहीं ले सकते। वे मनुष्य के भूषण हैं, 'मनुष्यत्व' नहीं। आजकल तो यह कहा जाता है कि मनुष्यत्व के स्थान पर हम Culture रख रहे हैं—यह अस्वाभाविक है और इसमें तो स्पष्ट हानि ही है। इससे हमारी जाति में और नामर्दी आती है, असली जीवन से अलग होकर कला और कलचर की दुहाई विष से भरी है। और हमें ऐसा कलचर नहीं चाहिए जिससे हमारे पुंसत्व का नाश हो। मेरा निवेदन है कि इस मर्म की बात पर आप सदा ध्यान रखें।

आजकल लोगों को पुस्तकों के पढ़ने का चाव बहुत बढ़ गया है; परन्तु मेरी तो धारणा है कि बहुत पुस्तकों का पढ़ना कोई 'पुरुषार्थ' का काम नहीं है। मैं यह नहीं कहता कि पुस्तक पढ़ना कोई बुरा काम है; परन्तु पुस्तक विचार के लिए पढ़ना चाहिए, व्यसन के लिए नहीं। शराब, ताश, या शतरंज की तरह पुस्तक पढ़ना भी कभी-कभी केवल व्यसन हो जाता है, यह पुस्तक पढ़ने का दुरुपयोग है। और विचारों की प्रौढ़ता से उसका सम्बन्ध नहीं

रह जाता। वाल्मीकि, कालिदास या शेक्सपियर बहुत पुस्तकें पढ़ पढ़ कर साहित्यिक नहीं बने थे। रेल के बुकस्टाल से पुस्तकें खरीद कर वे रास्ते भर पढ़ते नहीं जाते थे। उन्होंने किसी और ही मार्ग से अपना साहित्यिक अनुभव बढ़ाया था। आज कल जो ये बहुत सी पुस्तकें निकल रही हैं, उनसे आप यह कभी आशा न कीजिए कि आप बहुत विद्वान् हो जायँगे। ऐसा पुस्तक-पठन न कीजिए, जिससे समय नष्ट हो और आपको अपने जीवन के लिए कोई मसाला भी न मिले। वास्तव में, हमें साहित्य और जीवन का मेल मिलाना है; हमें ऐसा साहित्य बनाना है, ऐसे साहित्य का प्रचार करना है जो हमें देश को उच्च आदर्श की ओर ले चले।

एक बात मुझे और कहनी है। भाषा का महत्व अभी हम लोगों ने समझा नहीं है। भाषा ही राष्ट्र का जीवन है। भाषा ही को लेकर विदेशों में अनेक राष्ट्रीय आन्दोलन खड़े हुए हैं। आयर्लैंड की सिन-फ़िन पार्टी भाषा के ही प्रश्न को लेकर बनी है। हमको भी देश के जीवन के लिये सारे भारतवर्ष भर में एक राष्ट्रीय भाषा हिन्दी का प्रचार करना है। यह काम एक हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन ने हा किया है। बहुत ही थोड़े रुपये से बहुत बड़ा काम—इतना और किसी वर्तमान संस्था ने नहीं किया है। पिछले पन्द्रह वर्षों में इस संस्था ने अपने प्रचार विभाग और परीक्षाओं द्वारा हिन्दी का युग बदल दिया है। सम्मेलन की परीक्षाओं ने हिन्दी-साहित्य-सम्बन्धी रुचि बदल दी है, एक नवीन साहित्यिक जागृति उत्पन्नकर दी है। पहले राष्ट्रीय भाषा के विषय में लोगों के मन में बड़ी शंका रहती थी; पर अब सारे देश में यह एक मानी हुई बात है कि हिन्दी राष्ट्रीय भाषा है। इसके पहले अँगरेज़ी पढ़े-लिखे लोग हिन्दी का नाम सुन कर मुंह बनाते थे; परन्तु अब तो बड़े बड़े नेताओं ने भी हिन्दी भाषा का महत्व स्वीकार कर लिया है। किन्तु अभी आप लोगों को बहुत कुछ करना है। अभी भारतवर्ष के कुछ ऐसे प्रान्त बाक़ी हैं, जहां हिन्दी का काम नहीं हुआ है। जबतक यह सवाल पूरा-पूरा हल नहीं हो जाता, तब तक स्वराज्य दूर है। महात्मा गान्धीजी ने एक

बार मुझे अपने एक पत्र में लिखा था कि, "हिन्दी भाषा का प्रश्न स्वराज्य का प्रश्न है।" जब तक आप लोग भाषा का मसला हल नहीं कर लेते, तब तक स्वराज्य का प्रश्न हल होना कठिन है। राष्ट्रीय भाषा का ही यह एक ऐसा प्लेटफार्म है जिस पर हर प्रान्त के लोग और हर धर्म के लोग हिन्दू, मुसलमान, ईसाई खड़े हो सकते हैं। भाषा का यह महान् राष्ट्रीय कार्य हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन ने ही किया है। वास्तव में, हम जातीयता की नीव डालने का कार्य कर रहे हैं। इसलिए आप सब लोगों का कर्त्तव्य है कि इस की सहायता करें, इसके काम को देखें। जहां कोई हिन्दी का नाम भी नहीं जानता था, वहाँ इसने हिन्दी की पुकार पहुँचाई है। मदरास में हिन्दी-प्रचार का जो कार्य इसने थोड़े दिन में ही कर दिखलाया है, उसका बहुत अच्छा परिणाम अब वहाँ दिखलाई पड़ रहा है। हज़ारों मदरासी भाइयों ने हिन्दी की शिक्षा प्राप्त की है; और बराबर अब भी सीख रहे हैं। कोकनाड़ा में कांग्रेस के स्वागताध्यक्षने भरी सभा में हिन्दी में ही अपना भाषण दिया था। भाइयो, सोचिये तो सही, हिन्दी के लिए यह कैसी सौभाग्यसूचक और आशाजनक बात है कि, एक मदरासी भारतवर्ष की राष्ट्रीय महासभा में, बंगाली, गुजराती, महाराष्ट्र इत्यादि सभी अँगरेज़ीदां लोगों के बीच में हिन्दी में भाषण कर रहा है! किस चतुरता से किस सहानुशीलता से, किस कठिनता से, यह पौधा वहाँ रोपा गया है, सींचा गया है, इसका अनुमान आप स्वयं वहां जाकर और देख कर सकते हैं। अब तुरन्त हिन्दी को आसाम, बंगाल, सिंध, उड़ीसा इत्यादि अन्य सब प्रान्तों में अच्छी तरह फैलाना है। इसके लिए आप सब लोगों की सहायता चाहिए।

यहां आकर तीन दिन तो हम सभी हिन्दी के प्रचार करने और उसके साहित्य को उन्नत करने की चर्चा करते हैं, पर हमारा कर्त्तव्य यह है कि हम बराबर इसके लिए उद्योग करते रहें, घर जा कर इसको भूल न जावें। भाइयो, यदि जातीयता के काम में आप लोग कुछ सहायता करना चाहते हैं, तो इस यज्ञ में अपने-अपने भाग की

आहुति डालिये। अपने सम्पादक भाइयों से भी मेरी यह अपील है कि आप लोग हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के काम में विशेष रुचि दिखावें। आप लोगों के हाथ में बड़ी भारी शक्ति है। आप लोग यदि अपने-अपने ग्राहकों से सम्मेलन के लिए अपील करें, तो सहस्रों रुपया बिना कठिनता के एकत्र हो सकता है। आप लोग यदि इसके लिए प्रतिज्ञा कर लें, तो साहित्य-सम्मेलन का कार्यभार बहुत हलका हो जाय। इसी प्रकार प्रत्येक साहित्य-सेवी का कर्त्तव्य है कि वह जहां रहे सम्मेलन को सहायता पहुँचाने की कुछ चिन्ता करता रहे। मुझे आज यही दो बातें आप से करनी थीं।

अन्य भाइयों और बहनों से भी मेरा एक निवेदन है। आप सब लोग भी इस महान् कार्य में हाथ बटाएं। मैंने सुना है कि लंका द्वीप में एक प्रथा है कि, जब देव-मंदिर की ओर हाथ में सुमनों की डाली लिये हुए देवाराधना करनेवाले भक्तजन जाते हैं तो रास्ते के वे लोग, जो किसी कारण से मंदिर तक नहीं जा सकते, उस डाली को श्रद्धा से छू लेते हैं और इस प्रकार अपने को पुण्य का भागी बनाते हैं। मेरा आप से निवेदन है कि, आइए हमारे साथ पुजारी बनकर सरस्वती-मंदिर की ओर हमारी पंक्ति में मिलकर चलिये। किन्तु यदि आप हमारी आगे बढ़ती हुई पंक्ति में नहीं मिल सकते तो इन सरस्वती-उपासकों की डालियों में कुछ सुन्दर फूल लाकर डाल जाइए। यदि फूल भी नहीं ला सकते, तो सुमन-भरी इन पवित्र डालियों को छू कर ही अपने को कृतार्थ कीजिए।"*

टंडनजी की वक्तृता का उपस्थित हिंदी-साहित्य-सेवी जनता पर बड़ा ही गहरा प्रभाव पड़ा।

---

इसके उपरांत स्थायी समिति के पदाधिकारियों का चुनाव हुआ। पदाधिकारियों की सूची नीचे दी जाती है—

सभापति—श्रीयुत पं० माधवराव जी सप्रे, तात्यापारा, (रायपुर) सी. पी.

* श्रीयुत पंडित लक्ष्मीधर वाजपेयी की कृपा से प्राप्त।

उपसभापति श्रीयुत—वेदतीर्थ पं० नरदेव जी शास्त्री, (मोहिनी भवन) देहरादून

" " बा० पुरुषोत्तमदास जी टंडन, प्रयाग

प्रधान मन्त्री " पं० रामजीलाल जी शर्मा, कर्नलगंज, प्रयाग

परीक्षा मन्त्री " अध्यापक पं० रामरत्न जी, प्रयाग

प्रचार मन्त्री " पं० लक्ष्मीधर जी वाजपेयी, दारागंज, प्रयाग

प्रबन्ध मन्त्री " चतुर्वेदी पं० द्वारकाप्रसाद जी शर्मा, दारागंज, प्रयाग

अर्थ मन्त्री " पं० लक्ष्मीनारायण जी नागर बी. ए. एल. एल. बी., प्रयाग

आयव्यय-परीक्षक" बा० लालविहारीलाल जी, बी. ए. एल. एल. बी., सतना

## गत सम्मेलनों के सभापति

१ श्रीयुत पं० मदनमोहन जी मालवीय C/o हिन्दू-यूनिवर्सिटी, काशी

२ " स्वामी श्रद्धानन्द जी, १७ नया बाज़ार, देहली

३ " पं० श्रीधर जी पाठक, लूकरगंज, प्रयाग

४ " बा० श्यामसुन्दरदास जी बी. ए. नागरी-प्रचारिणी-सभा, काशी

५ " साहित्याचार्य पाण्डेय रामावतार जी शर्मा एम. ए. पटना कालेज, पटना

६ " महात्मा मोहनदास-करमचन्द जी गांधी, सत्याग्रहाश्रम, अहमदाबाद

७ " पं० जगन्नाथ प्रसाद जी चतुर्वेदी, ६० सीताराम घोष-स्ट्रीट, कलकत्ता

८ " बा० पुरुषोत्तमदास जी टंडन, प्रयाग

९ " बा० भगवानदास जी एम. ए., सेवा-आश्रम, सिगरा, काशी

१० " बा० राजेन्द्रप्रसाद जी, एम. ए. एम. एल., पटना

११ " पं० अयोध्यासिंह जी उपाध्याय, सेन्ट्रल-हिन्दू-कालेज, बनारस

## भूतपूर्व प्रधानमन्त्री

१ श्रीयुत प्रो० ब्रजराज जी, एम. ए. बी. एस. सी., एल. एल. बी., प्रयाग

### सदस्य

## संयुक्त-प्रान्त

१ श्रीयुत वियोगी हरि जी, प्रयाग

२ " बा० शालिग्राम जी वर्मा, एम. ए. ७६ कर्नैलगंज, प्रयाग

३ " पं० इन्द्रनारायण जी द्विवेदी, किसान-सभा, प्रयाग

४ " बा० केदारनाथ जी गुप्त, हेडमास्टर दारागंज हाईस्कूल, दारागंज, प्रयाग

५ " पं० देवीप्रसाद जी शुक्ल बी. ए. "हिन्दू बौर्डिङ्ग हाउस", कटरा, प्रयाग

६ " बा० शीतलासहाय जी, प्रान्तीय कांग्रेस-कमेटी, प्रयाग

७ " बा० गंगाप्रसाद जी एम. ए. हेडमास्टर डी. ए. वी. हाई स्कूल, प्रयाग

८ " पं० जगन्नाथप्रसाद जी शुक्ल, दारागंज, प्रयाग

९ " पं० गिरिजादत्त जी शुक्ल बी. ए. सम्पादक "मनोरमा" बेलवेडियर प्रेस, प्रयाग

१० श्रीयुत—पं० राजमणि जी त्रिपाठी, तहसील बाँसगाँव, ज़िला गोरखपुर

११ " पं० श्रीनिवास जी चतुर्वेदी, एम. ए. हेडमास्टर ज्ञानकचन्द हाईस्कूल, मेरठ

१२ " बा० सूर्यनारायण जी अग्रवाल, बी. ए. एल. एल. बी., नागरीप्रचारिणी-सभा, इटावा
१३ " बा० मुकुन्दीलाल जी बैरिस्टर, बार एटला, देहरादून
१४ " गोस्वामी पं० छबीलेलाल जी, वृन्दावन ( मथुरा )
१५ " पं० पद्मसिंह जी शर्मा, नायकनगला, चाँदपुर, बिजनौर
१६ " पं० विश्वेश्वर दयालु जी चतुर्वेदी, छिलीईंट, आगरा
१७ " पं० ऋषीश्वरनाथ 'रैना' उपसम्पादक "आज", काशी
१८ " लाला भगवानदीन जी, हिन्दू-विश्वविद्यालय, काशी
१९ " बा० शिवप्रसाद जी गुप्त, सेवाउपवन, नगवा, काशी
२० " पं० रामनारायण जी मिश्र बी. ए., सेन्ट्रल-हिन्दू हाई-स्कूल, कामाच्छा, काशी
२१ " पं० ज्वालादत्त जी शर्मा, किसरौल, मुरादाबाद
२२ " पं० बाबूराम जी शर्मा, नागरी-प्रचारिणी-सभा, बुलन्द-शहर
२३ " पं० श्रीनारायण जी चतुर्वेदी, एम. ए. एल. टी. प्रिंसि-पल कान्यकुब्ज-कालेज, लखनऊ
२४ " पं० दुलारेलाल जी भार्गव, सम्पादक "माधुरी", लखनऊ
२५ " पं० श्यामबिहारी जी मिश्र, गोलागंज, लखनऊ
२६ " पं० भागीरथप्रसाद जी दीक्षित C/o नागरी-प्रचारिणी-सभा, काशी
२७ " साहित्यरत्न पं० श्रीकृष्णदत्त जी पालीवाल, एम० ए०, एम० एल० सी०, बाग मुजफ्फर खाँ, आगरा
२८ " गणेशशङ्कर जी विद्यार्थी सम्पादक "प्रताप", कानपुर
२९ श्रीयुत पं० रामचन्द्र जी वर्मा, साहित्य-रत्नमाला, काशी
३० " कुंवर हरप्रसाद सिंह जी वकील, बाँदा

## विहार और उड़ीसा

१ श्रीयुत बा० बदरीनाथ जी वर्मा, प्रोफ़ेसर राष्ट्रीय विद्यालय, दीघाघाट, पटना
२ " पं० राधाकृष्ण जी झा एम. ए. पटना कालेज, पटना
३ " पं० चन्द्रशेखर जी शास्त्री "ओझा बन्धु-कार्यालय", पटना
४ " बा० सूर्यप्रसाद जी महाजन, श्रीमन्नूलाल लाइब्रेरी, गया
५ " कुमार गंगानन्द सिंह जी, एम. एल. ए., श्रीनगर, पूर्निया
६ " लतीफ़हुसेन जी, कदम्बकुञ्ज, मुजफ़्फ़रपुर
७ " मौलवी मीर मुहम्मद मूनिस, मुहल्लागंज नं० २, बेतिया
८ " पं० रामधारीप्रसाद जी, विहार-प्रान्तीय-हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, मुज़फ्फरपुर
९ " बा० साँवलिया विहारीलाल जी वर्मा, बी. ए. वकील, मथुरा-भवन, छपरा
१० " बा० शिवपूजन सहायजी C/o माधुरी, कार्यालय, लखनऊ
११ " बा० रामानन्द सिंह जी वकील, छपरा
१२ " बा० नारायणप्रसाद जी, कोआपरेट-वैंक, सीतामढ़ी
१३ " बा० रघुवीर नारायण जी, प्राइवेट सेक्रेटरी, बनैली राज्य
१४ " बा० रामेश्वरीप्रसाद जी, नागरी-प्रचारिणी-सभा, बाढ़, पटना

## मध्यप्रदेश

१ श्रीयुत पं० नर्मदाप्रसाद जी मिश्र बी. ए. दीक्षितपुरा, जबलपुर
२ " रायसाहब पं० रघुवरप्रसाद जी द्विवेदी, हितकारिणी-हाईस्कूल, जबलपुर
३ " सेठ जमनालाल जी बजाज, वर्धा
४ " पं० लोचनप्रसाद जी पाण्डेय, बालपुर, चन्द्रपुर, विलासपुर
५ " सैयद अमीर अली जी "मीर" पो० बिटकुली हैंडलूम-फेकृरी, via भाटा पारी सी. पी. B.N. Ry.

६ श्रीयुत पं० कामताप्रसाद जी गुरु, मेल नार्मल-स्कूल, जबलपुर
७ " पं० गंगाप्रसाद जी अग्निहोत्री, सम्मेलन-पुस्तकालय, बल्देवबाग़, जबलपुर
८ " रायबहादुर बा० हीरालालजी बी. ए. कटनी, जबलपुर
९ " पं० दयाशंकर दुबे, ९ गंगनीसुकुल तालाब, लखनऊ
१० " पं० बालमुकुन्द जी त्रिपाठी, बल्देवबाग़, जबलपुर
११ " पं० माखनलाल जी चतुर्वेदी, बानापुरा G. I. P. Ry

## बंगाल

१ श्रीयुत पं० लक्ष्मण नारायण जी गर्दे, सम्पादक "भारतमित्र", ३ डेकर्स लेन, कलकत्ता
२ " पं० बैजनाथजी चतुर्वेदी, ३७ ए. इजरास्ट्रीट, कलकत्ता
३ " सेठ घनश्यामदास जी बिडला, १३७ केनिंग स्ट्रीट, बिडला ब्रदर्स लिमिटेड, कलकत्ता
४ " बा० गोकुलचन्द जी रईस, ३० बड़तल्ला स्ट्रीट, कलकत्ता
५ " पं० झाबरमल्ल जी शर्मा ८/१ रामकुमार दीक्षित लेन, कलकत्ता
६ " बा० महादेवप्रसाद जी सेठ, "मतवाला" आफ़िस, २२ शङ्करघोष लेन, कलकत्ता
७ " पं० अम्बिकाप्रसाद जी बाजपेयी, "स्वतन्त्र" कार्यालय, मछुआ बाज़ार स्ट्रीट, कलकत्ता
८ " पं० नन्दकुमार देव शर्मा, पो० बक्स ६७०४ बड़ा बाज़ार, कलकत्ता
९ " बा० यशोदानन्द जी अखौरी, भारतमित्र-कार्यालय, ३ डेकर्स लेन, कलकत्ता
१० " बा० गंगाप्रसाद जी भोतिका, कुकबिलडिंग, हेरिसनरोड, कलकत्ता
११ " पं० माधव शुक्ल जी, ६४ तूलापट्टी, कलकत्ता

१२ श्रीयुत बा० गोबर्धनदास जी कावरा, बाँगरा, बंगाल

## मध्यभारत और राजपूताना

१ श्रीयुत रायबहादुर पं० गौरीशङ्कर हीराचन्द जी ओझा, राजपूताना म्यूज़ियम, अजमेर

२ " एच. पी. शर्मन, करौलीराज्य

३ " बा० चाँदकरण जी शारदा "मदार दरवाज़ा" अजमेर

४ " पं० श्यामसुन्दर जी शर्मा, डाइरेक्टर पब्लिक इन्स्ट्रक्शन, जयपुर

५ " सरदार नर्मदाप्रसाद सिंह जी, प्रयाग

६ " डाक्टर सरजूप्रसाद जी, छावनी, इन्दौर

७ " विष्णुदत्त जी बी. ए., दर्बार हाईस्कूल, बूंदी

८ " लालचन्द जी सेठी, "विनोद भवन", झालरापाटन

९ " पं० गोविन्द नारायण जी शर्म्मा असोपा, बी. ए., विद्याभूषण, दधिमती-दीवान, व सम्पादक "दधिमती" जोधपुर

१० " भट्ट पं० मथुरानाथ जी शास्त्री, कविमण्डल, नागरपाड़ा, जयपुर

११ " पं० रामप्रसाद जी त्रिपाठी बी. ए., इन्सपेक्टर आफ़ स्कूल्स, बीकानेर

## पञ्जाब और पश्चिमोत्तर प्रान्त

१ श्रीयुत पं० हरमुकुन्द जी शास्त्री, जम्बू

२ " महात्मा हंसराज जी, डी. ए. वी. स्कूल, लाहौर

३ श्रीयुत गोपाल जी, मुल्तान

४ " पं० देवराज जी, व्यवस्थापक—कन्यामहाविद्यालय, जालन्धर

५ " बा० खुशालचन्द जी, सम्पादक "मिलाप", लाहौर

६ " महामहोपाध्याय पं० गिरिधर शर्माजी चतुर्वेदी, प्रिंसिपल सनातन-धर्म-संस्कृत-कालेज, लाहौर

७ " पं० चेतरामजी कन्या-महाविद्यालय, जालन्धर

८ " पं० जयचन्द्र जी, विद्यालङ्कार, प्रो० क़ौमी कालेज, लाहौर

९ " पं० उदित मिश्र जी, माडर्नस्कूल, दरियागंज, दिल्ली

१० " केदारनाथ जी गोयनका, मारवाड़ी-पुस्तकालय, दिल्ली

## बम्बई

१ श्रीयुत पं० हरिभाऊ जी उपाध्याय, हिन्दी-नवजीवन-कार्यालय, अहमदाबाद

२ " पं० बनारसीदास जी चतुर्वेदी, सत्याग्रह-आश्रम-साबरमती, अहमदाबाद

३ " मास्टर आत्माराम जी, शिक्षा-विभाग, बड़ौदा

४ " सेठ श्रीनिवास जी बजाज, अध्यक्ष—वेंकटेश्वर-प्रेस, खेतवाड़ी, गिरगाँव, बम्बई

५ " जयरामदास, दौलतराम, हैदराबाद ( सिंध )

६ " डाकूर चौयथ राम, हैदराबाद ( सिंध )

७ " देवीदास जी गाँधी, सत्याग्रह-आश्रम, अहमदाबाद

## मद्रास

१ श्रीयुत पं० हरिहर शर्मा जी, हिन्दी-प्रचार-कार्यालय, ट्रिप्लीकेन, मदरास

२ " सञ्जीवो-कामत, वकीलचैम्बर्स, मद्रास-हाईकोर्ट, मद्रास

३ " के० भाष्यम्, वकील हाईकोर्ट, मद्रास

## स्थायी सदस्यों द्वारा चुने गये

( नियमावली के नियम १८ (इ) के अनुसार )

१ श्रीयुत बा० रामदास जी गौड़, पियरीकलां, काशी

२ " सेठ जमनालाल जी बजाज, वर्धा

३ श्रीयुत—युगुलकिशोर बिडला, बिडला-ब्रदर्स-लिमिटेड, १३७ केनिङ्ग-रोड, कलकत्ता

४ " राजकुमार रणञ्जयसिंह जी वर्मा, अमेठी राज्य, पोस्ट रामनगर, ज़िला सुल्तानपुर

### विशेष

१—परमहंस बाबा राघवदासजी, गोरखपुर

---

आय-व्यय का चिट्ठा उपस्थित होने के बाद चन्दे के लिए अपील की गयी। छोटी-छोटी रक़मों के अतिरिक्त सहायता के अर्थ निम्नलिखित वचन मिले—

५०१) एक हिन्दी-हितैषी सज्जन का गुप्तदान
५०१) महंत लक्ष्मणदासजी
२५०) लाला बलवीरसिंहजी
२०१) महंत परशुरामजी
१०१) पंडित भोलानाथजी
१०१) डी० ए० बी० कालेज, देहरादून
१०१) एक सज्जन का गुप्तदान

श्रीमती पार्वती देवीजी के विशेष उद्योग से उपस्थित महिलाओं से ६१।)॥। प्राप्त हुआ।

श्रीमती यशोदा देवीजी ने 'बाल-साहित्य' के निमित्त ५०) प्रदान किया।

छोटी-बड़ी सब रक़में मिलाकर २१७३।)॥। चंदे में आया।

इसके बाद अधिवेशन ३ घंटे के लिए स्थगित किया गया। रात को ६ बजे से फिर कार्यारंभ हुआ। स्वागत-कारिणी समिति के अध्यक्ष ने सभापति महोदय एवं सम्मेलन के सहायक स्थानीय सज्जनों को धन्यवाद दिया। परमहंस बाबा राघवदासजी ने समुपस्थित प्रतिनिधियों की ओर से सभापति महोदय को धन्यवाद दिया।

तदनंतर सभापति ने अपना अंतिम भाषण इस प्रकार किया—

"पूज्य माताओ और मेरे प्यारे भाइयो, सम्मेलन का अधिवेशन जो दो दिनों तक होता रहा, उसका यह अन्तिम दृश्य है। आज

सम्मेलन ने कई रूप बदले हैं। इसका सब लोग अनुभव कर रहे होंगे। सामने आपको नाटक का रंगमंच, दृश्य देखने के लिए, आकर्षित कर रहा है, जिसके लिए आप सब लोग उत्सुक हो रहे होंगे। आप यह भी चाहते होंगे कि, मैं इस समय कोई गम्भीर साहित्य की बात आपको बतलाऊंगा, परन्तु इस विषय में आपको निराश ही होना पड़ेगा, क्योंकि इस समय मैं कोई विशेष लम्बा चौड़ा भाषण नहीं कर सकता। कल मैंने आपसे कहा था कि, सम्मेलन के अन्तिम दिन मैं आपको कुछ सुनाऊंगा, परन्तु अब तक मेरे मस्तिष्क में कोई सन्देश या कोई ऐसी नवीन बात नहीं आई कि जिसे मैं आप के सम्मुख उपस्थित कर सकूं। हां, मुझे इस बात का निस्सन्देह हर्ष है कि, जो कुछ मैं कहना चाहता था उसका अधिकांश भाग टंडनजी ने अपने भाषण में कह दिया है। टंडनजी ने जो बातें बतलाई हैं, वही हम सब का कर्त्तव्य है, और मैं तो उसी भाव को लेकर सदैव अपना कार्य करता चला आया हूं और जीवन भर करता रहूंगा। उसी बात को बारबार कहना पिष्ट पेषण होगा।

मेरा हृदय फूला नहीं समाता, जब कि मैं देखता हूं कि—नाटक के ही बहाने सही—इस समय हज़ारों की तादाद में यहाँ लोग एकत्रित हुए हैं। इससे जान पड़ता है कि, राष्ट्रभाषा के लिए हम अपना सुख त्याग करने को तैयार हैं। वस्तुतः हम लोग संसार को नाटक ही समझें। जैसे नाटक के भिन्न-भिन्न पात्र रूप धर कर आते हैं और अपना कर्त्तव्य करके चले जाते हैं। वास्तव में, उनका मूल स्वरूप कुछ और ही होता है, परन्तु पराधीनता में आकर उनको दूसरे का कर्त्तव्य करना होता है। वे जिस प्रकार पराधीनता का अनुभव करते हैं, उसी प्रकार देवियो, भाइयो, आप भी इस पराधीनता का अनुभव करें, और इस बात का प्रण करें कि हम इस पराधीनता को अवश्य दूर करेंगे—इन पराधीनता की शृंखलाओं में हमको सुख नहीं मिल सकता। पराधीनता की जंजीरों को तोड़ने के लिए अनेक साधन हैं। उनमें हिन्दीभाषा का प्रचार

करना एक मुख्य साधन है। इसलिए भाइयो! आओ, हम सब लोग मिल कर इस बात का प्रण करें कि, हम राष्ट्रभाषा का झंडा भारत के कोने-कोने में फहरा देंगे। मौक़ा आ जायगा, तो हम शरीर का भी बलिदान कर देने में आगा-पीछा नहीं करेंगे। यही राष्ट्र-भाषा के नाम पर हम आप लोगों से भिक्षा मांगते हैं। परमात्मा वह दिन शीघ्र लावे, जब हम इस बात को सिद्ध कर देवें कि अब हम बहुत दिन तक इस गुलामी में जकड़े नहीं रह सकते।

आरम्भ में ही मैं कह चुका हूं कि मैं असमर्थ हूं; परन्तु फिर भी जो कुछ मेरे मन में आया, मैंने आपके सामने उपस्थित किया। अब मैं आपका अधिक समय न लूंगा। अब सिर्फ़ धन्यवाद देने का काम मेरे सामने है। सो मैं अपनी जिम्मेदारी का अनुभव करते हुए सब से पहले आप सब लोगों की तरफ़ से स्वागत-समिति को धन्यवाद देता हूं। यद्यपि धन्यवाद देने की कोई आवश्यकता नहीं है; क्योंकि सबने अपना-अपना कर्त्तव्य ही किया है—उसमें धन्यवाद की क्या ज़रूरत? फिर भी शिष्टाचारवश धन्यवाद देना मैं अपना कर्त्तव्य समझता हूं। यद्यपि इस अल्प समय के अन्दर मैं विशेष सज्जनों से परिचय नहीं कर पाया हूं, तथापि दो-तीन सज्जनों को मैं देखता रहा हूं, जो बराबर कार्य में संलग्न रहे हैं। जिनमें से एक पंडित नरदेव शास्त्री हैं, जो बराबर सम्मेलन की सफलता के लिए प्रयत्नशील रहे हैं। उनको मैं धन्यवाद देता हूं। दूसरे महन्त परशुरामजी हैं, जो रात-दिन अपने सुख को भूल कर जनतारूपी जनार्दन की सेवा करते रहे हैं। आप एक गद्दीधर महन्त हैं, परन्तु फिर भी अपने सब प्रकार के अभिमान और आराम को छोड़ कर रात-दिन आपने प्रतिनिधियों की सेवा की है। इनके सिवाय जिन-जिन लोगों ने किसी-न-किसी रूप में स्वागत-समिति को सहायता पहुँचाई है, उन सब को मैं हृदय से धन्यवाद देता हूं।

सामुदायिक कार्यों में छोटे-छोटे बालकों का कैसा उपयोग होता है, उसका स्वरूप मुझे यहां दिखाई दिया है। उनके कार्यों

को देख कर नवयुवकों को उनका अनुकरण करना चाहिए। इन बालकों ने बड़े उत्साह के साथ, शारीरिक सुख-दुख की परवा न करते हुए, अपने सेवा-व्रत को निबाहा है। उनके चरणों में मैं अपने प्रेम की पुष्पांजलि पहुँचाता हूं। उनके सेवा-व्रत को देख कर मुझे अपनी इस वृद्धावस्था में भी अनुपम स्फूर्ति मिलती है; और मुझे वे दिन याद आते हैं, जब कि मैं भी इसी प्रकार के सेवा-व्रत में रत रहता था। प्यारे बालको, चाहे आप यहां पर उपस्थित न हों—आप जहां-कहीं हों—आपके कानों तक मेरी यह आवाज़ पहुँचे कि आप ही भविष्य के वीर पुरुष हैं। आप भारत-माता का झंडा उठा कर अपने वीरतापूर्ण कार्यों से सारे संसार को यह दिखला देवें कि हम अपने जन्मसिद्ध अधिकार प्राप्त करके ही रहेंगे।

अब जो मैं कहूंगा, वह मेरा अन्तिम शब्द होगा। मैंने देखा है कि यह सम्मेलन कैसे ऊंचे उद्देश्य को लेकर शुरू किया गया है। सम्मेलन को जिस प्रकार जनता ने अपनाया है, उसी प्रकार नरेशों ने भी इसे अपनाया है। दिल्ली में भी मैंने इसका ऐसा ही भव्य दृश्य देखा था। वहां श्रीमान् बड़ौदा-नरेश ने सम्मेलन में पधार कर अपने थोड़े से चुने हुए शब्दों से हिन्दी-प्रेमियों को उत्तेजित किया था। उसी प्रकार आज यहाँ हमको यह देखकर परम आनन्द हो रहा है कि सम्मेलन के इस अन्तिम दृश्य में श्रीमान् नाभा-नरेश भी इसको सौभाग्यशाली बनाने के लिए उपस्थित हैं। इसलिए मैं अपने टूटे-फूटे शब्दों में आपको अत्यन्त श्रद्धा और भक्ति के साथ धन्यवाद देता हूं।

देवियो, भाइयो, सम्मेलन का कार्य करते हुए मुझसे ग़लतियां हुई होंगी। आप लोगों ने मुझ अनधिकारी को यह अधिकार दे दिया था, और आप जानते ही हैं कि अधिकार-मद बड़ा विलक्षण होता है, इसलिए यदि भूल से मैंने किसी का चित्त दुःखित किया हो, तो उसके लिए मैं हृदय से क्षमा चाहता हूं। मैंने आपकी आशा पूरी नहीं की, इसके लिए आप मुझे क्षमा करें। अब

मुझे विशेष और कुछ नहीं कहना है। इसलिए सम्मेलन के इस अधिवेशन को मैं अब समाप्त करता हूं।"*

सभापति के अंतिम भाषण के समय श्रीमान् नाभा-नरेश ने पुनर्वार पधारने की कृपा की। आगामी वर्ष के लिए वृन्दावन की ओर से श्रीयुत पंडित छबीलेलालजी गोस्वामी ने बड़े ही मधुर शब्दों में सम्मेलन को निमंत्रण दिया, जो सप्रेम स्वीकार किया गया। बलिया और रंगून की ओर से भी निमंत्रण दिया गया था। इस प्रकार सम्मेलन का कार्य १० बजे रात को निर्विघ्न और सानंद संपन्न हुआ।

स्थानीय सज्जनों ने रात को 'सूरदास' नाटक का अभिनय किया।

## कवि-सम्मेलन

तीसरे दिन सायंकाल को ४ बजे 'कवि-सम्मेलन' आरंभ हुआ। इस सम्मेलन के निर्वाचित सभापति श्रीमान् पंडित श्रीधरजी पाठक नियत तिथियों से ५-६ दिन पहले ही देहरादून से किसी आवश्यक कार्यवश चले गये थे। उनके अभाव में श्रीमान् पंडित किशोरीलालजी गोस्वामी सभापति चुने गये। पर 'ट्रेन मिस' हो जाने के कारण आप भी समय पर न पहुँच सके! अतएव कवि-सम्मेलन का साभापत्य श्रीमान् पंडित जगन्नाथप्रसादजी चतुर्वेदी को समर्पित किया गया। इस सम्बन्ध का प्रस्ताव पंडित नरदेवजी शास्त्री ने उपस्थित किया। पंडित द्वारकानाथजी रैना ने इस प्रस्ताव का अनुमोदन और पंडित ऋषीश्वरनाथजी रैना ने समर्थन किया।

कवियों की बहुत कमी थी। अस्तु, समस्या-पूर्तियां और कविताएँ पढ़ी गयीं। कविताएँ साधारण-सी थीं। न तो बाहर से ही ऊँची भावपूर्ण कविताएँ आयी थीं, और न उपस्थित कवियों की ही कोई बहुत संतोषजनक रचना थी। उर्दू-कविताएँ भी पढ़ी गयीं, जो

* श्रीयुत पंडित लक्ष्मीधरजी बाजपेयी की कृपा से प्राप्त।

आपेक्षिक दृष्टि से कुछ अच्छी थीं। मुसलमान सज्जनों ने अपनी हिन्दी-कविताएँ भी पढ़ीं। श्री पंडित द्वारकानाथजी रैना की उर्दू-कविता बहुत पसंद की गयी। मेरठ के श्री नीलांबरदत्तजी चंदोला की भी कविता अच्छी थी। रैनाजी ने, उर्दू-कवि होते हुए भी, कुछ पद्य हिन्दी में पढ़े। उर्दू में पढ़ी जानेवाली कविताओं में रैनाजी की कविता को ही अच्छा आसन मिला। रात को लगभग ९ बजे, सभापति को धन्यवाद देने के अनंतर, कवि-सम्मेलन समाप्त किया गया।

सम्मेलन का पन्द्रहवां अधिवेशन ] दिव्य देहरादून में सम्मेलन का पन्द्रहवां अधिवेशन सोत्साह सानन्द सम्पन्न हो गया। पहले कुछ काली घटाए घिरीं और आँधी के झोंके आए, पर मंगल-मूर्ति भगवान् की अमोघ अनुकम्पा से तुरन्त ही मंगलोदय की शुभ्र किरणों ने भावुकों के हृदयाकाश को आलोकित कर दिया। सम्मेलन के निर्वाचित सभापति पूज्य गोस्वामीजी महाराज, अपने चिरंजीवि पौत्र की अस्वस्थता के कारण सम्मेलन में न पधार सके। कवि सम्मेलन के सभापति पूज्य पाठकजी भी 'गृह कारज नाना जंजाला' में फंसकर अधिवेशन के तीन-चार दिन पहले ही शैल-प्रान्त से उतर आए! हिन्दी-वाटिका की आशा-लता मुरझा-सी गई। क्या वश!

'नर-चेती नहिं होत है, प्रभु चेती तत्काल'

अस्तु, यद्भाव्यम् तद्भवतु! परमात्मा की कुछ और ही इच्छा थी। सौभाग्य से मान्यवर पंडित माधवरावजी सप्रे पहुँच गये। सहृदयवर स्वागताध्यक्ष ने श्रीमान् सप्रेजी से सम्मेलन का सभापतित्व स्वीकार करने का साग्रह सविनय अनुरोध किया। भक्त-वत्सल सप्रेजी ने स्वागत-कारिणी की विनीत प्रार्थना स्वीकार कर ली। म्लान्त आशा-लता फिर से हरी-भरी हो लहराने लगी। पूज्य पाठकजी के स्थान पर हिन्दी के लब्धप्रतिष्ठ गद्य-पद्य-लेखक पंडित किशोरीलालजी गोस्वामी कवि-सम्मेलन के सभापति निर्वाचित किये गये। पर 'ट्रेन मिस' हो जाने से आप भी न पधार सके। तब परिहास-प्रिय माननीय पंडित जगन्नाथप्रसादजी चतुर्वेदी ने कवि-सम्मेलन के सभापति का आसन ग्रहण किया।

श्रद्धेय सप्रेजी के सभापतित्व में सम्मेलन जैसा चाहिये वैसा सफल हुआ। सप्रेजी के छोटे, किन्तु सारगर्भित, विनीत अभिभाषण ने गोस्वामीजी की शोचनीय अनुपस्थिति को लोगों के हृदय से बहुत कुछ भुला दिया। प्रस्ताव थोड़े किन्तु उपयोगी स्वीकृत हुए। श्रीयुक्त बाबू शिवप्रसादजी गुप्त का भारतीय इतिहास वाला प्रस्ताव तो सचमुच ही जातीय महत्व का द्योतक है। देखें, ईश्वर इस प्रस्ताव को कब कार्य में परिणत करता है। राष्ट्रभाषा के अनन्य भक्त श्री टंडनजी का भाषण भी अविस्मरणीय था। साहित्य-सेवी, देखें, टंडनजी के उन क्रान्तिकारी शब्दों को अपने हृदय में कितना स्थान देते हैं!

सम्मेलन में खूब आनन्द और उत्साह रहा। स्वागत-कारिणी समिति ने बड़ी ही योग्यता से अपना कर्तव्य पालन किया। गुरुकुल और ऋषिकुल के ब्रह्मचारियों ने सम्मेलन-कार्य में अपूर्व साहाय्य दिया, जो अनुकरणीय है।

❧❧❧
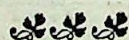
श्रीमान् नाभा-नरेश का पदार्पण ] नाभा-नरेश मालवेन्द्र श्रीमान् महाराजा रिपुदमन सिंहजी ने सम्मेलन में पधार कर समस्त हिन्दी-साहित्य-सेवियों के मनोमुकुल को प्रफुल्लित किया। श्रीमान् की दिव्य देश-भक्ति और राष्ट्रभाषा-प्रेम किसी सहृदय भारतीय से छिपा नहीं है। यहाँ हम श्रीमान् के सम्बन्ध में अधिक न लिखकर श्री टंडनजी के उन भावप्लुत शब्दों की ओर पाठकों का ध्यान दिलाते हैं, जो उन्होंने श्रीमान् का स्वागत करते समय गद्गद् वाणी से कहे थे। वे शब्द 'पत्रिका' में अन्यत्र अंकित हैं। क्या श्रीमान् का अटल हिन्दी-प्रेम अन्य भारतीय श्रीमानों को इस ओर आकर्षित न करेगा?

❧❧❧

कवि-दरबार ] देहरादून में कवि-दरबार एक अनूठी और मनोहारिणी कल्पना थी। पंजाब प्रान्तीय सम्मेलन के अधिवेशन पर इस कल्पना का उदय हुआ था। साहित्य की इस मनोरम कल्पना

का सारा श्रेय हिन्दी-हितैषी श्रीयुक्त जयचन्द्रजी विद्यालंकार को है। कवि-दरबार की कल्पना संक्षेप में यों है। स्वर्ग से महाराजा भोज आते हैं, और अपने दरबार में वर्तमान कविवरों को आमन्त्रित कर उनकी अमूल्य रचनाएं सुनाते हैं। यदा-कदा राज-पंडित कविताओं की गुण-दोष-विवेचना भी करते जाते हैं। ख़ासा मनोरंजन होता है। समालोचना का भी बढ़िया रास्ता निकल आता है। एक अनूठा दृश्य काव्य तैयार हो जाता है। यदि दो-तीन मास पहले उत्तमोत्तम कविताएँ सुनाने का आयोजन किया जाय, समालोचना भी भली भांति सोच समझ कर की जाय और पद्य पढ़ने की शैली भी मधुर और मनोहारिणी बनाई जाय, तो वास्तव में कवि-दरबार की यह कलित कल्पना कल्पनातीत हो जाय। आशा है, वृन्दावन के आगामी अधिवेशन में हम कवि-दरबार की इस कल्पना को और भी परिष्कृत रूप में देखेंगे।

प्रसंगवश दो शब्द और लिखेंगे। हमने सुना है, सुप्रसिद्ध राष्ट्र-भाषा-प्रेमी श्री जयचंद्रजी विद्यालंकार को इस दरबार के आयोजन के उपलक्ष में लाहोर के क़ौमी महाविद्यालय से अपना सम्बन्ध विच्छेद करलेना पड़ा है! दरबार में योग देनेवाले बेचारे विद्यार्थियों को भी कुछ पुरस्कार मिला है! यदि यह सच है तो क़ौमी महा-विद्यालय राष्ट्रभाषा के इस मर्म-कन्तन का क्या उत्तर रखता है?

❧❧❧
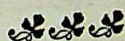
स्वागत-कारिणी समिति में श्री महन्त परशुरामजी ] सम्मेलन की स्वागत-कारिणी-समिति में ऋषीकेश के महन्त परशुरामजी ने अतिथि सत्कार का भार अपने ऊपर लिया था, जिसका उन्होंने बड़ी योग्यता, शिष्टता और सहृदयता से आद्यन्त निर्वाह किया। हमारे कुछ सहयोगियों ने, भरत मंदिर की चर्चा करते हुए, महन्तजी की इस सेवा पर टीका-टिप्पणी की है। सहयोगियों ने यह जानने की भी इच्छा प्रकट की है कि सम्मेलन ने महन्तजी की यह सेवा क्यों स्वीकार की। भरत-मंदिर के आन्दोलन से सम्मेलन का कोई सम्बन्ध नहीं है। सामाजिक, धार्मिक और राजनीतिक बातों से सम्मेलन

सदा उदासीन रहा है और रहेगा। वह तो केवल एक सरस्वती मंदिर है। वह सरस्वती के उपासकों को ही पहचानता है, दूसरों को नहीं। सरस्वती के नाते वह सामाजिक, धार्मिक एवं नैतिक बातों से निरपेक्ष रह कर सभी का आदर समान रीति से करने को प्रस्तुत है। महन्तजीने जिस श्रद्धा-भक्ति से भगवती भारती की पत्र-पुष्प से पूजा की है, सम्मेलन केवल उसे ही जानता है, अन्य किसी बातकी ओर उसका ध्यान भी नहीं जाता, अतः इस दृष्टि से वह सर्वथा निर्लेप है।
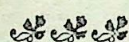
श्रीमती पार्वती देवी ] स्वनामधन्या तपस्विनी पार्वती देवी की उपस्थिति सम्मेलन के लिए सौभाग्य-सूचक थी। देवीजी ने वहाँ महिलाओं की एक सभा में राष्ट्रभाषा के सम्बन्ध की एक ओजस्विनी वक्तृता दी और सम्मेलन के लिए चन्दे की अपील कर के उपस्थित महिलाओं से ६१।)॥। प्राप्त किया। सहयोगी 'गढ़वाली' के १५ नवम्बर के अंक में "एक दर्शिका" ने एक नोट छपवाया है। उसमें देवीजी पर निर्मूल कटु आक्षेप किये गये हैं, जो निन्दास्पद और अत्यन्त घृणित हैं। नोट में यह भी लिखा है—"अन्त में अध्यक्षा महोदया ने सम्मेलन के लिए चन्दे की अपील की, जिसमें करीब ६२) वसूल हुआ। किन्तु पूछने पर मालूम हुआ कि सम्मेलन-कार्यालय में केवल ४२) पहुँचा। २०) क्या हुआ इसका पता लगाना चाहिए।" दर्शिका महोदया ने, मालूम नहीं, किससे पूछ कर यह अनर्गल बात लिख डाली। सम्मेलन-कार्यालय में उसी दिन ६१।)॥। आ गया था। कार्यालय की ओर से इस सम्बन्ध की सूचना भी सहयोगी गढ़वाली के पास पहुँच गई है। सहयोगी को एक सच्ची देश-हितैषिणी तपस्विनी देवी के सम्बन्ध में ऐसा अनर्गल और निन्द्य समाचार कदापि प्रकाशित न करना चाहिए था। क्या इस भ्रान्त कार्य के लिए सहयोगी हृदय से पश्चाताप न करेगा?

# कार्य-विवरण तथा लेखमालाएँ

| लेखमाला | मूल्य | कार्य-विवरण | मूल्य |
|---|---|---|---|
| प्रथम सम्मेलन की लेखमाला | ।।।) | प्रथम वर्ष का कार्य विवरण | ।) |
| द्वितीय (मध्यमा में स्वीकृत) | (प्रेस में) | द्वितीय " " | (अप्राप्य) |
| तृतीय सम्मेलन की लेखमाला | ।।।) | तृतीय " " | ।=) |
| चतुर्थ " " | ।।।) | चतुर्थ " " | ।।) |
| पंचम " " | ।।) | पंचम " " | ।।।) |
| षष्ठ " " | ।।।) | षष्ठ " " | ।) |
| सप्तम " " | ।।=) | सप्तम " " | ।=) |
| अष्टम " " | १) | अष्टम " " | ।) |
| नवम " " | १।।) | नवम " " | ।=) |
| दशम " " | ।≡) | दशम " " | ।।) |
| द्वादश " " | १) | | |
| त्रयोदश " " | १) | | |

## सम्मेलन द्वारा प्रकाशित उत्तमोत्तम पुस्तकें

अकबर की राज्य-व्यवस्था ... ... ... १)
सूर्यसिद्धान्त ... ... ... ... १।)
इतिहास ( चिपलूणकर ) ... ... ... ≡)
हिन्दी-भाषा-सार ... ... ... ... ।।।)
प्रथमालंकार-निरूपण ... ... ... ... =)
द्वितीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के सभापति का भाषण ... ।)
तृतीय " " " " ... ।)
मद्रास प्रान्त में हिन्दी-प्रचार का विवरण ... ... -)
हिन्दी-विद्यापीठ ... ... ... ... -)।।
नागरी अंक और अक्षर ... ... ... =)
हिन्दी का सन्देश ... ... ... ... -)
वृत्तचन्द्रिका ... ... ... ... =)
तेरहवें हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के सभापति का भाषण ... =)

**पता—मंत्री, हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग**

# सम्मेलन-परीक्षाओं
## की
## नयी विवरण-पत्रिका

हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की प्रथमा तथा मध्यमा परीक्षाओं की संवत् १९८२—८३—८४ की सम्मिलित विवरण-पत्रिका छप कर तैयार है। जिन सज्जनों को इस नवीन विवरण-पत्रिका की आवश्यकता हो, वह -)॥ का टिकट भेज कर शीघ्र मँगा लें।

**परीक्षा मंत्री**

हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग।

---

## विशारद अध्यापिकाओं की आवश्यकता

पंजाब की एक पहाड़ी रियासत की राजकीय कन्या-पाठशाला के लिए, जिसका सरकारी शिक्षाविभाग से सम्बन्ध नहीं है, सम्मेलन की विशारद परीक्षोत्तीर्ण एक मुख्याध्यापिका की आवश्यकता है। एक द्वितीयाध्यापिका की भी ज़रूरत है। मुख्याध्यापिका कुछ अँगरेज़ी भी जानती हों, तो बहुत अच्छा होगा। वेतन क्रमशः ६०) और २०) रुपये होगा। जगह बहुत अच्छी है। प्रार्थनापत्र प्रशंसापत्रों सहित निम्नलिखित पते पर भेजना चाहिए।

**लक्ष्मीधर वाजपेयी**

प्रचार मंत्री

हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग।

---

हि[illegible] साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग द्वारा प्रकाशित
सूरजम[illegible] के प्रबन्ध से हिन्दी-साहित्यप्रेस प्रयागमें मुद्रित।

तार का पता—"सम्मेलन" इलाहाबाद रजिस्टर्ड नं० ए. ६२६.

# सम्मेलन-पत्रिका

सम्मेलन की मुख पत्रिका

भाग १२ अङ्क ६, माघ सं० १९८१ वि०

संपादक

वियोगी हरि

प्रकाशक

हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, प्रयाग

वार्षिक मूल्य २) प्रत्यंक ≡)

# विषय-सूची

# सम्मेलन-पत्रिका के नियम

१—'पत्रिका' प्रत्येक मास की पूर्णिमा को प्रकाशित हो जाती है। यदि किसी मास की कृष्णा १० तक उस मास की पत्रिका न मिले, तो पत्र द्वारा सूचना देनी चाहिये।

२—'पत्रिका' का वर्ष भाद्रपद से प्रारम्भ होता है। वर्ष के बीच में, किसी भी मास में, ग्राहक होने पर उस वर्ष के पूर्व मासों के अंक अवश्य लेने पड़ते हैं। डाक-व्यय-सहित पत्रिका का वार्षिक मूल्य २=) है। २) मनीआर्डर द्वारा भेजने से अधिक सुभीता होता है।

३—यदि दो एक मास के लिए पता बदलवाना हो तो डाकखाने से प्रबन्ध कर लेना चाहिये, और यदि बहुत दिनों के लिए बदलवाना हो, तो हमें उसकी सूचना देनी चाहिए, अन्यथा 'पत्रिका' न मिलने के लिए हम उत्तरदायी न होंगे।

४—लेख, कविता, समालोचना के लिए पुस्तकें—"सम्पादक सम्मेलन पत्रिका, पोस्ट बाक्स नं० ११ प्रयाग" के पते से वा प्रबन्ध-सम्बन्धी पत्र—"प्रचार-मन्त्री हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, पोस्ट बाक्स नं० ११ प्रयाग" के पते से और पत्रिका का मूल्य, विज्ञापन की छपाई आदि का द्रव्य "अर्थमंत्री, हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन, पोस्ट बाक्स नं० ११ प्रयाग" के पते से आना चाहिए।

५—प्राप्त कविता और लेखों के घटाने, बढ़ाने एवं प्रकाश करने वा न करने का पूर्ण अधिकार सम्पादक को है।

---

## सम्मेलन-पत्रिका में

## विज्ञापन की दर

| | १ मास | ६ मास | एक वर्ष |
|---|---|---|---|
| एक पृष्ठ | ५) | २५) | ४५) |
| आधा पृष्ठ | ३) | १५) | २८) |

# आवश्यक सूचना

६—सम्मेलन द्वारा प्रकाशित पुस्तकों की बिक्री पर कमीशन की दर निम्नलिखित अनुसार होगी—

( क ) १०) से नीचे की पुस्तकों पर कुछ भी कमीशन न दिया जायगा।

( ख ) १०) से २५) तक की पुस्तकों पर दो आना रुपया कमीशन दिया जायगा।

( ग ) २५) से ऊपर १००) तक २० रुपया सैकड़ा।

( घ ) १००) से ऊपर, २५) सैकड़ा।

( ङ ) ५००) या अधिक की पुस्तकें लेने पर तृतीयांश कमीशन अर्थात् ३३।-)४ दिया जायगा।

( नोट ) सम्मेलन से सिर्फ सम्मेलन द्वारा प्रकाशित पुस्तकें बेची जाती हैं, अतः सर्वसाधारण को चाहिए कि वे सम्मेलन से केवल सम्मेलन द्वारा प्रकाशित ही पुस्तकें मगावें। अन्य प्रकाशकों की पुस्तकें हमारे यहां नहीं मिलतीं।

# सुलभ-साहित्य-माला

इस माला का उद्देश्य यह है कि हिन्दी में उत्तमोत्तम ग्रन्थों के सुन्दर और सस्ते संस्करण इस ढंग से निकाले जायँ कि जिससे हिन्दी-प्रेमी इन ग्रन्थ-रत्नों को सुलभता से पा सकें। यह माला प्राचीन साहित्य का विशेष रूप से उद्धार करने की चेष्टा कर रही है। इसमें प्राचीन साहित्यक, दार्शनिक, सामाजिक, राष्ट्रीय आदि उत्तमोत्तम ग्रन्थ सिद्धहस्त लेखकों को उचित पुरस्कार देकर लिखाये और प्रकाशित किये जाते हैं। अब तक इस माला में निम्नलिखित पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं—

## १—भूषण-ग्रन्थावली ( सटिप्पण )

भूषण कवि हिन्दी में वीर रस के एक मात्र कवि हैं। इनकी कविता में भाव हैं, ओज है और प्राण है। परन्तु अधिकांश में वह इतनी क्लिष्ट है कि उसका समझना कठिन हो जाता है। इस कठिनाई को दूर करने के लिए हिन्दी के सुपरिचित विद्वान् पं० रामनरेशजी त्रिपाठी ने क्लिष्ट स्थानों पर टिप्पणियाँ दे दी हैं और कठिन शब्दों का अर्थ लिख दिया है। कविता में सूत्र रूप से वर्णित ऐतिहासिक घटनाओं का भी यथास्थान स्पष्ट उल्लेख कर दिया गया है।

यदि भारतीय वीरता का पता चलाना हो, यदि जातीय ज्योति को जगमगाना हो, यदि साहित्यिक आनन्द लूटना हो, तो इस ग्रन्थावली को एक बार अवश्य पढ़ जाइए। इसमें अलङ्कार शास्त्र का अनुपम ग्रन्थ शिवराजभूषण, शिवा-बावनी, छत्रसाल-दशक तथा भूषण कवि के फुटकर कवित्तों का संग्रह किया गया है। पृष्ठ-संख्या १८४, मूल्य ॥-)

## २—हिन्दी-साहित्य का संक्षिप्त इतिहास

लेखक—भा० मिश्रबन्धु

हिन्दी भाषा और साहित्य का क्रमशः विकास कैसे हुआ, उसने कौन-कौन से रूप पकड़े, किन-किन बाधाओं एवं साधनों का उसे सामना करना पड़ा, वर्त्तमान परिस्थिति क्या है आदि गम्भीर विषयों का पता इस पुस्तक से भलीभांति चलता है। अपने ढंग की यह पहली पुस्तक है। "मिश्रबन्धु विनोद" रूपी महासागर से मथन कर यह इतिहासामृत निकाला गया है। यह हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की मध्यमा परीक्षा में स्वीकृत है। पृष्ठसंख्या १८८, मूल्य ।=)

**पुस्तकें मिलने का पता—हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन**
**पोस्ट बाक्स नं० ११, प्रयाग।**

## ३—भारतगीत

लेखक—पं० श्रीधर पाठक

पाठकजी की रसमयी-रचना से किस सहृदय साहित्य-रसिक का हृदय रसप्लावित न होता होगा? आपकी गणना वर्त्तमान हिन्दी-साहित्य के महारथियों में है। आपकी राष्ट्रीय कविता नवयुवकों में जातीय जीवन सञ्चार करनेवाली है। प्रस्तुत पुस्तक पाठकजी के उन गीतों का संग्रह है, जिन्हें उन्होंने समय-समय पर स्वदेश-भक्ति की उमंग में आकर लिखा हैं। इसकी प्रस्तावना साहित्य-मर्मज्ञ बाबू पुरुषोत्तमदासजी टंडन ने लिखी है। यह पुस्तक राष्ट्रीय विद्यालयों के बड़े काम की है। पृष्ठसंख्या ६४, मूल्य ≡)

## ४—भारतवर्ष का इतिहास

### (प्रथम खण्ड)

लेखक—श्री मिश्रबन्धु

यह इतिहास प्राचीन और अर्वाचीन काल से सम्बन्ध रखता है। इसमें पूर्व वैदिक काल से सूत्र काल तक अथवा ६०० संवत् पूर्व से ५० संवत् पूर्व तक की घटनाओं का उल्लेख है। अब तक हिन्दी में भारतवर्ष का सच्चा इतिहास एक भी नहीं था। विदेशियों के लिखे हुए अपूर्ण और पक्षपातयुक्त इतिहासों के पढ़ने से यहां के नवयुवकों को अपने देश के प्रति अश्रद्धा उत्पन्न हो जाती है। ऐसे समय में हिन्दी के सुप्रसिद्ध लेखक मिश्रबन्धुओं ने बड़ा काम किया है। मध्यमा परीक्षा के इतिहास विषय में यह पुस्तक निर्दिष्ट है। जिल्दवाली पुस्तक, जिसकी पृष्ठसंख्या ४०६ है, मूल्य केवल १॥)

---

**पुस्तकें मिलने का पता—हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन,**
**पोस्ट बाक्स नं० ११, प्रयाग।**

## ५—राष्ट्रभाषा

संपादक—श्री 'भारतीय हृदय'

कुछ समय हुआ, महात्मा गांधी ने यह प्रश्न उपस्थित किया था कि, क्या हिन्दी राष्ट्र-भाषा हो सकती है ? इसके उत्तर में भारत के प्रत्येक प्रान्त के बड़े-बड़े विद्वानों और नेताओं ने पक्षपातरहित सम्मतियाँ दी थीं, कि निःसन्देह हिन्दी ही राष्ट्रभाषा होने योग्य है। उन्हीं सब अमूल्य सम्मतियों का संग्रह इस पुस्तक में किया गया है। इसके विरोधियों का भी यथेष्ट खण्डन हुआ है। इस विषय के व्याख्यानों का भी इसमें सङ्कलन कर दिया गया है। हिन्दीभाषा के प्रेमियों के लिए यह पुस्तक प्राणस्थानीय नहीं तो क्या है ? पृष्ठसंख्या २००, मूल्य ॥)

## ६—शिवा-बावनी

महाकवि भूषण के वीररस सम्बन्धी ५२ कवित्तों का उत्तम संग्रह। इन कवित्तों के टक्कर के छन्द शायद ही वीररस के साहित्य में अन्यत्र कहीं मिलें। महाराष्ट्रपति शिवाजी की देशभक्ति और सच्ची वीरता का यदि चित्र देखना हो, तो एक बार इस छोटी सी पोथी का पाठ अवश्य कर जाइए। शब्द एवं भाव-काठिन्य दूर करने के लिये कवित्तों की सुबोधिनी टीका, टिप्पणी और अलङ्कार आदि साहित्य से सम्बन्ध रखनेवाली आवश्यक बातों का इसमें उल्लेख कर दिया गया है। साहित्य-सम्मेलन की प्रथमा परीक्षा में यह पुस्तक रखी गयी है। पृष्ठसंख्या ५४, ≡)

## ७—सरल पिङ्गल

ले०— { श्री पुत्तनलाल विद्यार्थी
श्री लक्ष्मीधर शुक्ल, विशारद }

इस पुस्तक में पिङ्गल शास्त्र के गूढ़ रहस्यों को सरल और सुन्दर भाषा में समझाने का प्रयत्न किया गया है। छन्दों के उत्तम उदाह-

रण भी दिये गये हैं। अन्त में संस्कृत छन्दों का भी संक्षेप में दिग्दर्शन करा दिया गया है। पृष्ठ संख्या ५८, मूल्य ।)

## ८—सूरपदावली

(सटिप्पण)

श्री सूरदासजी के १०० अत्युत्तम पदों का अपूर्व संग्रह, मूल्य ।)

## भारतवर्ष का इतिहास

### ( द्वितीय खण्ड )

लेखक—श्री मिश्रबन्धु

इसमें ५०० संवत् पूर्व से १२५० संवत् तक की घटनाओं का वर्णन किया गया है। भारतवर्ष के उत्थान-पतन के क्रम का पता इस पुस्तक से जैसा कुछ चलता है, यह पढ़ने से ही मालूम होगा। हिन्दू-समाज की उन्नति और अवनति, इस देश में स्वदेशी और विदेशी भावों का आविर्भाव तथा धार्मिक जीवन की महत्ता आदि जानने योग्य आवश्यक विषयों का ज्ञान इससे पूर्णतः प्राप्त हो सकता है। सुन्दर छपाई, कपड़े की जिल्द, पृष्ठसंख्या ४४०, मूल्य २।)

## पद्य-संग्रह

संपादक { श्री ब्रजराज एम. ए, बी. एस-सी., एल. एल. बी.
श्री गोपालस्वरूप भार्गव एम. एस. सी.

आधुनिक खड़ी बोली के प्रसिद्ध-प्रसिद्ध कवियों की कविताओं का सुन्दर संग्रह। ये कविताएँ विद्यार्थियों के बड़े काम की हैं। संग्रह सामयिक और उपादेय है। यह पुस्तक हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की प्रथमा परीक्षा के साहित्य में स्वीकृत है। पृष्ठसंख्या १२८, मूल्य ।≡)

## ११—संक्षिप्त सूरसागर

सम्पादक—श्री वियोगी हरि

सूरदासजी-रचित सूर-सागर से ५०० पद-रत्न चुन कर इसमें एकत्र किये गये हैं। जहाँ तक हो सका है, कई प्रतियों से पदों का पाठ शुद्ध किया गया है। प्रत्येक पद की पाद-टिप्पणी भी लगा दी गयी है। इसकी प्रस्तावना हिन्दी-साहित्य के महारथी सुप्रसिद्ध विद्वान्

**श्री राधाचरणजी गोस्वामी**

ने लिखी है। सागर की थाह लेना सहज नहीं है। उसे पार कौन कर सकता है? तथापि बिना शोभा देखे रहा नहीं जाता। अब तक सब के अनुशीलन करने योग्य सूरसागर का सुन्दर और सुलभ संस्करण नहीं निकला था। लोग इसके रसास्वादन के लिये लालायित हो रहे थे। सम्मेलन ने इस अभाव को दूर कर हिन्दी-साहित्य-रसिकों की पिपासा शान्त करने की यथाशक्ति चेष्टा की है। पुस्तक के अन्त में लगभग १०० पृष्ठ की सूरदासजी की जीवनी तथा काव्यपरिचय जोड़ा गया है। उनकी जीवनी की मुख्य-मुख्य घटनाओं का पूरा-पूरा उल्लेख आगया है। कविता की सुन्दरता भी पर्याप्त रूप से दिखला दी गई है। पदों में आई हुई अन्तर्कथाएँ भी लिखी गयी हैं। यह पुस्तक हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की उत्तमा परीक्षा में स्वीकृत है। एण्टिक कागज़ का जिल्द-दार संस्करण, पृष्ठसंख्या ४२५, मूल्य २)

## १२—विहारी-संग्रह

सम्पादक—श्री वियोगी हरि

कविवर विहारीलाल की सतसई से प्रथमा परीक्षा के विद्यार्थियों के लिए यह छोटा सा संग्रह तैयार किया गया है। जहाँ तक सम्भव हुआ है, इसमें श्रृंगार रस के दोहों का समावेश नहीं किया गया है,

किन्तु ऐसे दोहों का संग्रह किया गया है, जो बिना किसी सङ्कोच के बालक-बालिकाओं को पढ़ाए जा सकते हैं। पृष्ठसंख्या ६४, मूल्य ≡)

## १५—व्रज-माधुरी-सार

सम्पादक—श्री वियोगी हरि— इस पुस्तक का विषय इसके नाम ही से प्रकट होता है। इसमें व्रजभाषा की कविता का सार सङ्कलन किया गया है। इस संग्रह में चार विशेषताएँ हैं:—

(१) इसमें सूरदासजी से लेकर आधुनिक काल के स्वर्गीय सत्यनारायणजी तक की भावपूर्ण कविताओं का संग्रह किया गया है।

(२) इसमें कुछ ऐसे कवियों की रचनाओं का रसास्वादन भी कराया गया है जो अभी तक कहीं प्रकाशित नहीं हुई थीं।

(३) इस ग्रन्थ में यथेष्ट पादटिप्पणियां लगा दी गयी हैं, जिनकी सहायता से साधारण पाठक भी लाभ उठा सकते हैं।

(४) इसके प्रारम्भ में प्रत्येक कवि का संक्षिप्त जीवनचरित और उसकी कविता की संक्षिप्त आलोचना भी की गई है।

पृष्ठसंख्या ६३२, मूल्य जिल्दवाले संस्करण का केवल २)

## १६—पद्मावत ( पूर्वार्द्ध )

सम्पादक—श्री लाला भगवानदीन

यह हिन्दी के सुप्रसिद्ध कवि मलिक मुहम्मद जायसी कृत पद्मावत का पूर्वार्द्ध है। इस भाग में पहले खण्ड से लेकर ३५वें खण्ड तक समावेश हुआ है। सम्पादक महोदय ने इस ग्रन्थ में इतनी यथेष्ट पादटिप्पणी लगा दी है कि अब इस प्राचीन काव्य का रसास्वदान करना प्रत्येक कविता-प्रेमी के लिए सुलभ हो गया है। अन्त में एक संक्षिप्त शब्दकोश भी जोड़ दिया गया है। पृष्ठसंख्या लगभग २००; मूल्य साधारण जिल्द का १) और जिल्दवाली का १।)

भाग १२ } माघ, संवत् १९८१ { अङ्क ६

# शिव-वन्दना

### छप्पय

गरल-असन, दिग्वसन, व्यसन-भंजन, जनरंजन ।
कुंद-इन्दु-कर्पूर-गौर, सच्चिदानंदघन ॥
विकट वेष उर शेष, सीस सुर सरित सहज सुचि ।
सिव अकाम, अभिराम धाम, नित राम नाम रुचि ॥

कंदर्प-दर्प-दुर्गम-दवन,
उमारवन गुनभवन हर ।
तुलसीश त्रिलोचन, त्रिगुन-पर,
त्रिपुर-मथन जय त्रिदश-वर ॥

—गो० तुलसीदास

# प्रेम-सतसई के कुछ दोहे*

राम भानुसम उदित ह्वै माया कमल बिकास।
तब मलिंद तनु पाइ है ज्ञान पराग सुवास॥
चलन चहत मन राधिका जेहि निकुंज मग हेत।
ललन जाइ ता प्रथम ही पलन बुहारू देत॥
तुम रविसम खद्योत हम, तुम मानिक हम पोत।
तुम सागर हम बुंद हैं, अंश तुम्हारे होत॥
पर्‌यौ खिलाड़ी नाम तुव, खेलन में चित देत।
फिर औरन के खेल क्यों बिन कारन हरि लेत॥
पान समै बिपने लख्यो शिव वर रूप अमंठ।
सिमिटि सकुचि हरि दबि बस्यो राम रगड़ हित कंठ॥
जा तन कों लपटाइ करि लखि अघात हे नैन।
ता तन की अब कहनियां कहत फिरत दिन-रैन॥
ना इच्छा ना इंद्रिवस रहत ब्रह्म लवलीन।
सो मन बस तुव पास में ह्वै मुरली आधीन॥
हिलत, मिलत, पैयां परत, दोऊ लेत बलायँ।
इन्हें भूलि गईं गागरें, उन्हें भूलि गईं गायँ॥
सुखद जुन्हैया सुमधु की, सरस समैया होय।
दुलहैया सैया जलज चुभत कन्हैया तोय॥
दई, नई यह रीति अति, क्यों करि सीखी जाति।
दई दई सो है दई, फिर क्यों लै लई जाति॥
नैन कटारी भौंह धनु, वरुनि प्रखर हैं बान।
पलक ढाल की ओट तें घालत मैन महान॥
ह्वै बिहवल हम ह्याँ फिरत, ह्वां तलफत है यार।
प्रेम रूप इक विरह सर द्वै हिरदय बिच पार॥

---

* यह सतसई साहित्य-रसिक गरौली-अधिप श्रीमान् दीवान बहादुर चन्द्रभानुसिंहजी ने लिखी है। उसी में से यहां कुछ दोहे दिये जाते हैं। ग्रन्थकार महोदय इसे शीघ्र ही प्रकाशित करेंगे। —संपादक

ऊधौ आये सखिन कों जोग सिखापन दैन।
देखि सखिन कों विरह कौ लगे सिखापन लैन॥

जसुमति को जो छोहना नंद बबा कौ नंद।
ऊधौ, तुम्हरो नाथ सो मो चकोर कौ चंद॥

ऊधौ, बनसी सौतिने भलो जु समता कीन।
आप रही लगि कृष्ण लौ छेद हिए मम दीन॥

झूला झूलत के समय छुटे केस सिर-फंद।
मनों चंद आगे भज्यौ पीछे परे फनिंद॥

आनन ओप उजास पैं लग्यौ दिठौना बंक।
मनों आरसी बिच धर्यौ इल्म फ़ारसी अंक॥

बनसी बनसी बन बसी वा बन बसी विसेष।
बन विनसी बन बन बसी बनसी बनसी भेस॥

करूं प्रीति रस रीति अब छाँड़ि सबनि को साथ।
भले बुरे को डर नहीं बिके स्याम के हाथ॥

सोहत तुम्हें न भूलिबो हम भूलत दिन रात।
यही भूल हम भूलते नाथ न भूलत बात॥

बढ़त पाप जब अधिक हैं, होत बिधाता बाम।
जिमि लोहे के पींजरा करत न पारस काम॥

चौखूंटे पँचखूँट के, गढ़ी मड़ी से ढार।
शैल-सिला से, महल से बदरा अजब अपार॥

कही राधिका अंक भरि स्याम बचन दै दोय।
मैं ना भूलौं खेलिबौं, तुम ना भूलौ मोय॥

पद नख तें महि में लिखत धरे कपोलन हात।
बैठी नैन सबौत अति अधर दबाये दाँत॥

अरे बावरे ध्यान दै, मति कर तिय अपमान।
सती सवित्री जानकी नारी हैं कै आन॥

शंभु राम नहिं करि सके नहिं पाई निज तीय।
सो नारी यम-लोक तें फेरि लाय निज पीय॥

तन साखा मन झूलना, बनी तंत की डोर।
इहि विच झूलत ही रहो प्यारे जुगल किसोर॥
परी परी पर्यंक पर निद्रा बस ह्वै जाय।
स्वयं बसी ह्वै करि मनों करत बसी जग आय॥
जिमि छिन पल घरि दंड दिन मास वर्ष जुग देख।
नाम भिन्न तुव ज्ञान हित बन्यौ चराचर देख॥
धरि धीरज प्रन गहि रहौ सहि कैं विविध कलेस।
तब जानहु कछु प्रेम को है यह सिद्धगनेस॥
जाकों सेवत देव सब, वेद न पावत भेव।
सो राधा के चरन गहि पहिरावत पाजेव॥
चाहै नहिं फल स्वादु पुनि करै जगत विच कर्म।
वाकों पाप न पुन्य कछु, यही ज्ञान को मर्म॥
सब रंग देखे सोधि कैं, तुरत अंत मिलि जाय।
लख्यौ स्याम-रंग डूबि कैं तौ गंभीर दिखाय॥
सबै लोक जिहि हिय बसत, बेद नेति कहि जाय।
सो हिय मिहिजुलि दास सों फूल्यो नहीं समाय॥
सरस सरोवर मम हृदय भर्‌यौ प्रेम गँभीर।
या विच विगसे द्वै कमल पीत नील ब्रजवीर॥
राम नाम है भानु सम, कृष्ण कृष्ण सम सोय।
बिना स्याम के भानु को मान कवन विधि होय॥
माया निसि बिच ज्ञान मग तब लगि लखत न कोय।
राम नाम कौ भानुवर जब लगि उदय न होय॥
जे नैन छवि लखि छके छटा छबीली स्याम।
ते अब कहि क्योंकरि लखैं आन रूप अभिराम॥
लै समाज विहरत विपिन रवि-तनया तट ओर।
हरत सखिन के झटकि मन छलत छबीले चोर॥
होहि राधिका छाहँ पर स्याम गात अनुराग।
हरित होत जिमि भ्रमर जब पावत पुष्प-पराग॥

बोरे जसुमति-नंद के राधा के हिय हार।
रखवारे ब्रज के सदा मेरे स्याम अधार॥

कटी, छटी, छीली, छिदी, खरदी, तज्यौ निकेत।
बँधी, जरी, सूखी, रिती स्याम-अधर-रस हेत॥

चाहौ धन बर धाम अरु सुजस धरम निज नूर।
प्रेम नीति सों पालियौ रैयत कों भरपूर॥

पैदल अरु असवार सों बिन छल करियो प्रेम।
शत्रु जीति रनभूमि में अचल धारियो नेम॥

नित प्रति शान्त उदंड हिय दंडन को दै दंड।
धोखे सों कहुं दीन पर करियौ नाहिं घमंड॥

सुनियो नृप, सब देस हित बिनय यही कर जोर।
रहै कलेस न लेस कों बात मानियो मोर॥

सुनो न दानी द्वार तें याचक होत निरास।
सो याचन याचक बन्यौ स्याम दरस हित आस॥

—(दीवान बहादुर) चन्द्रभानु सिंह

---

# रस के छींटे

(खंडिता)

कंकन कौ धारिबो लख्यौ है कर ही में हम,
ताकी छबि कान्ह कण्ठ रावरे निहारी है।
कज्जल कलित लोल लोचन लगावैं सबै,
ओठनि लगाएँ आप उपमा अपारी है॥

कहत बिहारी जक्क जावक पगन देत,
दीने आप भाल लाल जागै जोति न्यारी है।
ऐसी नई रीति ए सिंगार साजिबे की श्याम,
भेद तो बताओ कौन बेद तें निकारी है॥ १॥

( स्वाधीन पतिका )

कटि तट छीन है न कुच तन पीन हैं,
न दृग छबि मीन हैं न साधन सहेरी क्यों।
गातन गुराई है न बात चतुराई है न,
गति गुरुवाई है न ललक लहेरी क्यों॥
कहत बिहारी ऐसौ आनन अनूप है न,
रतिवत रूप है न छबि में छहेरी क्यों।
मोहिबे की वस्तु मोहि मोहि में न जानी जाति,
तौउ मोहि जोहि मोहि मोहन रहेरी क्यों॥ २॥

( अन्योक्ति )

एहो प्रिय पंथी, हरे हँसत कहा हौ चलौ,
अनत रमौ जू जहां छाया सीत-ब्रिन्द है।
बाग दिन बीते वे जे तपन निवारत हे,
अब पतझार झारखारिन खरिंद है॥
कहत बिहारी है न गाँस बो गुलावन की,
सर चित चोप है न ओप अरविन्द है।
छबि है न छन्द है न मंजु मकरंद है, न
छावति सुगन्ध है न आवत मलिन्द है॥ ३॥

( अन्योक्ति )

एक ओर कठिन करील कुंज पुंज घनी,
एक ओर फूल खिले कुसुम कयारी में।
एक ओर कंटक मकोर कोर कोर जोर,
धरनि धतूर पूर आक फुल झारी में॥
कहत बिहारी पंख फैलत फटत गात,
गाँसी गैल फूरन बँबूरन की वारी में।

पंकज के प्रेमी अहो मीत मालती के भौंर,
भूलि काँ परे हौ आज ऐसी फुलवारी में ॥४॥

❧❧❧

रंग रंग फूलन सों फैली है फली है फूली,
रूखी है रँगी है औ लगी है एक डारी में।
कहत विहारी है सगंध निरगंध दोऊ,
पलटत रंग भाँति भाँति छबिवारी में ॥
पानी भरो पूरी तौउ दिन प्रति भूरी होति,
फूल जात फर जात झर जात क्यारी में।
एहो बाग धारी बागवान हितकारी हम,
देखो रीति न्यारी या तुम्हारी फुलवारी में ॥५॥

—( कविराज ) विहारीलाल ब्रह्मभट्ट

---

## पाती-पंचक

( १ )

जानत हू बिछे या मग कंटक, बानिज क्यौं इतै पायँ दये।
का लगि प्रीति करी पहिले परिनाम में जो पछिताय भये ॥
तोरिबो नेह बिसासी हुतो जुपै काहे कों आस बँधाय गये।
शेष न या में तिहारो अहो फल आपुने भाग के पाय लये ॥

( २ )

आपु तौ स्याम-सनेह के सागर नेह को नातो निबाहिबो कीजै।
रावरे प्रेम के रंग-रँगे या अधीर कों धीर धराइबो कीजै ॥
पायँ परौं तन माहिं बियोग की आगि इहा न लगाइबो कीजै।
हीय सौं नायँ तौ लोक की लाज हू पाती कबौं तौ पठाइबो कीजै ॥

( ३ )

हौ हमरे धन जीवन प्रान सो दीठि दया की सदा करिबो करौ।
याकौ न नैसुक सोच हमैं उनहीं के कहाय भलैं रहिबो करौ॥
पांय पलोटि सुहागिनी के सिगरी निसि प्रेम-कथा कहिबो करौ।
यादि कै मीत हमारिहु तौ वा पियारी तिया के हिया लगिबो करौ॥

( ४ )

बावरी है बरसावैं न वारि ये कोमल हैं सुधा सींचि जिआइयो।
धीरज दीजो प्रबोधियो औ मुरझाय न ऐसी प्रतीति दिवाइयो॥
हैं अभिलाख-भरीँ अँखियां इन पै हहा नैकु दया उर लाइयो।
ए अपने पिय सौँ कबतेँ बिछुरी हैं इन्हैं कबौं फेरि मिलाइयो॥

( ५ )

हौं तौ लोक लाज कुल कानिहिँ बिसारिए जू,
तोसौँ कियो नेह क्यौँ न ताहि निरवाहिये।
कौन अपराध मोप बन्यो है बिसासी ऐसो,
फेरि लीनों मुखु काहे रुखु न मिलाइये॥
दरस तिहारे बिनु धधकि रही है उर,
बिरह-दवारि ताहि बेगि तौ बुझाइये।
मेरे प्रानप्यारे नैन तारे हो सुजान स्याम,
सारो जग रूठै एक तू न रूठ्यो चाहिये॥

—मदनलाल चतुर्वेदी

# बाबा दीनदयाल गिरि का जीवन-चरित

हिन्दी-साहित्य में बहुत से सुकवियों की वैयक्तिक बातें उपलब्ध नहीं होतीं, अथवा उनके विषय की संतोषजनक घटनाएँ नहीं ज्ञात होतीं। उन्हीं में गिरिजी भी हैं। इसका मुख्य कारण इतिहास का अभाव है। किन्तु फिर भी लोगों की पूछताछ, खोज और अध्ययन से बहुत सी बातें ज्ञात हो जाती हैं। यही बात गिरिजी की जीवनी में भी है। गिरिजी की जीवनी "दीनदयाल गिरि ग्रन्थावली" में दी हुई है। पर उस में यत्र-तत्र कुछ बातें छूट गई हैं, कुछ भ्रामक हैं और कुछ भूल हैं। अतएव मैं उसे अधिक स्पष्ट कर देना चाहता हूं। इस विषय में मुझे गिरिजी के शिष्य के शिष्य पंडित चुन्नीलाल वैद्य से बहुत सी बातें ज्ञात हुई हैं। अतएव मैं उन्हें हृदय से धन्यवाद देता हूँ।*

गिरिजी का जन्म कब हुआ था यह भली-भाँति कहा नहीं जा सकता, किन्तु एक दृढ़ आधार पर कुछ अनुमान किया जा सकता है। गिरिजी के शिष्य गोस्वामी दम्पतिकिशोरजी का स्वर्गवास सं० १९६५ विक्रमीय में, ८८ वर्ष की अवस्था में, हुआ था। गोस्वामीजी लड़कपन में गिरिजी के यहां विद्याध्ययन करते थे। अतएव गिरिजी कम से कम २० वर्ष पहले हुए होंगे, अर्थात् गिरिजी की अवस्था उस समय गो० दम्पतिकिशोरजी से २० वर्ष अधिक रही होगी। अतएव गिरिजी का जन्मकाल लगभग (सं० १९६५—८८ + २०) सं० १८५७ विक्रमीय के रहा होगा।

अब मृत्युकाल की बात रही। इसके लिए श्रीयुत पंडित विजयानन्द त्रिपाठी "श्री कवि" ने निज-सम्पादित "अन्योक्ति-कल्पद्रुम" की

* पं० चुन्नीलालजी काशी के अच्छे वैद्यों में से हैं। आपको हिन्दी-साहित्य-विषयक जानकारी काफ़ी है। आपने मुझे अन्य कवियों के विषय में भी कुछ बातें बतायी हैं।—लेखक

भूमिका में लिखा है कि "लगभग २५ वर्ष इनको काशीवास पाये हुआ †" इससे ज्ञात होता है कि १९२०-२२ के लगभग इनकी मृत्यु भी हुई होगी, क्योंकि भूमिका सं० १९४७ विक्रमीय की लिखी हुई है।

गिरिजी की जाति, संन्यासी होने के पहले, क्या थी यह ज्ञात नहीं, किन्तु यह कहा जा सकता है कि ये ब्राह्मण थे। क्योंकि गिरि, पुरी आदि, ब्राह्मणों को ही शिष्य करते हैं। यह सेंगरे-वासी* कुशा गिरि के शिष्य थे। कुशागिरि ने काशी में आकर देहली-विनायक के पास कुछ ज़मींदारी ले ली और यहीं रहने लगे। यह देहली-विनायक पंचक्रोशी-यात्रा में भीमचण्डी से रामेश्वर जाते समय बीच में मिलते हैं। यहां एक कुआं और तालाब भी है।

कुशागिरि के दो शिष्य और थे, स्वयंवर गिरि और राम दयाल गिरि। इन सब में दीनदयालजी बड़े थे। कुशागिरिजी में योग्यता का अभाव था और अपव्यय भी बहुत करते थे, इस कारण इनके मरने के पश्चात् बहुत सा ऋण रह गया। ऋण के कारण सब ज़मींदारी कुड़क हो गयी। बची-खुची जमींदारी में तीनों शिष्यों से झगड़ा हो गया। सारी ज़मीन मुकद्दमेबाज़ी में चली गयी। दीनदयालजी अन्त तक गणेशजी की सेवा में डटे रहे। जायदाद तो नहीं बची, पर आसपास के लोगों की उदारता तथा देहली-विनायक की कृपा से गिरिजी का निर्वाह होता रहा। इनका कुछ भाग "आदि केशव" (राजघाट) में भी था।

देहली-विनायक के पास ही मटौली गाँव में इनका मठ था, जिसका छिन्न-भिन्न भाग अब भी पड़ा है। कहते हैं, दीनदयालजी का एक चित्र भी इसकी दीवाल पर खिंचा था। गिरिजी मठ में विशेष

† इनकी मृत्यु छप्पर विनायक ( यव-विनायक ) में हुई, जो मणिकर्णिका से विश्वनाथजी जाते समय राह में पड़ते हैं।

* यह मालवा के पास है।

न रह कर देहली-विनायक पर ही प्रायः रहा करते थे। "अनुराग-बाग" के अन्त में दीनदयालजी लिखते हैं—

सुखद देहली पै जहाँ, बसत विनायक देव।
पच्छिम-द्वार उदार है, काशी को सुर-सेव॥
तहँ निवास गनपति कृपा, सूझि पर्‌यो कवि-पंथ।
दीनद्याल गिरि ईश-पद बन्दि कर्‌यो यह ग्रंथ॥
मनिकरनी सुर-सरि सरन परि करि कियो प्रकासु।
गति सरनी बरनी कविन, महिमा धरनी जासु॥

गिरिजी के यहाँ कई विद्यार्थी अध्ययन करते थे। सुकवि सरदार, गोस्वामी दम्पतिकिशोर और राधारमण आदि इनके शिष्य थे। गिरिजी शिष्यों को संस्कृत के अतिरिक्त भाषा (हिन्दी) की भी शिक्षा देते थे।

गिरिजी के बनाये ग्रन्थ अनुराग-बाग, दृष्टान्त-तरंगिणी, अन्योक्ति माला, वैराग्य दिनेश, अन्योक्ति-कल्पद्रुम और बाग बहार हैं।

## अनुराग-बाग

यह ग्रन्थ सं० १८८८ में आरम्भ हुआ था—

"वसु[८] वसु[८] वसु[८] ससि[१] साल में, ऋतु वसन्त मधु मास।
राम-जनम तिथि भौम दिन भयो सुबाग विकास॥"

इसमें ४०० के लगभग छन्द हैं "दीनदयाल गिरि ग्रन्थावली" के "अनुराग-बाग" में कुछ छन्द नहीं हैं, वे सब भूमिका में दिये हुए हैं। सम्पादकजी को सन्देह है कि वे "अनुराग-बाग" के अंश हैं या नहीं। किन्तु पं० चुन्नीलालजी की प्रति में मुझे सब छन्द मिल गये हैं। आशा है, सम्पादक महोदय दूसरे संस्करण में उसे भी सम्मिलित कर लेंगे। अनुराग-बाग में कृष्ण-वियोग और श्लेषमय षट्‌ऋतुओं का वर्णन अतीवउत्तम है।

## दृष्टान्त-तरंगिणी

यह ग्रन्थ १८७९ में बना—

"निधि[९] मुनि[७] बसु[८] ससि[१] साल में आसुन मास प्रकास।
प्रतिपद मंगल दिवस को कीन्यों ग्रन्थ-विकास॥"

इसमें बड़े सुन्दर-सुन्दर दृष्टान्त दिये हैं। कुछ दोहे इसमें ऐसे भी हैं जो "पंच तंत्र" के श्लोकों के ठीक अनुवाद हैं।

## अन्योक्ति-माला

इसमें समय नहीं दिया है। अन्त में लिखा है—

"यह कल्पद्रुम सुमनमय माला सुखद सुवेस।
विलसै दीनदयाल गिरि सुमनस हिये हमेस॥

किन्तु "अन्योक्ति-माला" की सभी अन्योक्तियाँ, "अन्योक्ति कल्पद्रुम" में हैं। इससे दो बातें विचार में आती हैं। या तो गिरिजी ने इसे पहले बनाया और पीछे से "अन्योक्ति-कल्पद्रुम" में इसकी अन्योक्तियाँ रख दीं या गिरिजी के किसी शिष्य ने इसे अलग संग्रह किया।

## वैराग्य-दिनेश

यह सं० १९०६ में आरम्भ हुआ—

"रितु[६] नभ[०] निधि[९] ससि[१] साल में माधव कृष्ण रसाल।
वर वैराग्य दिनेश यह उदै भयो तेहि काल॥"

इस ग्रन्थ में समस्या-पूर्तियां और कुछ स्वतंत्र लिखित कविताओं का संग्रह तथा चित्र काव्य है। कविता इसकी भी उत्तम है।

## अन्योक्ति-कल्पद्रुम

यह सं० १९१२ में बना—

"कर[२] छिति[१] निधि[९] ससि[१] साल में, माघ मास सित पच्छ।
तिथि वसंत जुत पंचमी, रविवासर सुभ स्वच्छ॥
सोभित तेहि अवसर विषे बसि कासी सुभ धाम।
बिरच्यो दीनदयाल गिरि कल्पद्रुम अभिराम॥"

इसमें गिरिजी की एक से एक अनोखी अन्योक्तियां हैं।

## बाग-बहार

यह ग्रन्थ अप्राप्य है। श्रीयुत बाबू श्यामसुन्दरदासजी लिखते हैं "मेरी-समझ में 'अनुराग-बाग' और "बाग-बहार" एक ही ग्रन्थ के दो नाम हैं। ये दो स्वतंत्र ग्रन्थ नहीं। किन्तु ऐसी बात नहीं है। शिवसिंह सेंगर ने जो इसका उल्लेख किया है वह ठीक है। "बाग-बहार" नामक ग्रन्थ गिरिजी ने बनाया था, पर एक विद्यार्थी चुरा ले गया, अब उसका पता नहीं लगता।

गिरिजी हिन्दी और संस्कृत के विद्वान थे। कुछ-कुछ फ़ारसी भी जानते थे। काव्य रीति के यह पूर्ण ज्ञाता थे। किन्तु लड़कपन से संस्कृत की ओर झुकाव होने से कहीं-कहीं हिन्दी के प्रयोग ठीक नहीं हुए हैं।

लोग कहते हैं कि यह गेरुवे की कत्तनीदार पगड़ी बांधते थे। जैसा अब भी पुरानी चाल से चलनेवाले गिरि और पुरी आदि बांधते हैं। ये घोड़े पर चढ़कर घूमते थे। इन्हें घोड़े का शौक़ था। घोड़े की पहचान भी अच्छी करते थे।

गिरिजी बड़े उदार और विनोदप्रिय थे। हाज़िर-जवाबी भी इनमें थी। श्लेष और यमक-मय बात यह अधिक करते थे। यही कारण है कि इनकी कविता में श्लेष की मात्रा अधिक है।

आजकल के महन्तों, संन्यासियों, गिरि और पुरियों की भाँति इनमें चरित्र-भ्रष्टता लेशमात्र भी न थी। यह सच्चरित्र और सरल चित्त थे। इन्हें आडम्बर न भाता था। स्वाभाविकता इन्हें प्रिय थी। इसी कारण इनकी कविता हृदय पर चोट करनेवाली हुई है। इन्हें स्वतन्त्रता अधिक प्रिय थी। महाराज अमेठी के लाख कहने पर भी यह उनके दरबार में रहने के लिए नहीं गये। हठी भी यह खूब थे।

धन इनके पास कुछ भी न था। पर इनके गुण और विद्याबल के कारण राजा, महाराजा इनकी गुप्तरूपेण सहायता करते थे। अच्छे-अच्छे कवि और राजा इनके दर्शन को इनके यहां आते थे। रीवाँधिप कविवर महाराजा रघुराजसिंहजी भी इनसे मिलने आये

थे। उन्होंने इनकी सहृदयता, उदारता, अतिथि-सत्कार तथा कविता पर मुग्ध होकर इनकी प्रशंसा में दो दोहे कहे थे—

"हौ दयाल तुम दीन पर श्री गिरि दीनदयाल।
वांछा जौं लौं करत नर तौ लौं होत निहाल॥
सुकवि जहाँ लगि जगत में भये होहिंगे और।
करि विचार मैं दीख अब तुम सब के सिरमौर॥"

गिरिजी से और गोपालचन्द्रजी "गिरिधरदास" से बड़ी मित्रता थी। गिरिजी प्रायः नित्य ही बाबू हरिश्चन्द्रजी के पास आया करते थे।

हिन्दी-साहित्य में गिरिजी का स्थान ऊँचा है। यह प्रथम श्रेणी के कवियों में परिगणित होने योग्य हैं। इनकी कविता पर मैं दो लेख लिख चुका हूँ, जो अन्यत्र प्रकाशित हो चुके हैं। बाबाजी के कुछ छन्द ऐसे हैं जो देव और विहारी के टक्कर के हैं। कारण उसका यही है कि इनकी कविता में स्वाभाविकता कूट-कूट कर भरी हुई है। हास्य, करुण, वात्सल्यरस आदिपर ही इनकी कविता है। शृंगार-रस पर भी थोड़ा प्रकाश इन्होंने डाला है, किन्तु वीररस पर इनकी कविता नहीं है, जो स्वाभाविक ही है। संन्यासी को शान्त-रस से जितनी प्रीति होती है उतनी वीरादि रसों से नहीं। भाषा इनकी इतनी परिमार्जित है कि जिह्वा को शब्दों के उच्चारण करने में कष्ट का लेशमात्र भी सामना नहीं करना पड़ता। किन्तु इन्होंने सभी भाषाओं का सम्मिश्रण कर डाला है। ब्रजभाषा, बुन्देलखण्डी, अवधी, वैसवारे की बोली आदि सब भाषाएँ इनकी भाषा में पायी जाती हैं। कहीं-कहीं खड़ी बोली का भी पुट दिया गया है। कोई-कोई ऐसे भी हैं जो शुद्ध ब्रजभाषा या खड़ीबोली के हैं।

इनकी कविता में श्लेष और यमक अधिक है। साहित्य के प्रायः अधिकांश अंगों का इन्होंने वर्णन किया है। चित्र काव्य भी इनका अतीव उत्तम है। समस्या-पूर्ति भी इनकी एक से एक बढ़ कर है। कहने का अभिप्राय यह कि इनकी कविता में उत्तमांश अधिक है। मेरे विचार में तो साहित्य-रस-रसिक को इनके ग्रन्थ अवश्य पढ़ने चाहिएँ।

—विश्वनाथप्रसाद मिश्र 'मुकुन्द' विशारद

# हिन्दी विद्यापीठ के लिये शिक्षण-पद्धति

## (१) अपना आदर्श

शिक्षा का उद्देश्य मनुष्य का सर्वाङ्गीण विकास है। शिक्षा का प्रकार और विधि पात्र के संस्कार पर निर्भर है। शिक्षा और पात्र के संबन्ध पर ही विचार करके साधन का निश्चय संभव है। शिक्षक, पात्र और साधन की संगति और उपयुक्तता ही शिक्षा को सफल बना सकती है और विकास के प्राकृतिक मार्ग को निष्कंटक कर सकती है। इस विकास का ही व्यक्त रूप विद्या है। विद्या वस्तुतः किसी विषय को मौखिक जानकारी नहीं है। जबतक अन्तः-करण और बाह्यकरण दोनों सधकर सुचारु रूप से अपने-अपने काम न कर सकें, उत्तमोत्तम रीति से अपने व्यापारों में व्युत्पन्न न हो जायँ, तब तक विद्या नहीं आयी, विकास नहीं हुआ। यहां तक तो शिक्षा के सम्बन्ध में संसार के सभी विद्वानों की सम्मति है। परन्तु भारतीय आदर्श मनुष्य के सर्वाङ्गीण विकास पर समाप्त नहीं हो जाता। भारतीय संस्कृति का चरम उद्देश्य परमार्थ में ही मिलता है। शिक्षा का वास्तविक और अन्तिम लक्ष्य वस्तुतः "ज्ञान" है। यहां "ज्ञान" शब्द का प्रयोग हम विशेष पारिभाषिक रूप से कर रहे हैं। गीता में इसकी बहुत सुन्दर परिभाषा है, जो हमारी संस्कृति के अन्तिम लक्ष्य का पता देती है—

अमानित्वम्, अदम्भित्वम्, अहिंसा, क्षांति रार्जवम्
आचार्य्योपासनं, शौचम्, स्थैर्य्यम्, आत्मविनिग्रहः
इन्द्रियार्थेषु वैराग्यम्, अनहङ्कार, एवच
जन्म मृत्यु जराव्याधि दुःख दोषानुदर्शनम्
असक्तिरनभिष्वङ्गः पुत्रदार गृहादिषु,
नित्यत्वम् समचित्तत्वम् इष्टानिष्टोपपत्तिषु
मयि चानन्य योगेन भक्तिरव्यभिचारिणी
विविक्त-देश-सेवित्वम्, अरतिर्जनसंसदि,

अध्यात्मज्ञान नित्यत्वम्, तत्वज्ञानार्थं दर्शनम्, गीता
एतद् ज्ञानमिति प्रोक्तम्, अज्ञानम् यदतोन्यथा [अध्याय १३ श्लोक ११]

इन श्लोकों से स्पष्ट है कि गीता के अनुसार विचार और आचार का सम्यक् रीत्या विकसित रूप ही ज्ञान है। शिक्षक का लक्ष्य इसीलिये विशेषतः शिष्य के विचार और आचार दोनों का पूर्ण विकास होना चाहिये।

शिक्षातत्त्व के पाश्चात्य मर्म्मज्ञ मनुष्य की परिस्थिति और उसके जीवात्मा को आनुषंगिक मानते हैं। जीवात्मा अपनी परिस्थिति पर जितनाही अधिकार कर लेता है, उसको अपने लिये जितना ही उपयोगी बना लेता है उतना ही वह विकसित एवं शिक्षित समझा जाता है। पूर्व संस्कार के माननेवाले शिक्षा के सम्बन्ध में इन दोनों को अन्योन्याश्रित मानते हैं। शिक्षण-पद्धति में इसीलिये देश, काल, निमित्त और पात्र पर विचार करना अनिवार्य्य है।

प्रत्येक व्यक्ति के विकास पर ही सामूहिक अथवा सामाजिक विकास निर्भर है। हमारा वर्त्तमान समाज जिन व्यक्तियों का समूह है उन्हें कोई व्यवस्थित राष्ट्रिय शिक्षा नहीं मिली। जिस प्रकार की शिक्षा उन्हें मिली है और सम्प्रति अधिकांश भावी समाज को दी जा रही है वह चाहे जैसी हो, परन्तु राष्ट्रिय कदापि नहीं है। जो कसौटी हमने अपने सामने रखी है उसपर कसने से वर्त्तमान पद्धति केवल खोटीही नहीं वरन हानिकारक सिद्ध होती है। किसी देश या जाति की शिक्षा विशेष रूप से उसके लिये लाभकारी एवं विकास का कारण तबतक नहीं हो सकती जबतक उसने उस देश या जाति के भूतकाल के इतिवृत्त से निष्कर्ष नहीं लिया है और भविष्य काल की विकसित दशा की कल्पना अथवा आदर्श को वर्त्तमान पद्धतिकी रचना में अपनी दृष्टि के सामने नहीं रखा है। प्रचलित पद्धति इन दोनों बातों से सम्बन्ध नहीं रखती। वह तो उस भानु-गुदड़ी का उपमेय है जिसमें प्राच्य और पाश्चात्य देशों की पद्धतियों के चीथड़ों की चकतियां भद्दी तरह से सीयी हुई हैं। इस गुदड़ी को एक दम देश के अंग से उतारकर फेंक देना है और जबतक हम

अपनी ही रुई के अपने काते सूत का सुन्दर खद्दर न तय्यार कर लें तबतक इस गुदड़ी को ओढ़ने की अपेक्षा नंगे—इस खोटी शिक्षा के बदले अशिक्षित—रहना ही श्रेयस्कर है। प्रचलित पद्धति की विस्तृत आलोचना न तो इस लेख में हमारा ध्येय ही है; न यहां उसकी आवश्यकता है।

हमारी प्राचीन संस्कृति शिष्यको पूर्ण रूप से स्वावलम्बी बनाती है। * दृढ़, बलवान, साधु युवक शिष्य के लिये यह सारी धरती वित्त से पूर्ण होती है। प्रचलित पद्धति उसे नौकरी या "दासत्व" की घृणित शृंखलाओं में जकड़ देती है। हमें उसी प्राचीन स्वावलम्बिनी संस्कृति को फिर से स्थापित करना होगा। मोटी-मोटी, वाग्जाल से ग्रथित, पिष्टपेषण से पूरित पोथियों को पढ़ाकर पांडित्य-प्रदान करने की प्रथा उठा देनी होगी। आजकल पढ़ने-लिखने को ही शिक्षा समझने का भारी भ्रम साधारण जन समुदाय में जड़ जमाये हुए है। पढ़ना-लिखना साधन नहीं समझा जाता, साध्य समझा जाता है। डिगरियों के पुछल्लों से भूषित पढ़े-लिखे, परन्तु वस्तुतः अशिक्षित, मूर्खों की हमारे देश में थोड़ी संख्या नहीं है। ऐसी अद्भुत जाति की उत्पत्ति का श्रेय प्रचलित शिक्षण-पद्धति के विधाताओं को है। प्राचीन संस्कृति की हत्या का आंशिक पातक भी इन्हीं के सिर है और राष्ट्रियता के अभाव के यह भी एक कारण हैं। अब पोथियां अधिक पढ़ाने और शिक्षा कम देने के बदले शिक्षा अत्यधिक और पोथी की कम पढ़ाई की बड़ी आवश्यकता है। दूर तक विचार करने से यह सहज ही समझा जा सकता है कि निष्प्राण पोथियों की लकड़ी की मूर्ति को भी कुछ दिनों के लिये चलता-फिरता कर देना प्रेस का रोज़गार है। प्रेस और प्रकाशन से कमाई करनेवालों का छपी चीज़ों का प्रचार करने में पूरा स्वार्थ है। इसीलिये सभी जगह पोथियों का बोझ अधिक दिखाई दे रहा

* युवास्यात्साधुयुवाध्यापकः। आशिष्ठोद्रढिष्ठोबलिष्ठः। तस्येयं पृथिवी सर्वा वित्तस्यपूर्णास्यात्।

है। पोथी और छापे की अधिकता से मौखिक शिक्षा का तो थोड़ा ही ह्रास हुआ है, पर अधिक ह्रास तो उन मौलिक विचारों का हुआ है जो बहुत सी और बड़ी-बड़ी पोथियों के अभाव में विद्या-वयोवृद्ध गुरू अपने जी से शिष्य के प्रति प्रकट करता था। यह कमी दूर करनी है। इस तरह शिष्य और शिक्षक दोनों ही स्वावलम्बी हो जायँगे।

और बातों में तो परायी अधीनता सह्य हो भी, पर शिक्षा का तो स्वाधीन होना अनिवार्य्य है। सत्य और ज्ञान बहुमत पर निर्भर नहीं है। नौ सौ निन्नानबे अंधों के इनकार करने पर एक सुभाके की भी गवाही प्रकाश का अस्तित्व स्थापित करने को पर्याप्त है। ज्ञान का साधन जिनको उपलब्ध नहीं है, उनके अधीन रहकर और उनकी ही इच्छा पर शिक्षा देना संभव नहीं है। इसीलिये आचार्य्यों की स्वाधीनता प्राचीन है। यदि किसी विद्याधानी के पोषण के लिये कोई समृद्ध सज्जन सम्पत्ति देता था तो पुण्य कार्य्य समझ कर। वह शर्त्तें लगा कर विद्याधानी को क्रीता दासी नहीं बनाता था। अन्यथा ब्रह्मचारी गृहस्थों से भिक्षा लाता था और सारी विद्याधानी भिक्षा पर चला करती थी। काशी नगरी इसी अर्थ में आज भी एक विशाल विद्यापीठ है, जिसमें आचार्य्य लोग बहुधा अपने-अपने घर, और अनेक शालाओं में भी, अध्यापन करते हैं। अनेक धन-कुवेरों ने भोजनालय खोल रखे हैं, जिनमें विद्यार्थियों को भोजन मिलता है। इन भोजनालयों को विशेष आचार्य्यों से कहीं-कहीं ममत्व अवश्य है, पर शिक्षा पर शासनाधिकार कहीं नहीं है। आधुनिक राष्ट्रिय विद्यापीठों में भी इस विषय पर ध्यान रखने की आवश्यकता है। हम तो कहेंगे कि विद्यार्थी की शिक्षा ही ऐसी हो कि वह बिल्कुल भिक्षा के भरोसे न रहे। अपने लिये अन्न और वस्त्र के उपार्जन में उचित मात्रा में परिश्रम करे। उचित मात्रा हम समझ-बूझ कर कहते हैं। किसी व्यक्ति के लिये संभव नहीं है कि बिना दूसरे की सहायता के वह अपने लिये अन्न-वस्त्र का उपार्जन कर सके। इसके सिवा जितनी

धरती विद्यापीठ की हद में है उससे अधिक विद्यार्थियों के लेने का निश्चय हो तो ऐसी दशा में किसी न किसी रूप में भिक्षा की प्राचीन प्रथा का अवलम्बन करना ही पड़ेगा। यदि बच्चे स्वयं भिक्षाटन न करें तो बड़ों को, आचार्यों को, करना ही पड़ेगा।

आदर्श विद्याधानी के बताये हुए मार्ग पर सारे राष्ट्र को स्थान-स्थान में कुमार और किशोर-शालाएँ खोलनी होंगी, क्योंकि किशोरावस्था तक प्रत्येक भारतीय बालक की शिक्षा होनी ही चाहिये। जिन लोगों की जीविका किशोरों से भी परिश्रम कराने पर लाचार करती है वह भी कैशोर शिक्षा का लाभ उठा सकते हैं। केवल वही युवक आगे बढ़ेंगे, जिन्हें किसी विशेष कलामें निष्णात होना है, जिन्हें किसी विद्या का विशारद अथवा पूर्ण विद्वान् होना है, जिन्हें खोज करना है, जिन्हें अपना जीवन सरस्वती की भक्ति में अर्पण करना है।

पात्र को उपयुक्त बनाना शिक्षक का काम है, इसलिये शिक्षक का आदर्श चरित होना कितना आवश्यक है यह कहना बाहुल्यमात्र है। शिक्षक के लिये सदाचार मूर्ति होना एक ही गुण है, एक ही कसौटी है। और सब कलाओं और विद्याओं का नैपुण्य गौण है, चरित्र मुख्य है। शिक्षा की मुख्य पद्धति अनुकरण है और यह प्रत्येक बालक के स्वभाव में विद्यमान है। जहां गुरु-शिष्य साथ रहते हैं वहां गुरु की सारी चेष्टा, सारी गति, सारे कर्म शिष्य के लिये अनुकरणीय होने चाहियें। गुरु के एक कदाचार से शिष्य का सारा जीवन भ्रष्ट हो सकता है। आचार्य्य वही हो जिसका आचरण अनुकरणीय हो। "आचार प्रभवो धर्मः" "आचारहीनं न पुनन्ति वेदाः" इत्यादि स्मृति वाक्य आचार्य्य के इस विशेष गुण की कितनी महत्ता बताते हैं, इस पर विस्तार करने का यहां अवसर नहीं है। इतना ही कहना पर्य्याप्त होगा कि चरित्रवान् विद्वान् वा चरित्रवान् कलावान् ही आदर्श विद्याधानी में शिक्षक-पद भोग सकता है। आचारहीन शिक्षक के हाथों में शिक्षा के अच्छे से अच्छे उपकरण लाभ के बदले हानि पहुँचाने के भयङ्कर यंत्र हो

सकते हैं। भारत की भावी प्रजा का जीवन जिनके हाथों में सौंपना है, जिनके ऊपर एक भी बालक को अच्छा मनुष्य और अच्छा नागर बनाने का दायित्व है, वह अवश्य ही चुने हुए चरित्रवान् मनुष्य होने चाहिएँ। चरित्रवान् ही धार्मिक और स्वावलम्बी हो सकता है। हिन्दी विद्यापीठ को चाहिये कि धर्म और स्वावलम्बन को अपना बाना बनावे।

शिक्षा के विषय विद्यापीठ में तो चौदहों विद्याएँ और चौसठों महाविद्याएँ होनी चाहिएँ। परन्तु वर्त्तमान अवस्था में ऐसी व्यापक शिक्षा देना संभव नहीं है। अल्पारम्भा क्षेमकराः, अभी थोड़े से ही आरंभ करना पड़ेगा। परन्तु लक्ष्य अवश्य ही अभ्युदय और निःश्रेयस दोनों की सिद्धि हो। शिक्षा ऐसी हो जिससे धर्म्म, अर्थ, काम, मोक्ष चारों पुरुषार्थ सधें। सदाचार से धर्म्म, शिल्प से अर्थ, कलाओं से काम और अध्यात्मविद्या से मोक्ष सधता है, इसलिये चारों प्रकार के विषयों का समावेश होना आवश्यक है। देश, काल और पात्र के अनुसार इन विषयों के विभेद में उचित चुनाव हो सकता है। यहां जान-बूझ कर भाषा और लिपि के प्रश्न को नहीं उठाते। भाषा और लिपि तो साधन हैं, और साधन वही काम में आते हैं जो सहज और सुलभ हों। अस्वाभाविक और दुर्लभ साधनों का प्रयोग तो शिक्षा का द्वार बन्द करने के लिये बहाना मात्र है। यह तो वही बात हुई कि हम तो खिचड़ी पकाना सिखावेंगे, पर पतीली और चूल्हा सोने के होने चाहिएँ। हमारा विद्यापीठ ऐसे कुत्सित मार्ग का अवलम्बन करे, यह तो स्वप्न में भी संभव नहीं। हां, चौसठों कलाओं में अनेक भाषाओं और लिपियों का ज्ञान भी सम्मिलित है। विद्यापीठ में, कला-विभाग में, इसका अवश्य ही समावेश होना चाहिये।

मोटी रीति से हम विषयों का यों विभाग करेंगे—

धर्म्मशास्त्र—जिसमें नीति और आचार का पूर्ण समावेश होगा। वर्णधर्म्म, आश्रमधर्म्म, समाजनीति, राजनीति,

शासन नीति, वैयक्तिक नीति, इतिहास और पुराण सब कुछ इसी के अन्तर्गत होंगे।

अर्थशास्त्र—जिसमें भूगोल, ज्योतिष, जीवविज्ञान, रसायन, भौतिक शास्त्र, वास्तुविद्या, धातुविद्या, आयुर्वेद, धनुर्वेद, व्यवहार शास्त्र, शिल्प सभी अर्थवाले विषय समाविष्ट होंगे।

कामशास्त्र—जिसमें चौसठों कलाएं समाविष्ट होंगी जिनकी सूची यहां देना बाहुल्यमात्र है। काव्य और व्याकरण भी इसी के अंग होंगे।

मोक्षशास्त्र—दर्शन, उपनिषद्, और वेदादि परमार्थ ग्रंथ।

इन विभागों के विशेषज्ञ अपनी-अपनी समिति या संघ बनाकर समय-समय पर इसी विद्याधानी के अंग बनकर इन शास्त्रों के परिशीलन की विशेष चर्चा और विचार करेंगे, और आवश्यकता होने पर इस विषय पर भी विचार करेंगे कि इस विद्याधानी में प्रत्येक विभाग का अध्ययन किन-किन विधियों से समुन्नत हो और किन-किन स्नातकों को किन विषयों में निष्णात समझा जाय और इस बात का प्रमाण दिया जाय। यह संघ विद्याधानी के शासन-संघ से भिन्न होंगे और शासन-संघ को केवल शासन का ही अधिकार होगा।

किशोर-शालाओं के अन्त तक तो शिक्षा में उपर्युक्त चारों विभागों का थोड़ा-थोड़ा समावेश होगा। धर्म्म विभाग से इतिहास, अर्थ विभाग से भूगोल, वास्तु शिक्षा, आरम्भिक विज्ञान और स्वास्थ्य विद्या, काम विभाग से व्यायाम, गणित, लिपि, चित्रणकला, बुनना कातना, काव्य, व्याकरण अलंकार, अन्य भाषाएं आदि और मोक्ष विभाग से काव्य के अन्तर्गत विषय होंगे। हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की प्रथमा परीक्षा कैशोर शिक्षा की अन्तिम जांच समझी जानी चाहिये। जिस छात्र ने प्रथमा परीक्षा में सफलता प्राप्त कर ली वह युवा विभाग में किसी विशेष विषय के परिशीलन के लिये प्रविष्ट

होगा। उसे एक विषय विशेषज्ञता के लिये लेना पड़ेगा। उस एक विषय के आनुषंगिक जितने आवश्यक विषय होंगे उनका अध्ययन करना वहां तक अनिवार्य्य होगा जहां तक विशेषज्ञता के लिये उनका परिशीलन आवश्यक है। जैसे आयुर्वेद विषय की विशेषज्ञता के लिये रसायन, कुछ भौतिक, शरीर विज्ञान, कुछ सांख्य, कुछ न्याय, कुछ वैशेषिक, कुछ डाक्टरी, कुछ हकीमी जानना आवश्यक है। विशारद होने के लियें आवश्यक इतिहास और साहित्य के अनुशीलन में आयुर्वेद वाले को समय न खोना होगा। अपने मनोविनोद के लिये बाहरी विषयों की तरह वह चाहे जो पढ़े। यदि वह पद्य-रचना करे कवि-सभाओं में शरीक हो, चित्रकारी वा संगीत सीखे तो उसे मना न किया जायगा। स्नातक होने के लिये वा अपने विषय का पूर्ण विशेषज्ञ होने के लिये उसे तीन से लेकर सात वर्ष तक लगाने पड़ेंगे। स्नातक को केवल एक उपाधि दी जाय। यही अकेली उपाधि विद्याधानी की उपाधि हो। यह उपाधि "रत्न" से भिन्न हो और उससे ऊंची समझी जाय। विशारद और रत्न की उपाधियां सम्मेलन के परीक्षण-विभाग की उपाधियां रहें। शिक्षण-विभाग की उपाधियां अधिक परिश्रम और त्याग से प्राप्त होंगी। उनका मूल्य भिन्न होगा और कोरी परीक्षा की उपाधियों से अधिक समझा जायगा।

युवा-विभाग के लिये जब मुख्य विषय एक ही होगा, तब स्पष्ट है कि पाठ्य ग्रंथों का क्रम सम्मेलन की परीक्षाओं से भिन्न होगा। मध्यमा के पाठ्य ग्रंथों से आरंभ करके उत्तमा के तत्तद्विषयक समस्त ग्रन्थ और परिमाण विवक्षित और समाविष्ट होंगे। आनुषंगिक विषय तो उतनी ही मात्रा में सीखने आवश्यक होंगे जितने का काम पड़ेगा। उनका परिमाण कहीं-कहीं मध्यमा से कम और कहीं बराबर होगा। सभी विषयों की सूची बनाना तो इस समय आवश्यक न होगा, परन्तु जिन विषयों का तुरन्त आरम्भ हो जाना बहुत कठिन नहीं है उनका उल्लेख यहां कर देना आवश्यक है। हम नीचे मुख्य विषय और उनके आनुषंगिक विषय देते हैं—

| मुख्य | आनुषंगिक |
|---|---|
| १—आयुर्वेद | १—शरीर विज्ञान |
| | २—रसायन (आधुनिक) |
| | ३—भौतिक शास्त्र (कुछ) |
| | ४—जीव और वनस्पति विज्ञान (कुछ) |
| | ५—सांख्य, न्याय, योग, वैशेषिक (कुछ-कुछ) |
| | ६—डाक्टरी (कुछ) |
| | ७—हकीमी (कुछ) |
| | ८—स्वभाव-चिकित्सा |
| | ९—होमियोपैथी |
| २—कृषि विद्या | १—रसायन (कुछ) |
| | २—वनस्पति विज्ञान (कुछ) |
| | ३—कृमिशास्त्र |
| | ४—मृद्विश्लेषण |
| | ५—जीव विज्ञान (कुछ) |
| | ६—बही-खाता |
| | ७—अरायज नवीसी |
| ३—बिनाई | १—रसायन (कुछ) |
| | २—रँगाई |
| | ३—छपाई |
| | ४—कपास की खेती |
| | ५—ऊन की विधियां |
| | ६—रेशम की विधियां |
| | ७—छाल आदि अन्य विधियां |
| ४—हिन्दी-साहित्य या वाङ्मय | १—भाषा विज्ञान |
| | २—उर्दू साहित्य |
| | ३—संस्कृत (कुछ) |
| | ४—फ़ारसी (कुछ) |
| | ५—प्राकृत (कुछ) |
| | ६—पाली (कुछ) |

५—इतिहास
- १—प्राकृत और पाली भाषाएं
- २—संस्कृत भाषा
- ३—अँग्रेज़ी भाषा
- ४—भिन्न-भिन्न भारतीय प्राचीन लिपियां
- ५—समाज शास्त्र
- ६—सम्पत्ति शास्त्र
- ७—राजनीति और शासन विज्ञान

६-शिक्षक-शिक्षण — आनुषंगिक विषय; विशेष विषय के अनुसार।

यह छः विषय सम्प्रति विद्यापीठ के प्रौढ़ विभाग में आरंभ किये जा सकते हैं। इन विषयों की पूर्ण शिक्षा के लिये संग्रहालय बहुत ही उपयुक्त साधन होगा। इस दृष्टि से संग्रहालय भी विद्यापीठ-भवन के पास ही होना चाहिये। जिस स्थान पर विद्यापीठ-मंदिरों का प्रबन्ध हुआ है उसी स्थान पर संग्रहालय रखना इसलिये भी आवश्यक है कि आये दिन नगर के उपद्रवों से दूर और सुरक्षित रहेगा। संग्रहालय तमाशबीनों के लिये नहीं है। अध्येताही इससे लाभ उठा सकते हैं। विद्यापीठ और संग्रहालय में अंगी और अंग का सम्बन्ध है, यह अलग-अलग रह नहीं सकते।

विद्यापीठ का विद्यार्थि जीवन अन्तेवासियों का जीवन होगा। यह एक प्रकार का गुरुकुल होगा। यहां के विद्यार्थी को ब्रह्मचारी के जीवन के समस्त नियमों का पालन करना पड़ेगा। परन्तु अन्य वर्त्तमान गुरुकुलों से इसमें यह विशेषता होगी कि इसका भाव पूर्ण राष्ट्रिय होगा। इसकी विधि आचूड़ान्त स्वावलम्बन की होगी। संयम-नियमों को कागज पर नहीं, जीवन में स्थान मिलेगा। यहां का स्नातक "पूर्ण भारतीय मनुष्य" होगा और भारत का आदर्श नागरिक होगा। इसी ध्येय को लेकर विद्यापीठ अपना कार्य्य-संचालन करेगा।

## (२) आरंभिक विधि

हमने अभी तक आदर्श का दिग्दर्शन किया है। उसका विस्तार संभव नहीं है। यदि प्रयत्न भी किया जाय तो कोरी कल्पना होगी। अपना मार्ग और ध्येय समझने के लिये जितना दिग्दर्शन आवश्यक है उतना ही किया गया। इस काम को आरंभ करने के लिये क्या-क्या और किस प्रकार करना उचित है, कि हम निर्दिष्ट मार्ग पर चल सकें और निश्चित उद्देश्य तक पहुंच सकें, इस विषय पर ही विस्तार से लिखना इस लेख का लक्ष्य है। यही हिन्दी विद्यापीठ के लिये शिक्षण-पद्धति होगी। मन्दिर बनानेवाला पहले उसके नक्शे का एक खाका खींचता है और निश्चय कर लेता है कि आकार-प्रकार क्या होगा, तब कहीं उसे नींव की चिन्ता होती है। ऊपर इमारत कितने ऊंचे जायगी, कितना फैलाव होगा, क्या आकार होगा, इन्हीं प्रश्नों पर विचार करके नींव रखने का समारंभ होता है। हिन्दी विद्यापीठ की किशोरशाला से उत्तीर्ण छात्र ही जब युवा विद्यालय में पहुंचेगा और अन्त में पूर्ण विद्वान् होकर निकलेगा, तभी वह इस लेख के आरंभ में निर्दिष्ट आदर्श के अनुकूल सुशिक्षित मनुष्य समझा जा सकेगा। इसलिये आरंभिक शिक्षा से लेकर किशोरशाला की समस्त शिक्षण-पद्धति पर पूर्ण विचार करके ही पाठ्य विषयों और साधनों का निर्देश हो सकता है। सुभीते के लिये कुमारशाला और किशोरशाला को हम "बाल विभाग" में परिगणित करेंगे। विद्यालय विभाग "युवा विभाग" होगा। "कुमार" शब्द पारिभाषिक है। उसका अर्थ है पांच वर्ष से कम का बालक। "किशोर" शब्द का अर्थ है पन्द्रह वर्ष से कम का बालक। हम सुभीते के लिये नव वर्ष तक की अवस्था को "कुमार" और सोलह वर्ष तक की अवस्था को "किशोर" कहेंगे। नव वर्ष तक की शिक्षा भरसक केवल खेलों के द्वारा दी जायगी। प्रस्तुत शिक्षण-पद्धति केवल हिन्दी विद्यापीठ के लिये है, परन्तु सारे देश के लिये बाल विभाग की शिक्षा विद्यापीठ में नमूना होगी। देश में इसका अनुकरण होना अनिवार्य है। इसलिये हम पद्धति की

व्यापकता पर ध्यान देते हुए वर्त्तमान शिक्षा-पद्धति की आलोचना के साथ ही साथ उपयुक्त रीति का निर्देश करेंगे।

यदि पूर्व निर्दिष्ट आदश और पर निर्दिष्ट शिक्षण-विधि स्वीकृत हो जाय तो विद्यापीठ का एक अत्यन्त महत्व का आरम्भिक काम यह होगा कि सम्मेलन की प्रथमा और मध्यमा परीक्षाओं में उत्तीर्ण युवकों को शिक्षण-शिक्षा देने का प्रबन्ध करे। उन्हें वह सभी विषय शिक्षण की दृष्टि से सिखाने होंगे जिनका समावेश आवश्यक किंवा वैकल्पिक रूपसे प्रस्तुत शिक्षण-पद्धति में हुआ है। दो वर्ष तक आश्रम में रहने से थोड़ी-बहुत सदाचार की शिक्षा भी मिल जायगी। यही लोग प्रस्तुत पद्धति की शिक्षा देने के लिये उपयुक्त होंगे। नारमल या ट्रेनिंग पास शिक्षक सर्वथा अनुपयुक्त पाये गये हैं और प्रस्तुत पद्धति की वास्तविक स्थिति की उन्हें कल्पना भी नहीं है। इसीलिये तुरन्त ही एक आदर्श "अध्यापक विद्यालय" स्थापित करना अनिवार्य्य होगा। इस विद्यालय की पाठ्यावली भी यहां देना बाहुल्य होगा। बाल-विभाग की सारी पाठ्यावली से और विद्यापीठ के उपरिनिर्दिष्ट आदर्श से सहज ही अध्यापक-विद्यालय के कार्य्यक्षेत्र का निर्देश हो जाता है। यह कहने की आवश्यकता नहीं कि राष्ट्रिय शिक्षा के लिये उपयुक्त अध्यापक तय्यार करना ऐसे महत्व का काम है कि इसके आगे और सब काम हलके दीखते हैं। राष्ट्रिय महासभा में राष्ट्रिय शिक्षा के अभी तक सफलता न प्राप्त करने का एक बड़ा कारण राष्ट्रिय शिक्षकों का अभाव है। इस अभाव की पूर्त्ति का श्रेय भी राष्ट्रभाषा-प्रचार की तरह सम्मेलन को लेना चाहिये।

## ( ३ ) शिक्षण-पद्धति

बाल-विभाग की शिक्षण-पद्धति इस सिद्धान्त पर अवलम्बित होगी कि शिष्य की बुद्धि और इन्द्रियों के विकास के साथ ही साथ संसार-यात्रा के साधन भी उसे सुलभ होते जायँ। वह आदि से ही स्वावलम्बन का पाठ सीखे। ज्ञानेन्द्रियों के साथ कर्म्मेन्द्रियों का भी अधिकाधिक दक्ष होता जाना हमारी शिक्षण-पद्धति की कुंजी

होगी। इससे एक पंथ में दो काज सधेंगे। जहां कहीं दिन में बालक मजूरी करेंगे, वहां सायंकाल में उनकी शिक्षा जारी रह सकेगी। जहां कहीं संभव होगा, स्वयं किशोर शाला ही जीविका देगी और छात्र के निर्वाह का प्रबन्ध करेगी। कौमार्य्य की शिक्षा साद्यन्त खेल के द्वारा होगी। पद्धति में इसका निर्देश बारंबार करने के बदले एक बारगी समझ लेना चाहिये कि शिक्षा के सभी विषय इस तरह सिखाये जायँगे कि सभी बाल-विनोद का रूप धारण करेंगे। अक्षरों-अंकों का ज्ञान और लिपि का अभ्यास खल होगा। वस्तु-पाठ भी खिलवाड़ होगा। देश, काल और वस्तु की शिक्षा कौमार्य्य में जितनी दी जाती है उससे अधिक होगी, लिखना-पढ़ना गौण होगा। इस विधि से कम पढ़े-लिखे नौ बरस के बालक की संस्कृति प्रायः हमारी विधि से अधिक विस्तृत होगी। क्रम पर विचार करने से यह बातें स्पष्ट हो जायँगी। अब हम आज कल के प्रचलित विषयों और पद्धतियों पर एक-एक करके विचार करेंगे और बतलायेंगे कि हम प्रत्येक में कैसा सुधार करेंगे।

**भाषा**—सरकारी शिक्षा-विभाग के ग्रन्थ न तो भाषा की शिक्षा का परिमाण ऊंचा करते और न उनसे पढ़नेवाला अपने देश के शील, आचार, धर्म्म और विशेषता से परिचित होता है। देशभक्ति के बदले विदेशभक्ति और राष्ट्रियता के बदले अराष्ट्रियता उसमें कूट-कूट कर भर जाती है। नौकरशाही के आदेश से पुस्तकें बनती हैं और तैयार होने पर भी उसी की पसन्द पर रखी जाती हैं। इसी कुप्रथा से सारी शिक्षा दूषित हो रही है।

इस दोष के निराकरण का उपाय सीधा-सा है। देश की स्वाधीन संस्थाओं की चुनी हुई पुस्तकें ही लोग बच्चों को पढ़ावें। नौकरशाही की चुनी हुई पोथियां पढ़ाना बन्द कर दें। मिडिल की जगह अखिल भारतीय हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन की प्रथमा परीक्षा को किशोर पाठशालाओं का अन्तिम ध्येय रखें, तो साहित्य की प्रामाणिक पुस्तकें देश के बच्चों को पढ़ने को मिलेंगी। नौ दरजों की जगह दस हों, सातवें वर्गकी जगह आठवां भी हो तो अनुचित न

होगा। उससे नीचे के वर्गों के लिये राष्ट्रिय शिक्षावली की सातों पोथियों के सिवा कोई और रीडरें अधिक उपयुक्त नहीं जँचतीं। यह पोथियां वस्तुतः प्रथमा परीक्षा की सीढ़ियां हैं। ऐसे क्रम से संकलित हुई हैं कि इनसे प्रथमा के लिये बुद्धि और विवेक का अच्छा विकास हो सकता है। पढ़नेवाला अपने देश के शील, धर्म, आचार और विशेषताओं से पूर्ण परिचित हो जाता है। उनका मन विशाल और बुद्धि धर्म और सत्य की ओर प्रवृत्त हो जाती है।

प्रथमा परीक्षा की तय्यारी करानेवाला शिक्षक योग्यता में विशारद से कम तो होना ही न चाहिये। अध्यापक-विद्यालय का प्रमाण-पत्र पाये हुए विशारद ही इस काम पर नियुक्त होने चाहिएँ। मिडिल और नारमल वाले तो तीसरी, चौथी पोथियां ही अच्छी तरह नहीं समझ सकते।

शुद्ध व्याकरण, सही कायदे, सही मुहाविरे पर अब तक जो कुछ ध्यान शिक्षकों का रहा करता है उसका आदि-अन्त नियत की हुई पुस्तकें ही हैं। लड़कों की बातचीत सवाल-जवाब में शिक्षक को शुद्ध करने का निरन्तर ध्यान रहे और शुद्ध प्रयोग की ओर बालकों को शिक्षक उत्साहित करता रहे। भाषा और साहित्य पढ़ानेवाले का कर्तव्य "बोल" और "चाल" दोनों का परिष्कार है। अभिवादन, अवसरानुसार उठना-बैठना, चलना-फिरना, सभी क्रियाओं में औचित्य के विचार और शिक्षा की आवश्यकता है। निदान, भाषा का शिक्षक विनय का भी शिक्षक होता है। विनय की शिक्षा वर्त्तमान पद्धति में नहीं दी जाती। परीक्षाओं में विनय के लिये कोई स्थान नहीं है। बिना इसके "विद्या ददाति विनयम्" चरितार्थ नहीं हो सकता। इसलिये शिक्षकों को भाषा के साथ-साथ विनय पर ध्यान रखना अनिवार्य्य होगा। निदान, व्याकरण और मुहाविरे "बोल" के शोधक और विनय "चाल" का शोधक होगा। पत्रों और निबन्धों से पहले का और सभाओं, वक्तृताओं एवं नित्य के व्यवहारों से दूसरे का विशेष अभ्यास कराया जा सकता है।

(शेष आगे)

रामदास गौड़

## स्थायी समिति का नवां अधिवेशन

स्थायीसमिति का नवाँ अधिवेशन मिती का० कृ० ३०—८१ मंगलवार, तदनुसार ता० २८ । १० । २४ को मध्याह्नोत्तर ३ बजे से निम्नलिखित सज्जनों की उपस्थिति में हुआ—

उपस्थिति —

१—श्री पुरुषोत्तमदासजी टंडन
२—श्री प्रो० बृजराजजी
३—श्री वियोगी हरिजी
४—श्री बा० केदारनाथजी गुप्त
५—श्री चतुर्वेदी पं० द्वारकाप्रसादजी शर्मा
६—श्री पं० लक्ष्मीनारायणजी नागर
७—श्री अध्यापक पं० रामरत्नजी
८—श्री पं० जगन्नाथप्रसादजी शुक्ल
९—श्री पं० रामजीलाल शर्मा

इस अधिवेशन के लिए निम्नलिखित सज्जनों ने पत्र द्वारा सम्मतियाँ भेजीं—

१—श्री पं० जगन्नाथप्रसादजी चतुर्वेदी
२—श्री पं० सत्यदेवजी विद्यालङ्कार
३—श्री बा० लालचन्दजी सेठी
४—श्री बा० शिवपूजन सहायजी
५—श्री पं० राजमणिजी त्रिपाठी

६—श्री पुरुषोत्तमदासजी वैष्णव
७—श्री पं० बैजनाथजी चतुर्वेदी
८—श्री पं० चेतरामजी शर्मा
९—श्री रामधारी प्रसादजी
१०—श्री पं० रामनारायणजी मिश्र
११—श्री बा० शिवप्रसादजी गुप्त
१२—श्री पं० नन्दकुमार देवजी शर्मा

(१) सर्वसम्मति से श्री प्रो० ब्रजराजजी ने सभापति का आसन सुशोभित किया।

(२) गत दो अधिवेशनों का कार्यविवरण पढ़ा गया और सर्वसम्मति से स्वीकृत हुआ।

(३) माघ कृ० १ सं० ८० से श्रावण शुक्ल १५ सं० ८१ तक का जाँचा हुआ आय-व्यय का चिट्ठा पढ़ा गया। निश्चय हुआ कि आयव्यय का चिट्ठा स्वीकृत किया जाय और आयव्यय-परीक्षक के नोटों के अनुसार कार्य किया जाय।

(४) यह भी निश्चय हुआ कि जो व्यय बजट से अधिक हुआ है वह स्वीकृत किया जाय और यह ख़र्च सम्मेलन-खाते से दिया जाय।

(५) निश्चय हुआ कि प्रो० गोपालस्वरूपजी भार्गव के हिसाब में जो २०) खोये हुए लिखे हैं, वे स्वीकृत किये जायँ।

(६) ४५।) जो लाला महावीर प्रसादजी के नाम कई वर्ष से पड़े हुए हैं वे बट्टे खाते डाले जायँ।

(इतना कार्य हो चुकने के बाद श्री पुरुषोत्तमदासजी टंडन और पं० जगन्नाथ प्रसादजी शुक्ल अधिवेशन में सम्मिलित हुए।)

(७) सं० ८१-८२ के आय-व्यय का अनुमान-पत्र उपस्थित किया गया और आवश्यक संशोधन करके सर्वसम्मति से स्वीकृत किया गया।

( ८ ) सं० ८१-८२ के बजट में विद्यापीठ के सम्बन्ध में जो आय-व्यय दिखाया गया है वह चालू ख़र्चे के आधार पर है; किन्तु नई योजना के अनुसार कार्य आरम्भ होने पर स्थायीसमिति नया बजट स्वीकार कर सकेगी।

( ९ ) प्रधानमन्त्री ने सम्मेलन का वार्षिक कार्य-विवरण पढ़कर सुनाया। आवश्यक-संशोधन के बाद कार्य-विवरण स्वीकृत किया गया।

( १० ) श्री पं० जगन्नाथ प्रसादजी चतुर्वेदी का हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के सभापतियों को "साहित्य-सुधानिधि" की उपाधि देने का प्रस्ताव उपस्थित हुआ और उसके सम्बन्ध में पत्र द्वारा आयी हुई सम्मतियाँ पढ़कर सुनायी गयीं। अन्त में, बहुमत से प्रस्ताव अस्वीकृत हुआ।

( ११ ) प्रधानमन्त्री ने प्रस्ताव किया कि परीक्षा-मन्त्रीजी का आगरे से प्रयाग आने-जाने में चैत्र से कार्त्तिक तक, ८ मास में, जो १००) व्यय हुआ, वह दिया जाय। सर्वसम्मति से प्रस्ताव स्वीकृत हुआ।

सभापति महोदय को धन्यवाद देकर सभा विसर्जित हुई।

रामजीलाल शर्मा

प्रधान मन्त्री

---

## पन्द्रहवीं स्थायी समिति का पहला अधिवेशन

मिती मार्गशीर्ष शु० १२-७१ वि०, तदनुसार ता० ७।१२।२४ ई० रविवार को २ बजे दिन से सम्मेलन-कार्यालय में स्थायी समिति का पहला अधिवेशन निम्नलिखित सदस्यों की उपस्थिति में हुआ—

१—श्री बा० पुरुषोत्तमदास जी टंडन, प्रयाग

२—श्री बा० रामचन्द्र जी वर्मा, काशी

३—श्री पं० भागीरथप्रसादजी दीक्षित, काशी

४—श्री पं० ऋषीश्वरनाथ जी रैना, काशी

५—श्री बा० साँवलिया बिहारीलाल जी वर्मा बी. ए. वकील, छपरा
६—श्री बा० गंगाप्रसाद जी उपाध्याय एम. ए, प्रयाग
७—श्री बा० केदारनाथजी गुप्त, प्रयाग
८—श्री प्रो० ब्रजराजजी एम. ए. बी. एस. सी. एल. एल. बी., प्रयाग
९—श्री पं० गिरिजादत्तजी शुक्ल बी. ए., प्रयाग
१०—श्री वियोगी हरि जी, प्रयाग
११—श्री.सरदार नर्मदाप्रसादसिंह जी, प्रयाग
१२—श्री बा० शालिग्रामजी वर्मा एम. ए., प्रयाग
१३—श्री पं० जगन्नाथ प्रसाद जी शुक्ल, प्रयाग
१४—श्री अध्यापक पं० रामरत्न जी, प्रयाग
१५—श्री पं० लक्ष्मीधर जी बाजपेयी, प्रयाग
१६—श्री चतुर्वेदी पं० द्वारकाप्रसादजी शर्मा, प्रयाग
१७—श्री पं० रामजी लालजी शर्मा, प्रयाग

नियमानुसार श्री पुरुषोत्तमदासजी टंडन ने सभापति का आसन ग्रहण किया।

(१) गत अधिवेशन का कार्य-विवरण पढ़ा गया और सर्वसम्मति से स्वीकृत हुआ।

(२) नियमावली के नियम ६४ के अनुसार परीक्षा-समिति के संगठन का विषय उपस्थित हुआ और निम्नलिखित सज्जन परीक्षा-समिति के सदस्य निर्वाचित हुए—

१—श्री पं० माधवरावजी सप्रे, तात्यापारा (रायपुर) सी. पी., सभापति
२—श्री वेदतीर्थ पं० नरदेवजी शास्त्री, देहरादून (उपसभापति)
३—श्री बा० पुरुषोत्तमदास जी टंडन, प्रयाग (उपसभापति)
४—श्री पं० रामजीलाल जी शर्मा, प्रयाग (प्रधान मन्त्री)
५—श्री चतुर्वेदी पं० द्वारकाप्रसाद जी शर्मा, प्रयाग (प्रबन्धमंत्री)
६—श्री अध्यापक पं० रामरत्न जी, प्रयाग (परीक्षामन्त्री)
७—श्री पं० लक्ष्मीधर जी बाजपेयी, प्रयाग (प्रचार मन्त्री)

८—श्री पं० लक्ष्मीनारायणजी नागर बी० ए०, एल० एल० बी०, (अर्थमंत्री) प्रयाग

९—श्री बा० श्यामसुन्दरदासजी बी० ए०, काशी

१०—श्री बा० साँवलिया विहारीलालजी वर्मा बी० ए० वकील, छपरा

११—श्री पं० जगन्नाथप्रसादजी चतुर्वेदी, कलकत्ता

१२—श्री पं० ठाकुरप्रसादजी शर्मा, काशी

१३—श्री पं० बाबूरामजी बित्थरिया, बाराबंकी

१४—श्री बा० गंगाप्रसादजी एम० ए०, प्रयाग

१५—श्री पं० गिरिजादत्तजी शुक्ल बी० ए०, प्रयाग

१६—श्री पं० जगन्नाथप्रसादजी शुक्ल, प्रयाग

१७—श्री सरदार नर्मदाप्रसाद सिंहजी, प्रयाग

१८—श्री पं० इन्द्र नारायणजी द्विवेदी, प्रयाग

१९—श्री वियोगी हरिजी, प्रयाग

(३) पुस्तक-प्रकाशन-समिति के निर्वाचन का विषय उपस्थित हुआ और निम्नलिखित सदस्य पुस्तक-प्रकाशन-समिति के सभासद चुने गये—

१—श्री बा० पुरुषोत्तमदासजी टंडन, प्रयाग

२—श्री बा० रामचन्द्रजी वर्मा, काशी

३—श्री प्रो० ब्रजराजजी एम० ए०, बी० एस० सी०, एल० एल० बी०, प्रयाग

४—श्री बा० गंगाप्रसादजी एम० ए०, प्रयाग

५—श्री वियोगी हरिजी, प्रयाग

६—श्री पं० लक्ष्मीधरजी बाजपेयी, प्रयाग

७—श्री चतुर्वेदी पं० द्वारकाप्रसादजी शर्मा, प्रयाग

८—श्री अध्यापक पं० रामरत्नजी, प्रयाग

९—श्री पं० रामजीलालजी शर्मा, प्रयाग (संयोजक)

(४) निम्नलिखित सज्जन प्रचार-समिति के सदस्य निर्वाचित हुए—

५

१—श्री बा० पुरुषोत्तमदासजी टंडन, प्रयाग
२—श्री बा० रामधारीप्रसादजी, मुजफ्फरपुर
३—श्री के० माधवम, मदरास
४—श्री पं० जयचन्द्रजी विद्यालङ्कार, लाहोर
५—श्री पं० भागीरथप्रसादजी दीक्षित, काशी
६—श्री पं० इन्द्रनारायणजी द्विवेदी, प्रयाग
७—श्री प्रो० ब्रजराजजी एम० ए०, बी० एस० सी०, एल. एल० बी०, प्रयाग
८—श्री पं० गिरिजादत्तजी शुक्ल बी० ए०, प्रयाग
९—श्री चतुर्वेदी पं० द्वारकाप्रसादजी शर्मा, प्रयाग
१०—श्री पं० लक्ष्मीधरजी वाजपेयी, प्रयाग ( संयोजक )
११—श्री पं० रामजीलालजी शर्मा, प्रयाग

( ५ ) निम्नलिखित सज्जन मङ्गलाप्रसाद-पारितोषिक-समिति के सदस्य चुने गये—

१—श्री बा० गोकुलचन्दजी रईस, कलकत्ता
२—श्री बा० पुरुषोत्तमदासजी टंडन, प्रयाग
३—श्री बा० श्यामसुन्दरदासजी बी० ए०, काशी
४—श्री बा० गंगाप्रसादजी एम० ए०, प्रयाग
५—श्री पं० रामजीलालजी शर्मा, प्रयाग ( संयोजक )

( ६ ) निम्नलिखित सज्जन संग्रहालय-समिति के सदस्य चुने गये—

१—श्री बा० शिवप्रसादजी गुप्त, काशी
२—श्री पं० राधाचरणजी गोस्वामी, वृन्दावन
३—श्री बा० गोवर्द्धनदासजी, कावरा, बोगरा, बंगाल
४—श्री चतुर्वेदी पं० द्वारकाप्रसादजी शर्मा, प्रयाग
५—श्री वियोगी हरिजी, प्रयाग ( संयोजक )

( ७ ) हिन्दी-विद्यापीठ का प्रबन्ध-सम्बन्धी विषय उपस्थित हुआ। प्रो० ब्रजराजजी ने प्रस्ताव किया कि विद्यापीठ के प्रबन्ध के

लिए एक समिति बनाई जाय। यही समिति हिन्दी-विद्यापीठ की आयोजना, नियमावली और पाठ्य-प्रणाली बनाकर स्थायी समिति में विचारार्थ प्रस्तुत करेगी।

निम्नलिखित सज्जन हिन्दी-विद्यापीठ-समिति के सदस्य निर्वाचित हुए—

१—श्री बा० पुरुषोत्तमदासजी टंडन, प्रयाग (संयोजक)
२—श्री प्रो० ब्रजराजजी एम० ए०, बी० एस० सी०, एल० एल० बी०, प्रयाग
३—श्री बा० गंगाप्रसादजी एम० ए०, प्रयाग
४—श्री अध्यापक पं० रामरत्नजी, प्रयाग
५—श्री पं० रामजीलालजी शर्मा, प्रयाग

(८) काशी और आगरा के विद्यालयों के अधिकारियों के पत्र सहायता मांगने के सम्बन्ध में उपस्थित हुए। सर्वसम्मति से निश्चित हुआ कि उक्त दोनों विद्यालयों को दस-दस रुपये मासिक की सहायता एक वर्ष और दी जाय।

(९) कलकत्ते के ग्यारहवें सम्मेलन का हिसाब अभी तक न मिलने के सम्बन्ध में अर्थ मन्त्रीजी का लिखा वह नोट पढ़ा गया, जिसमें लिखा था कि बार बार लिखने पर भी अभी तक कलकत्ते से ग्यारहवें सम्मेलन का हिसाब नहीं पास हुआ और न रिपोर्ट ही छपी। इस पर प्रधानमन्त्रीजी ने कलकत्ते में श्रीयुक्त पुरुषोत्तम राय जी के मिलने और हिसाब-किताब के सम्बन्ध में उनके साथ जो वार्त्तालाप हुआ था, उसकी चर्चा की। प्रबन्ध मन्त्रीजी ने कहा कि इस विषय में बहुत बिलम्ब हो गया है। कलकत्ते की स्वागत-समिति से हिसाब पास करने के लिए अब शीघ्र ही क़ानूनी कार्रवाई करनी चाहिये। इसपर देरतक चर्चा होने के पश्चात् सर्व सम्मति से यह निश्चय हुआ कि क़ानूनी सलाह लेने के पहले श्री पुरुषोत्तमरायज़ी से पत्र-व्यवहार करके कम से कम निबन्ध और कार्यविवरण तुरन्त मँगवा लिया जाय और उनको प्रकाशित करने का प्रबन्ध किया जाय।

(२०) नियमानुसार श्री सेठ बेनीप्रसादजी डालमियाँ स्थायी सदस्य और श्रीइन्द्रचन्दजी साधारण सदस्य निर्वाचित किये गये।

(२१) श्री सरदार नर्मदाप्रसादसिंहजी के प्रस्ताव करने पर निश्चय हुआ कि स्थायी समिति के अन्तर्गत जितनी उपसमितियाँ हैं, वे अपने कार्य का संक्षिप्त त्रैमासिक विवरण स्थायी समिति में उपस्थित किया करें।

सभापतिजी को धन्यवाद देकर सभा विसर्जित की गयी।

रामजीलाल शर्मा, प्रधान मन्त्री

## हि० सा० सं० प्रयाग, सं० १९८१ वि० का प्रथमा का परीक्षा-फल

### प्रथम श्रेणी

| क्रम-संख्या | परीक्षार्थी का नाम | पिता का नाम | केन्द्र |
|---|---|---|---|
| २९६ सर्वप्रथम | श्री सोमनाथ चौबे | श्री रामसुभग चौबे | प्रयाग |
| २९७ द्वितीय | ,, सोमवर्द्धन त्रिपाठी | ,, शिवप्रसाद त्रिपाठी | ,, |
| ५२५ तृतीय | ,, शिवनारायणलाल | ,, वैद्यनाथ | रायबरेली |
| ५ | ,, जोतीप्रसाद शर्मा | ,, गुलाबसिंह शर्मा | अलीगढ़ |
| ६ | ,, बनारसीदास | ,, बा० जयनारायण | ,, |
| ७ | ,, मदनमोहन शर्मा | ,, सुन्दरलाल शर्मा | ,, |
| २० | ,, बलवन्तसिंह | ,, जवाहिरसिंह | आगरा |
| ३७ | ,, मुलतानसिंह भदौरिया | ,, गोरेसिंह भदौरिया | इटावा |
| ६६ | ,, रामचन्द्र | ,, मोरेश्वर | उज्जैन |
| १०० | ,, रामचरण | ,, रामदयाल | कन्नौज |
| १०७ | ,, हृदयनारायण पाण्डेय | ,, चन्द्रमौलि पाण्डेय | कानपुर सिटी |
| १२२ | ,, रमापति शुक्ल | ,, बलदेव शुक्ल | काशी |
| १३३ | ,, रतनसिंह ठाकुर | ,, भथिया ठाकुर | काँकेर |
| १३७ | ,, अनन्तलाल चौबे | ,, चिन्तामणि चौबे | ,, |
| १४४ | ,, गिरिधारीलाल | ,, ओंकारलाल | कोटा |

| क्रम-संख्या | परीक्षार्थी का नाम | पिता का नाम | केन्द्र |
|---|---|---|---|
| १४७ | श्री कल्याण शर्मा | श्री जगन्नाथ शर्मा | कोटा |
| १६१ | ,, प्यारेलाल | ,, बांधराज शर्मा | खुर्जा |
| १६९ | ,, ताराचन्द्र | ,, ला० कन्हैयालाल | ,, |
| १८१ | ,, सोहनलाल गुप्त | ,, ला० उदैराम | ,, |
| २२२ | ,, पूरनसिंह | ,, नरसिंह | जगदलपुर |
| २२३ | ,, श्रीकृष्ण द्विवेदी | ,, प्यारेलाल द्विवेदी | ,, |
| २३६ | ,, मदनलाल शर्मा | ,, शंकरलाल शर्मा | इन्दौर |
| २४३ | ,, जवाहिरलाल जैन | ,, जीवनलाल जैन | जयपुर |
| २७८ | ,, शिवनाथसिंह वर्मा | ,, भगवन्तसिंह वर्मा | देहरादून |
| २८० | ,, राजेन्द्रसिंह राणा | ,, शेरसिंह राणा | ,, |
| २८१ | ,, अमरसिंह राणा | ,, ,, | ,, |
| २८४ | ,, खिलानन्द डोभाल | ,, हरीशरण डोभाल | टिहरी |
| २८५ | ,, देवकीनन्दन | ,, पं० प्रयागदत्त | देहरादून |
| २८७ | ,, नरोत्तम | ,, पं० दुर्गाशंकर | नारायणगढ़ |
| २९२ | ,, राधे त्रिपाठी | ,, रामसेवक त्रिपाठी | प्रयाग |
| २९५ | ,, यमुनाप्रसाद अवस्थी | ,, मुक्ताप्रसाद अवस्थी | ,, |
| २९८ | ,, राजकिशोरसिंह | ,, परमेश्वरीसिंह | ,, |
| ३०६ | ,, रामसुमेरसिंह | ,, वेनीमाधवसिंह | फैज़ाबाद |

| क्रम-संख्या | परीक्षार्थी का नाम | पिता का नाम | केन्द्र |
|---|---|---|---|
| ३०८ | श्री रामसुन्दर पाठक | श्री रामनरेश पाठक | फैज़ाबाद |

| क्रम-संख्या | परीक्षार्थी का नाम | पिता का नाम | केन्द्र |
|---|---|---|---|
| ३०८ | श्री रामसुन्दर पाठक | श्री रामनरेश पाठक | फैज़ाबाद |
| ३१० | „ जोशी जेठालाल | „ डूंगरजी | बड़ौदा |
| ३७० | „ शिवशंकर अवस्थी | „ गणेशप्रसाद अवस्थी | बुरहानपुर |
| ३९३ | „ ऋषिभजन मिश्र | „ चन्द्रमणि मिश्र | बैरिया |
| ४६५ | „ रामकुमारसिंह | „ सनत्कुमारसिंह | रीवाँ |
| ५०८ | „ जवाहरलाल शर्मा | „ रामचन्द्र शर्मा | हाथरस |
| ५११ | „ विष्णुदेव पोद्दार | „ ला० शिवचरण लाल | „ |
| ५१४ | „ त्रिलोचन पन्थ | „ मथुरादत्त पन्थ | „ |
| ५१७ | „ देवकीनन्दन | „ ला० बाँकेलाल गुप्त | „ |
| ५१८ | „ किशोरदत्त शर्मा | „ गंगाधर शर्मा | „ |

## द्वितीय श्रेणी

| क्रम-संख्या | परीक्षार्थी का नाम | पिता का नाम | केन्द्र |
|---|---|---|---|
| २ | श्री कृष्णबिहारीलाल गुप्त | श्री जानकीप्रसाद गुप्त | अलीगढ़ |
| १७ | „ नत्थीलाल शर्मा | „ केशोप्रसाद शर्मा | आगरा |
| ४१ | „ सीताराम जोशी | „ रामनाथ जोशी | इन्दौर |
| ८५ | „ बिजयबहादुरसिंह | „ भगवतसिंह | कलकत्ता |
| १०४ | „ महादेवप्रसाद मालवीय | „ रामचरन मालवीय | कन्नौज |
| १०५ | „ करुणाशंकर भट्टाचार्य | „ रामअधार भट्टाचार्य | „ |
| ११० | „ देवीशंकर द्विवेदी | „ काशीप्रसाद द्विवेदी | कानपुर सिटी |

| क्रम-संख्या | परीक्षार्थी का नाम | पिता का नाम | केन्द्र |
|---|---|---|---|
| १२४ | श्री बासुदेव पाण्डेय | श्री ईश्वरीय पाण्डेय | काशी |
| १२६ | ,, गजानन पोद्दार | ,, रतिराम पोद्दार | काँकेर |
| १४१ | ,, राधाकृष्ण | ,, जवाहिरलाल | कोटा |
| १४३ | ,, इनायतहुसैन | ,, अहमदहुसैन | ,, |
| १६७ | ,, भूदेव गुप्त | ,, ला० धनीराम | खुर्जा |
| १८० | ,, जोरावरसिंह | ,, चौ० नेतरामसिंह | ,, |
| १९९ | ,, कमलेश्वरी झा | ,, हितलाल झा | गोगरी |
| २१७ | ,, रामबड़ाई तिवारी | ,, महावीर तिवारी | छपरा |
| २१९ | ,, वीरकुमार मिश्र | ,, राजाराम मिश्र | जगदलपुर |
| २२१ | ,, गौरहरी पटनायक | ,, वामदेव पटनायक | ,, |
| २२५ | ,, गंगाधर सामन्त | ,, बलभद्र सामन्त | ,, |
| २३२ | ,, जगन्नाथ परिहार | ,, भैरवलाल | जीरापुर |
| २३३ | ,, नान्हूराम गुप्त | ,, पन्नालाल गुप्त | ,, |
| २३५ | ,, राधाकृष्ण शर्मा | ,, रामचन्द्र शर्मा | ,, |
| २५० | ,, मुहम्मद अब्दुलख़ालिक़ | ,, मुहम्मद अब्दुलग़नी | जयपुर |
| २५६ | ,, बदरीदास पुरोहित | ,, बिरदराज पुरोहित | जोधपुर |
| २६० | ,, दाऊलाल मेहता | ,, वैद्य मोगालाल मेहता | झालरापाटन |
| २६५ | ,, भैरवलाल | ,, नाथूजी | ,, |

| २६५ | ,, भैरवलाल | ,, नाथूजी | ,, |
|---|---|---|---|
| [illegible] | परीक्षार्थी का नाम | पिता का नाम | केन्द्र |
| २६७ | श्री गुलाबचन्द | श्री गणेशलाल | डग |
| २७४ | ,, मथुराप्रसाद | ,, आर्यदत्त शर्मा | देहरादून |
| ३०७ | ,, व्रजबहादुरलाल आर्य | ,, राम औतारलाल आर्य | फ़ैज़ाबाद |
| ३३४ | ,, शिवसागर द्विवेदी | ,, सूर्यबली द्विवेदी | बाराबंकी |
| ३३७ | ,, सुन्दरलाल गुप्त | ,, ला० रामलाल गुप्त | ,, |
| ३४० | ,, बलदेवप्रसाद शर्मा | ,, गयादीन शर्मा | ,, |
| ३५८ | ,, अमरसिंह यादव | ,, राव रघुवीरसिंह | बीकानेर |
| ३६१ | ,, गौरीशंकर शर्मा | ,, पेमराज | ,, |
| ३८५ | ,, शिवदयालराम | ,, हज़ारीराम | बैरिया |
| ३८७ | ,, चतुरीराम | ,, बिरतराम | ,, |
| ३८८ | ,, शिवप्रसाद उपाध्याय | ,, चन्द्रमा उपाध्याय | ,, |
| ३८९ | ,, झक्कड़ ओझा | ,, महाबीर ओझा | ,, |
| ४२२ | ,, गुणज्ञ शर्मा | ,, मनसाराम शर्मा | रतनगढ़ |
| ४८९ | ,, रामअनुग्रहप्रसाद | ,, लक्ष्मीप्रसाद | हरदा |
| ४९० | ,, गंगाविष्णु शर्मा | ,, बोंदरूमल शर्मा | ,, |
| ४९१ | ,, शंकरप्रसाद दुबे | ,, रामचरण दुबे | ,, |
| ४९४ | ,, चन्द्रभाल शुक्ल | ,, बंशलाल शुक्ल | ,, |
| ४९७ | ,, झब्बूलाल मिश्र | ,, रामाधीन मिश्र | ,, |

| क्रम-संख्या | परीक्षार्थी का नाम | पिता का नाम | केन्द्र |
|---|---|---|---|
| ५१० | श्री जगन्नाथप्रसाद चतुर्वेदी | श्री द्वारकानाथ चतुर्वेदी | हाथरस |
| ५२२ | „ शेख़ बशीर | „ शेख़ अमीर | होशंगाबाद |
| ५२७ | „ प्रयागदीन द्विवेदी | | लखनऊ |

## तृतीय श्रेणी

| क्रम-संख्या | परीक्षार्थी का नाम | पिता का नाम | केन्द्र |
|---|---|---|---|
| ४२ | श्री श्रीनिवास वैश्य | श्रीनाथूलाल वैश्य | इन्दौर |
| ४७ | श्रीमती फूलाबाई | „ केशरीमल | „ |
| ६४ | „ चन्द्रसिंह झाला | „ गणपतिसिंह ठाकुर | उज्जैन |
| ६७ | „ श्रीकृष्ण जोशी | „ लक्ष्मण जोशी | „ |
| ८१ | श्रीमती जगरानी देवी | „ रघुवरदयाल | उन्नाव |
| १०८ | श्री वासुदेव अग्निहोत्री | „ केशोप्रसाद अग्निहोत्री | कानपुरसिटी |
| ११५ | „ चन्द्रिकाप्रसाद | „ परमेश्वरदयाल | काशी |
| १३८ | „ चन्द्रसिंह | „ दुर्योधनसिंह | कांकेर |
| १४६ | „ विजयसिंह | „ ठाकुर लालसिंह | कोटा |
| २४२ | „ गौरीशंकरशर्मा प्रश्नवर | „ छोगालाल शर्मा | जयपुर |
| २५७ | „ कुशलचन्द्रजोशी | „ शिवचन्द्र जोशी | जोधपुर |
| २६१ | „ नारायणलाल त्रिवेदी | „ बालाबख्श त्रिवेदी | झालरापाटन |
| २६२ | „ श्यामलाल | „ रामगोपाल | „ |
| ३३१ | „ श्रीनाथ पालित | „ महावीरप्रसाद | बाँकीपुर |

अङ्क

| क्रम-संख्या | परीक्षार्थी का नाम | पिता का नाम | केन्द्र |
|---|---|---|---|
| ३३६ | श्री प्रयागदीन श्रीवास्तव्य | श्री महावीरप्रसाद श्रीवास्तव्य | बारावंकी |

| क्रम-संख्या | परीक्षार्थी का नाम | पिता का नाम | केन्द्र |
|---|---|---|---|
| ३३६ | श्री प्रयागदीन श्रीवास्तव्य | श्री महावीरप्रसाद श्रीवास्तव्य | बारावंकी |
| ३३८ | " त्रिवेणीदयाल | " रामस्वरूप दीक्षित | " |
| ३६६ | " मंगल | " त्र्यंबक | बुरहानपुर |
| ३६८ | " ईश्वरप्रसाद | " काशीराम | " |
| ३७४ | " मदनमोहन मेहरा | " गिरिधारीलाल मेहरा | " |
| ३७६ | " टीकारामसिंह | " कल्यानसिंह | बुलन्दशहर |
| ३७९ | " ब्र० व्रजनन्दनप्रसाद शर्मा | " सरयूप्रसादशर्मा | बैजवाड़ा |
| ४२३ | " मोहनलाल गुप्त | " खूबचन्द गुप्त | रतनगढ़ |
| ४२८ | " परमेश्वरदत्त शर्मा गौड़ | " श्रीराम वैद्य | " |
| ४५६ | " भूरेलाल | " जोराराम | रामगढ़ |
| ४५७ | " प्रभुदयाल | " कन्हैयालाल | " |
| ४८५ | श्रीमती प्रज्ञादेवी | " ला० हीरालाल गुप्त | हरद्वार |
| ४८६ | " सुशीलादेवी | " ला० डालचन्द गुप्त | " |
| ४८७ | " सावित्रीदेवी | " ला० जगनलाल गुप्त | " |
| ४६५ | श्री श्रीराम | " शिवप्रसाद | हरदा |
| ५२६ | " वंशीधर पुरोहित | " रामप्रताप पुरोहित | इन्दौर |

**केवल साहित्य में बैठे और उत्तीर्ण हुए**

| | | | |
|---|---|---|---|
| १८ | श्रीनवाबसिंह | " ठाकुर भोजराजसिंह | आगरा |

| क्रम-संख्या | परीक्षार्थी का नाम | पिता का नाम | केन्द्र |
|---|---|---|---|
| २१ | श्री बाबूसिंह | श्री ठा० रेवतीसिंह | आगरा |
| ३९ | ,, हरीराम | ,, भूदत्तप्रसाद | ,, |
| ८९ | ,, शुकदेवमिश्र | ,, राधाकृष्ण मिश्र | कलकत्ता |
| ९० | ,, शिवशेखर द्विवेदी | ,, रामेश्वरप्रसाद द्विवेदी | ,, |
| ९१ | ,, कल्यानप्रसाद गुप्त | ,, किशनलाल गुप्त | करौली |
| ९२ | ,, किशनलाल | ,, टेकचन्द | ,, |
| ९३ | ,, किस्तूरचन्द | ,, पूरणमल | ,, |
| ९४ | ,, भौंरूलाल शर्मा | ,, गिरवरलाल शर्मा | ,, |
| ९५ | ,, मोतीलाल शर्मा | ,, गजाधर शर्मा | ,, |
| ९६ | ,, पोथीलाल | ,, मुरलीधर | ,, |
| ९७ | ,, प्यारेलाल शर्मा | ,, मगनराम शर्मा | ,, |
| १११ | ,, केदारधर द्विवेदी | ,, सदाशिवधर द्विवेदी | काशी |
| ११३ | ,, रामप्रसाद दुबे | ,, रामशंकर दुबे | ,, |
| ११४ | ,, पदारथराम | ,, रामधन उर्फ़ धनीराम | ,, |
| ११७ | ,, रामलषनसिंह वर्मा | ,, किशोरसिंह | ,, |
| ११८ | ,, छेदीलाल | ,, नन्हकूराम | ,, |
| ११९ | ,, रमाशंकरसिंह | ,, दलथम्हनसिंह | ,, |
| १२० | ,, सूर्यनारायणसिंह | ,, रामभरोससिंह | ,, |

अङ्क ६

| क्रम-संख्या | परीक्षार्थी का नाम | पिता का माम | केन्द्र |
|---|---|---|---|
| १५६ | श्री मुन्शीलाल गर्ग | श्री ला० वन्शीधर | खुरजा |

| क्रम-संख्या | परीक्षार्थी का नाम | पिता का नाम | केन्द्र |
|---|---|---|---|
| १५६ | श्री मुन्शीलाल गर्ग | श्री ला० वन्शीधर | खुरजा |
| १८६ | ,, सेवाराम | ,, आनन्दस्वरूप | खैर |
| २१४ | ,, रामसनेही | ,, सुखेलाल | चूरू |
| २१६ | ,, भगवतीप्रसादसिंह | ,, चण्डीप्रसादसिंह | छपरा |
| २५८ | ,, देवीचन्द्र जोशी | ,, शिवचन्द्र जोशी | जोधपुर |
| २७७ | ,, जसवन्तसिंह वर्मा | ,, कन्हैयासिंह वर्मा | देहरादून |
| ३०२ | ,, केदारनाथ शर्मा | ,, कल्पनाथ दुबे | प्रयाग |
| ३०६ | ,, रामधनीसिंह वर्मा | ,, चतुरसिंह वर्मा | बम्बई |
| ३२० | ,, राधेश्याम | ,, मनप्यारेलाल | बाँदा |
| ३२१ | ,, रामनाथ | ,, बलदेवप्रसाद | ,, |
| ३२२ | ,, श्यामबिहारी | ,, सुखीलाल | ,, |
| ३२३ | ,, बैजनाथ | ,, रामभरोसा | ,, |
| ३२४ | ,, गणेशप्रसाद | ,, रामकुमार अग्निहोत्री | ,, |
| ३२५ | ,, महेश्वरीप्रसाद | ,, कल्लू प्रसाद | ,, |
| ३५३ | ,, रामकठिनराय | ,, बाबूलालराय | बलिया |
| ३५४ | ,, हरिकृष्ण ओझा | ,, रामप्रसन्न ओझा | ,, |
| ३८० | ,, बुर्रारामशेषय्या | ,, सुब्बरायु | बैजवाडा |
| ३८१ | ,, वद्धभूडि सत्यनारायण | ,, गंगय्या | ,, |

| क्रम-संख्या | परीक्षार्थी का नाम | पिता का नाम | केन्द्र |
|---|---|---|---|
| ३८२ | श्री तुमुलूरिशिवरामय्या | श्री शेषय्या गारू | ,, |
| ३८३ | ,, रामगृही पाठक | ,, देवशरण पाठक | बैरिया |
| ३८४ | ,, शिवपूजन पाठक | ,, देवकीनन्दन पाठक | बैरिया |
| ३९० | ,, ठाकुरदयालु पांडेय | ,, केदारनाथ पांडेय | ,, |
| ३९६ | ,, सूर्यदेव मिश्र | ,, शिवशरण मिश्र | ,, |
| ३९७ | ,, शिवकुमार पाण्डेय | ,, सत्यनारायण पाण्डेय | ,, |
| ४३१ | ,, वाराणसी पाण्डेय | ,, रामचरित्र पाण्डेय | रंगून |
| ४३४ | ,, बलिराज दुबे | ,, त्रिवेणी दुबे | ,, |
| ४६१ | ,, उमादत्त त्रिवेदी | ,, ठाकुरराम त्रिवेदी | रीवाँ |
| ४६६ | ,, सरस्वतीप्रसाद खरे | ,, गणेशप्रसाद खरे | ,, |
| ४७४ | श्री कुमारी विद्यावती | ,, पं० नन्दकिशोर | शाहजहाँपुर |
| ५१६ | श्री ज्वालाप्रसाद | ,, ला० गनेशीलाल | हाथरस |
| ५१९ | ,, श्यामलाल शर्मा, गौड़ | ,, लीलाधर शर्मा गौड़ | ,, |

---

## हि० सा० स० प्रयाग, सं० १९८१ वि० का मुनीमी का परीक्षा-फल

### प्रथम श्रेणी

| ३८ | श्री रामलौट | श्री जानकीप्रसाद | फ़ैज़ाबाद |
|---|---|---|---|

| क्रम-संख्या | विद्यार्थी का नाम | पिता का नाम | केन्द्र |
|---|---|---|---|

### द्वितीय श्रेणी

| ३८ | श्री रामलौट | श्री जानकीप्रसाद | फ़ैज़ाबाद |
|---|---|---|---|

| क्रम-संख्या | विद्यार्थी का नाम | पिता का नाम | केन्द्र |
|---|---|---|---|
| | **द्वितीयश्रेणी** | | |
| १ | श्री नौरतनमल | श्री रामचन्द्र | अजमेर |
| ४ | ,, सोहनलाल | ,, कालीचरण | अजमेर |
| ५ | ,, रामचन्द्र लोकड़ कोविद, विशारद | ,, सेठ नेमीचन्द लोकड़ | आगरा |
| ६ | ,, बाबूलाल गोयल | ,, ला० भानामल अग्रवाल | ,, |
| ७ | ,, सरदारमल जैन | ,, हजारीलाल | ,, |
| १० | ,, गुलाबचन्द | ,, मानकचन्द | उज्जैन |
| ११ | ,, थानसिंह वर्मा | ,, गोशलसिंह | करौली |
| १३ | ,, गणपतिलाल शर्मा | ,, मोतीराम शर्मा | ,, |
| १४ | ,, जगन्नाथसिंह | ,, रामभोगसिंह | काशी |
| १६ | ,, महावीरलाल | ,, सरयूप्रसाद | ,, |
| २० | ,, केदारसिंह | ,, महावीरसिंह | ,, |
| ३३ | ,, रामनारायण | ,, मुरलीधर | दिल्ली |
| ३४ | ,, देवदत्त शर्मा | ,, स्वामी मुकुन्दजीवन | ,, |
| ३५ | ,, हरिवंशलाल | ,, कलियानसिंह | ,, |
| ३६ | ,, वद्रीप्रसाद | ,, जुराखनलाल | बाँदा |
| ४० | ,, मुहम्मद उसमान | ,, मुन्शी मददअली | बाराबंकी |
| ४५ | ,, लखनलाल | ,, कोदई साह | सीतामढ़ी |

## हिं० सा० स० प्रयाग, सं० १६८१ वि० का अरायज़नवीसी का परीक्षा-फल

### द्वितीय श्रेणी

| क्रम-संख्या | परीक्षार्थी का नाम | पिता का नाम | केन्द्र |
|---|---|---|---|
| १ | श्री गेंदालाल | श्री लछमन | आलमपुर |
| ४ | ,, लक्ष्मणलाल | ,, माताबदललाल | काशी |

---

## हिं० सा० स० प्रयाग, सं० १६८१ की मध्यमा-परीक्षा का परीक्षा-फल

### प्रथम श्रेणी

| क्रम-संख्या | परीक्षार्थी का नाम | पिता का नाम | केन्द्र |
|---|---|---|---|
| २८० ( सर्व प्रथम ) | श्री कुमारी विद्याधरी | श्री डॉ० मिलखीराम भाटिया | लाहौर |
| ८८ ( द्वितीय ) | ” सीताराम पाण्डेय | ” धर्मपाल पाण्डेय | कानपुर |
| १२७ ( तृतीय ) | ” रुद्रदत्त मिश्र | ” गोकुलप्रसाद मिश्र | कोटा |

### द्वितीय श्रेणी

| क्रम-संख्या | परीक्षार्थी का नाम | पिता का नाम | केन्द्र |
|---|---|---|---|
| ८ | श्री मंगीलाल जैन 'महेन्द्र' | श्री ला० भगवतीप्रसाद | आगरा |
| १३ | ” नारायणप्रसाद लवानिया | ” पं० नंदकिशोर | ” |
| २० | ” रामछबीले काश्यप | ” ला० झम्मनलाल काश्यप | ” |
| २१ | ” कुं० जसवन्तसिंह भाल | ” डा० तुलसीरामसिंह [illegible] | ” |